शाकाहार: सर्वोत्तम जीवन-पद्धति

डॉ. नेमीचन्द जैन

प्रकाशन: हीरा भैया प्रकाशन
६५, पत्रकार कॉलोनी,
कनाडिया मार्ग,
इन्दौर ४५२००१, मध्यप्रदेश

मुद्रण: नईदुनिया प्रिन्टरी
बाबू लाभचद छजलानी मार्ग,
इन्दौर ४५२००९, मध्यप्रदेश

संपादन : प्रेमचन्द जैन

प्रथम आवृत्ति : अक्टूबर १९९३
द्वितीय आवृत्ति : सितम्बर १९९४
तृतीय आवृत्ति : अक्टूबर १९९६
चतुर्थ आवृत्ति मई १९९७
कुल प्रतियाँ १०,०००

मूल्य : दो रुपये
ISBN 81-85760-20-9
अन्तर्राष्ट्रीय मानक पुस्तक-संख्या

पूर्वकथन

शाकाहार अव एक स्थापित जीवन-शैली है, अत उससे होने वाले फायदो को अलग से सिद्ध करना आवश्यक नही है।

सव जानते हैं कि शाकाहार मानवीय गुणो को विकसित/समृद्ध करने वाला आहार है। उसके उत्पादन मे न तो कोई जीव-हत्या होती है, और न ही कोई क्रूर कर्म। वह, मासाहार जिस तरह खून-की-नीव पर खड़ा है, अवस्थित नही है।

दुनिया के सारे देश अव यह भलीभाँति जानने लगे हैं कि यदि हमे ऑक्सीजन-युक्त/स्वास्थ्यप्रद वायु चाहिये, और चाहिये धरती-की-कोख-जल, तो शाकाहार हर हालत मे अपरिहार्य है।

यह एक दुश्चक्र है कि पहले पशुओ का सवर्द्धन करो अर्थात् उन्हे वनस्पति खिलाओ, और ऑक्सीजन के उर्वर स्रोत बद करो, क़त्लखानो का मलवा – रक्त, मास, मज्जा-बहाने के लिए पेय जल की वर्वादी करो, और फिर बूँद-बूँद के लिए तरसो, नदियो मे गदगी डालो, और फिर उनके निर्मलीकरण के लिए एडी-चोटी एक करो।

तय है कि मासाहार हिसा के बगैर सभव नही है। जिन लोगो ने कत्लखानो की मानसिकता का अध्ययन किया है उनका निष्कर्ष है कि मासाहार मनुष्य को बर्बर, रक्त-पिपासु, और नृशस बनाता है नतीजतन युद्ध, रक्तपात, लडाई-तकरार, कलह-तबाही के अलावा उसका कोई और परिणाम निकल ही नही सकता।

प्रकृति ने स्वय मनुष्य को शाकाहारी अस्मिता प्रदान की है। उसने उसके शरीर-की-रचना भी तदनुरूप की है। शाकाहार और मानवता का परस्पर गहन सबन्ध है। शाकाहार के वारे मे कुछ सकारात्मक तथ्य इस प्रकार हैं–

१ शाकाहार सात्त्विक आहार है, अत वह सहज ही अहिसा, भ्रातृत्व, विश्वास, मैत्री आदि मानवीय गुणो को विकसित करता है।

२ प्रकृति ने मासभक्षी और शाकाहारी जीवधारियो की शरीर-रचना अलग-अलग तरह से की है यथा– मासाहारियो के दाँत नुकीले और पजे/नाखून/तेज होते हैं, उनके जवडे सिर्फ ऊपर-नीचे चलते हैं, वे अपना आहार निगलते हैं, उनकी जीभ खुरदरी होती है, वे जीभ से पानी पीते हैं, उनकी आँतें छोटी होती हैं, उनका जिगर/उनके गुर्दे अपेक्षाकृत वडे होते है, उनकी लार मे हाइड्रोक्लोरिक अम्ल होता है – दूसरी ओर शाकाहारी जीवधारियो के दाँत और नाखून नुकीले नही होते, उनके जवडे सभी दिशाओ मे चलते है, वे अपना आहार चबाते हैं, उनकी जीभ चिकनी/स्निग्ध होती है, वे होठ से पानी पीते हैं, उनकी आँते वडी होती है, उनका जिगर और उनके गुर्दे छोटे होते हैं, उनकी लार मे क्षार (अल्केलाइन) होता है–प्रश्न उठता है कि आखिर यह अन्तर क्यो है?

३ आर्थिक दृष्टि से भी शाकाहार सस्ता और पर्यावरण तथा पारिस्थितिकी के अनुरूप है।

४ शाकाहार मे प्रोटीन जितना चाहिये, उतना है। चिकित्सा-शास्त्र के अनुसार एक किग्रा वजन पर एक ग्राम प्रोटीन चाहिये। अधिक प्रोटीन से एक तो शरीर मे कैल्शियम का भण्डार घट जाता है, दूसरे नाइट्रोजनिक उत्पादो को निकाल फेकने मे गुर्दो को काफी श्रम

करना पडता है। ध्यान रहे, अतिरिक्त प्रोटीन को एकत्रित रखने की क्षमता मानव-शरीर मे नही है। प्रोटीन की प्रचुरता का नारा मात्र व्यापारिक पैतरा है, उसे समझना चाहिये। वस्तुत सतुलित आहार का दुनिया मे कोई सानी नही है। एमीनो अम्ल का समायोजन शाकाहार मे परस्पर पूरकता द्वारा सपन्न होता है। दाल-रोटी इसी समायोजन का प्रतीक है। गेहूँ मे लायसिन नही है, दाल मे मेथोसिन अनुपस्थित है, किन्तु इनकी पूरकता कमी को पूरा कर लेती है।

६ शाकाहार मे विटामिन 'बी' के न होने का आरोप भ्रामक है। शाकाहारियो का शरीर स्वय इसका प्रबन्ध करता है। 'बी' विटामिन से होने वाली बीमारियो का शाकाहारियो को प्राय न होना इसका जीवन्त प्रमाण है।

७ शाकाहार मे 'कार्बोहाइड्रेट्स' का होना आँतो के लिए सुखद निर्विघ्नता है। इससे कब्ज से रक्षा होती है और पेट कई गभीर/असाध्य रोगो से बच जाता है।

८ शाकाहार मे विटामिन 'सी' है, जो मासाहार मे बिल्कुल नही है।

९ कुछ शाकाहारी पदार्थो मे लौहतत्त्व सर्वाधिक है। गुड मे ११ ४ और मेथी मे १६ ९ प्रतिशत है, जबकि मासाहारी पदार्थों मे-से किसी मे भी वह ६ ३ से अधिक नहीं है।

१० विटामिन 'ए' का सर्वाधिक समृद्ध स्रोत पत्तीदार सब्जियाँ हैं। वदगोभी (करमकल्ला), धनिया, और आम मे क्रमश २,००, १०,४६०, और ४,८०० अन्तर्राष्ट्रीय इकाई (आईयू) विटामिन 'ए' होता है। विटामिन 'ए' अधिक मात्रा मे लेने पर विषैला भी सावित हो सकता है।

११ विटामिन 'ई' अकुरित गेहूँ और सोयाबीन मे प्रति १०० ग्राम क्रमश १४ १ मिग्रा तथा १४ ०० मिग्रा होता है। किसी भी मासाहारी पदार्थ मे यह इतना नही है। गेहूँ को विटामिन 'ई' का सर्वश्रेष्ठ/सर्वोपरि स्रोत माना जाता है।

जहाँ तक कैलोरियो (ऊर्जांक) का प्रश्न है, मासाहार को कैलेरियो का अच्छा स्रोत नही माना गया है। गेहूँ, चावल, और सोयाबीन से क्रमश प्रति १०० ग्राम ३५०, ३४६, और ४३२ कैलोरियाँ मिल सकती हैं, जबकि किसी भी मासाहारी पदार्थ मे १२५ कैलोरी प्रति १०० ग्राम से अधिक प्राप्य नही हैं।

अव यह लगभग पूरी दुनिया ने मान लिया है कि मासाहार से भू-क्षरण (इरोजिन), मरुस्थलीकरण (डेजर्टिफिकेशन), वर्षावनो की वर्बादी (डीफॉरेस्टेशन ऑफ रेनफोरेस्ट्स), पृथ्वी की उष्णता में वृद्धि (ग्लोबल वार्मिग), जल-प्रदूषण (वाटर-पॉल्यूशन), तथा कीटनाशी विषो के फैलाव जैसे दुष्परिणाम प्रकट हुए हैं, इसीलिए सेव्ह अर्थ फाउडेशन (७०६ फ्रेडरिक स्ट्रीट, सान्ता क्रूझ, सीए ९५०६२) द्वारा प्रकाशित 'अवर फूड अवर अर्थ' (मार्च १९९२) के पृष्ठ ३ पर स्पष्ट शब्दो मे कहा गया है कि यदि हमने अपनी व्यक्तिगत आहार-आदतो मे परिवर्तन नहीं किया, और मास, पौल्ट्री, तथा डेअरी उत्पादो की हमारी माँग इतनी ही, या इससे अधिक वनी रही तो ससार क्रमश विनाश की ओर वढ जाएगा, और यदि हमने अपनी खानपान-की-आदतो मे परिवर्तन किया तो हम धरती-के-घाव भर सकेगे, और आने वाली पीढी के लिए एक सपुष्ट जगत् की रचना कर पायेंगे।

इन तमाम कारणो से स्पष्ट है कि शाकाहार आज सवमे अधिक प्रासगिक है और वही इस धरती को विनाश से वचा सकता है।

—नेमीचन्द जैन,

१६ अक्टूबर १९९३ सपादक 'तीर्थंकर' 'शाकाहार-क्रान्ति'

क्रम

शाकाहार का मतलब है एक सादा, सुखद, दूसरो के लिए प्रीतिकर, निरापद जिन्दगी जीना।

शाकाहार का अर्थ है सचमुच जीवन के खरे-खोटे, भले-बुरे के लिए सही समझ।

शाकाहार और अहिंसा एक-दूसरे के पर्यायवाची शब्द हैं।

मनुष्य वस्तुत अपना भाग्य-विधाता स्वय है, अत वह मासाहार से अपने दुर्भाग्य को और शाकाहार ं अपने सौभाग्य को न्यौतता है।

सक्षेप मे, शाकाहार एक मानवीय आहार है, वह हमारे विकास का चरम विन्दु है, वह पर्यावरणिव कवच है, वह नैतिकता का सरक्षक (गार्जियन) आहार है। वह स्वास्थ्यवर्द्धक/सपोषक आहार है। वह एव ऐसा आहार है जो पूरी धरती को अभय और प्रीति का वरदान देता है।

शाकाहार अहिंसक जीवन-शैली का प्रमुख आधार है, अभिन्न अग है। शाकाहार के अभाव मे अहिंसव समाज की तो कल्पना ही नहीं की जा सकती।

आहार: विज्ञान और दर्शन

आज आहार मात्र आहार ही नही रह गया है, बल्कि उसका सूक्ष्मतर विश्लेषण हुआ है तथा उसके गुण-दोष पूरी तरह स्पष्ट कर लिये गये हैं। अब उसे विज्ञान और दर्शन का दर्जा मिल गया है। आहार की सपूर्ण प्रक्रिया 'विज्ञान' इसलिए है, चूँकि विज्ञान भ विशेषत रसायन और चिकित्सा - विज्ञान - ने आहार परिपूर्ण विश्लेषण किया है और इस तथ्य का पता लगाया है कि एक व्यक्ति को स्वस्थ और सक्रिय बने रहने के लिए कितनी कैलरीज (शक्ति-इकाइयो) की जरूरत होती है तथा इन्हें किन-किन स्रोतो से प्राप्त किया जा सकता है। आज विज्ञान के क़दम इतनी तेजी से आहार-के-क्षेत्र मे उठे हैं कि उससे सबन्धित छोटे-छोटे मुद्दो पर भी गहनतर अन्वेषण सभव हुआ है। विज्ञान ने आहार-सबन्धी खोजबीन तो की ही है, शरीर से जुडे अन्यान्य तन्त्रो को लेकर भी गहन अनुसधान किया है। आज उसने इस तथ्य का स्पष्ट पता पा लिया है कि भोजन किस तरह से शरीर के पाचन, रक्त-सचार, मस्तिष्क, मन इत्यादि को प्रभावित/नियन्त्रित करता है। खाद्य-पदार्थों के सदर्भ मे अब विज्ञान ने इतनी खोजबीन कर ली है कि वह यह आसानी से बता सकता है कि कौन पदार्थ हमारे लिए हितकारी है, कौन नहीं? इस तरह विगत दो-तीन दशको मे आहार का न सिर्फ एक विज्ञान खडा हो गया है, वरन् उसके साथ ही हमारी आवश्यकताओ के अनुरूप वस्तुओ का उत्पादन भी शुरू हुआ है।

ध्यान देने योग्य है कि आहार का विगत वर्षों मे न सिर्फ वैज्ञानिक चिन्तन ही हुआ है अपितु उस पर प्राकृतिक, नैतिक, सास्कृतिक, मन स्थितिक, धार्मिक इत्यादि सदर्भों में भी विचार किया गया है।

भारत एक ऐसा देश है जहाँ धर्म, सस्कृति, साहित्य, और दर्शन हमक़दम चले हैं। यह महत्वपूर्ण है कि जब से मनुष्य ने खेती करना आरभ किया तब से उसका ध्यान प्राणधारियो की साझेदारी पर भी गया। उसे लगा कि पशुओ को मार कर खाना बर्बरता है, उन्हें परिवार के अन्य सदस्यो की तरह विविध जिम्मेदारियाँ सौंप कर साथ मे रखना अधिक उपयोगी है। उसे महसूस हुआ कि जितना हक जीने का उसे है, उतना ही उन्हें भी है। उसने सोचा कि जब हम उनसे लाभ उठाते हैं, तब यह जरूरी है कि हम भी अपने सास्कृतिक, साम्पतिक विकास का लाभ उन्हें दे। हम मात्र क्रूर, बेहरम, बर्बर ही न हो बल्कि हो करुणावन्त, सवेदनशील, और निष्काम भी। हम सिर्फ अपने ही क्षेमकुशल पर ध्यान न दे अपितु उनके कुशल-मगल और सहवर्तन पर भी ध्यान दे।

स्मरणीय है कि प्रकृति अनादिकाल से एक सतुलन बनाये चली आ रही है। जब भी उसे इस, या उस पलडे पर वजन कमोबेश दीख पडता है, वह सतुलन पर लौटने का प्रयत्न करती है और उसका तोल-काँटा केन्द्र मे आ जाता है। इन दिनो हम नयी तकनीक और प्रोद्योगिकी के शिकजे मे कुछ इस तरह जकड गये हैं कि हमारे जाने/अनजाने प्रकृति-का-सतुलन काफी भग और विकृत हुआ है, यह सही क्षण है जब कि मनुष्य को प्रकृति के साथ अपने रिश्तो की पुनर्व्याख्या करना चाहिये और बगैर किसी टकराहट के उसकी [illegible] और उसके रहस्यो का इस्तेमाल करना चाहिये। अहिंसक जीवन-शैली प्रकृति के इस [illegible] सतुलन को [illegible] का सर्वोत्तम उपाय है।

प्रकृति का नियम है कि जो जैसा करता है उसे [illegible] लौटकर किसी-न-किसी शक्ल मे अवश्य मिलता है। अन्य [illegible], जिस तरह से बोते हैं

वह/उस तरह का/उस तरह से हमे वापिस होता है। कई बार तो प्रकृति ब्याज-सहित लौटाती है। यदि हम काँटे बोते है तो काँटे पाते हैं, और यदि फल बोते हैं, तो फल पाते हैं। यदि हम प्रकृति को उजाडते है, तो उलट कर वह भी हमे उजाडती हैं, और यदि हम उसे सपन्न करते हैं, तो वह भी हमे प्रसन्न/सपन्न करती है। 'प्रकृति के नियम अटल हैं' मनुष्य इस तथ्य को जानता है, किन्तु दु:खद यह है कि जान कर भी वह विपरीत आचरण करता है और कोई सावधानी नही बरतता। हम देख रहे हैं कि रोज़-ब-रोज़ धरती नगी हो रही है, खेत-वन उजड रहे हैं, नगर बस रहे हैं, पशुओ पर कहर बरस रहा है, यन्त्र मनुष्य के सर चढ कर बोल रहे हैं, जिन्दगी की जगह मशीनो ने ले ली है, जीवन पग-पग पर असम्मानित हुआ है और हम चाह रहे हैं कि सुखी बने रहें? असभव है यह।

आज हमारा खानपान बिलकुल गिर गया है, इस क़दर कुछ कि हम जो कुछ खा रहे हैं उसमे स्वास्थ्य पर कम और स्वाद पर अधिक ध्यान दिया जा रहा है। स्वाद की इस मार ने हमारे स्वास्थ्य को तो चौपट किया ही है, प्रकृति के सतुलन को भी मटियामेट किया है। स्वाद (सभी इन्द्रियो का) हमारे लिए अभिशाप बनता जा रहा है। दुनिया के तीन-चौथाई लोग मासाहार सिर्फ स्वाद के लिए करते हैं, जिसकी वजह से हर वर्ष करोडो पशुओ को बडी बेरहमी से मौत के जबडो मे डाल दिया जाता है।

स्वाद का जहाँ तक प्रश्न है, शाकाहार के अन्तर्गत जितने स्वादिष्ट पकवान बन सकते हैं उतने मासाहार के अन्तर्गत नही, गरज़ यह है कि स्वाद की पूर्ति शाकाहार अधिक सार्थकता से कर सकता है। कुछ लोगो को भ्रम है कि मास से शक्ति प्राप्त होती है, किन्तु अब इसके पुख्ता सुबूत मिल गये हैं कि मासाहारी व्यक्ति जल्दी थक जाते हैं और अनजाने मे कई असाध्य रोगो के शिकार हो जाते हैं। जिन्होंने विज्ञान की छाया मे शाकाहार की सार्थकता/प्रासगिकता का गहन अध्ययन किया है, वे जानते हैं कि एक तो बीमार वृक्ष फल नही देते, अगर यदि देते भी हैं तो उन्हे देख कर तुरन्त पता चल जाता है कि यह फल खाद्य है, या नही, किन्तु पशुओ के साथ वैसा नही है, उनका मिज़ाज और उनकी बीमारियाँ निश्चित ही मास खाने वालो मे हस्तान्तरित होती हैं। किसी वैज्ञानिक ने बिलकुल ठीक कहा है कि 'मास एक बार पचा ली गयी वस्तुओ का मलवा होता है'। जब एक जीव शाकाहार मे-से आवश्यक जीवन-तत्व भोग चुकता है, तब उस पचित आहार को मासाहारी काम मे लाते हैं। क्या इससे बाहतर यह नहीं है कि मलबे की जगह सीधे-सीधे मूल वस्तुओ का इस्तेमाल किया जाए? मासाहार की बुराइयो के बारे मे अब इतनी सारी छानबीन हो चुकी है कि जहाँ अधिक कहना उचित नही है। विचारको/बुद्धिजीवियो और सदाचार मे आस्था रखने वालो के लिए तो मास जहर से भी बदतर सिद्ध हुआ है। जो लोग भगवान् और उसकी सृष्टि मे भरोसा रखते हैं उनके लिए भी मासाहार अपराधो और पापो का ढेर ही है। आज यह तो हमे देख ही लेना होगा कि हम जो कुछ कर रहे हैं वह हमारे लिए/अन्यो के लिए हितकर, या अहितकर— कैसा है? वस्तुत शाकाहार ऐसा सतुलित आहार है जो तन, मन (अन्तत धन को भी) एक स्वस्थ रख सकता है।

आहार को लेकर हमारे यहाँ काफी सोच-विचार हुआ है। कहे, उसका एक दर्शन ही विकसित हो गया है। हमे कब खाना चाहिये? किस मौसम मे क्या/कैसा/कितना खाना चाहिये? किस उम्र मे क्या/कितना खाना चाहिये? किस मन स्थति मे क्या खाना चाहिये? किस काम के लिए क्या खाना चाहिये? एक शासक क्या खाये? एक रोगी क्या खाये? एक न्यायाधीश क्या खाये? इत्यादि पर हमारे देश मे काफी गँभीरता से बात-

वहस हुई है। देखा गया है कि किसी भी व्यक्ति की मुखछवि देख कर इस बात का पता लगा सकते है कि वह क्या खाता है, और क्या नहीं खाता है? क्रूरता और करुणा आहार मे-से ही मनुष्य के खून में दाखिल होती है।

ध्यान से देखेंगे तो पता पायेंगे कि हमारी आहार-सामग्री और हमारी आहार-शैली के मूल मे अहिंसा आरंभ से ही रही है। प्रश्न उठ सकता है कि यह अहिंसा क्या है? क्या जीव-हत्या/हनन ही हिंसा है, या इससे आगे भी कुछ है। वास्तव मे इससे आगे कुछ ही नहीं, बहुत कुछ है। 'अहिंसा' और 'भारत' लगभग पर्याय शब्द रहे है, आज की बात जुदा है। प्रदूषण प्रच्छन्न हिंसा है, इसमे जो लोग भागीदार हैं जाने-अनजाने, वे हिंसक हैं। यह हिंसा इतनी गहरी और बहरी है कि हम जिसका कोई अन्दाज ही नहीं लगा सकते। हम जो वस्त्र पहिनते हैं– उनमे कहाँ/कौन-सा निरीह प्राणी अपनी बहुमूल्य साँसे तोड रहा है/तोड चुका है, इसका अहसास हम नही कर पाते। रेशम के एक मीटर कपडे मे कितने रेशम-कीटो का मरघट है, इसे हम खरीदते और इस्तेमाल करते वक्त नही जानते। हम दवाई लेते हैं, किन्तु नही जानते कि वह किन निरीह पशुओ की जाने ले कर अस्तित्व मे आयी है। यह कौन-सा न्याय है कि कइयो के प्राण ले कर हम अपने प्राणो की रक्षा करें?

हवा को प्रदूपित करके क्या हम आगामी पीढी/समकालीन पीढी के प्रति कोई गहन अपराध नहीं कर रहे हैं? नदी-तालाब के जल को प्रदूपित कर, उसे अपेय बना कर क्या हम प्राणी-जगत् के साथ एक क्रूर खिलवाड नही कर रहे हैं? सौ मे से अस्सी प्रसग ऐसे हैं जहाँ हम हिंसा कर रहे हैं और सृष्टि के स्वाभाविक सतुलन को नष्ट कर रहे हैं। प्रकृति का अपना कारोबार है, हमारा अपना– प्रकृति हमारे कारोबार मे कोई दखलदाजी नही करती, किन्तु यदि हम उसके कारोबार मे कोई हस्तक्षेप करेंगे तो उसके नतीजे शायद इतने गजब होंगे कि हम शब्दो मे उसका वर्णन नहीं कर सकते। पेड/पौधे/अन्य जीवधारी, जिन्हें हम बडी बेरहमी से नष्ट कर रहे हैं, प्रकृति के सतुलन मे बहुत बडी भूमिका रखते हैं, किन्तु यदि हम इनका व्यापक सँहार करते हैं– अपनी खुदगर्जी के लिए इनकी हत्या करते हैं तो प्रकृति भला हमे कैसे मुआफ कर सकती है?

अहिंसा के अलावा चार और सूत्र हैं, जो परिस्थिति-विज्ञान (इकॉलॉजी) की दृष्टि से अपना विशिष्ट महत्व रखते हैं। जो पाँच अणुव्रतो का पालन करते हैं, निश्चय ही उनका आहार सतुलित और लोकतान्त्रिक होता है। लोकतान्त्रिक इस मायने मे कि वे अपने आहार मे औरो के हित का भी ध्यान रखते हैं। इस तरह जो अणुव्रती है वह जीव-जगत् के प्रति एक न्यायोचित भूमिका का निर्वाह कर रहा है। अहिंसा का स्थूल पालन ही यदि हो तो भी हमारी जमीन जन्नत बन सकती है।

अहिंसक जीवन-शैली मे आस्था रखने वाले व्यक्ति की भाषा विनम्र, मर्यादित, शालीन और आरामदेह होगी वह तकलीफ नही देगी, चुभेगी नही, क्या हम आहार पर विचार करते हुए अपनी वाणी पर विचार नही करेंगे? क्योंकि कहा गया है कि 'जैसा पीवै पानी, वैसी होवै वाणी'।

जिसे हम ध्वनि-प्रदूषण कहते है, उस पर 'भाषा-समिति' और 'मौन' द्वारा काबू पाया जा सकता है। सत्य भी वाचनिक प्रदूषण के लिए लाभकारी साबित हो सकता है। इसी तरह सामाजिक और नैतिक प्रदूषण– जो हमारे दूषित/विकृत खान-पान का ही दुष्परिणाम है– पर भी अचौर्य द्वारा अकुश पा सकते हैं। जिन सामाजिक/आर्थिक विषमताओ मे आज हम जूझ रहे हैं उन पर नियन्त्रण पाने मे अपरिग्रह की

उपयोगी भूमिका हो ससकती है। जितना आपके लिए ज़रूरी है, उतना आप ले, शेष दूसरो के लिए छोड दे यहाँ तक कि उनके प्रति कोई आसक्ति ही न रखे। दान भी सामाजिक समत्व की स्थापना का एक अमोघ उपाय है। समान/सतुलित वितरण मे अपरिग्रह जितना लाभकारी सिद्ध हुआ है, हो सकता है, उतना कोई सरकारी क़ानून नही हो सकता।

इसी तरह जो जनसांख्यिक असतुलन आज बन पडा है और जिसे ले कर हमारे अर्थ/समाजशास्त्री आज चिन्तित हैं, ब्रह्मचर्य मे उसका हल ढूँढा जा सकता है। परिवार-नियोजन की बात स्वय अपनी जगह ही ग़लत है, जिन लोगो मे आत्मानुशासन/सयम नही है– वे कोई मनुष्य हैं? ब्रह्मचर्य मन को सतुलित बनाता है, अनुशासित बनाता है, उसमे मर्यादाएँ विकसित करता है, जबकि परिवार-नियोजन/कल्याण उसे आतक, भय, और गहन तनाव मे रखता है और एक ऐसी जहरीली मानसिकता मे खीच ले जाता है जो किसी भी विकासशील/विकसित समाज के लिए अन्तत आत्मघाती साबित हो सकतो है। स्वैराचार की जिस वृत्ति को परिवार-नियोजन जनमता है, आज की अनुशाससनहीनता, खूनखराबा, और गुडा-गिर्दी के लिए वही जिम्मेवार है।

इस तथ्य को भी अन्त मे जान लेना बहुत है कि हम आज जिस तरह खा रहे हैं/जिस-तरह-का खा रहे हैं, उससे प्रदूषण की आशकाएँ बढ गयी हैं। जिस प्रदूषित वातावरण मे हम साँस ले रहे हैं, उससे हमारी मानसिकता विकृत और विकलाग हुई है तथा एक ऐसा दुश्चक्र बन गया है, जिसे काट पाना अन्तत कठिनतम हो जाएगा। क्या यह कभी सभव हो पायेगा कि हम आहार-दर्शन के इन पाँच सूत्रो– अहिसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य– को स्थूलरूप मे ही सही, अपने जीवन मे स्थान दे और निरन्तर मटियामेट हो रहे प्राकृतिक सतुलन की रक्षा करे?

अहिंसामूलक जीवन-शैली

शाकाहार आत्मानुशासन का ही दूसरा नाम है, वह मात्र आहार नहीं है, इन्द्रिय-सयम भी है। इसके द्वारा हम पूरे मन पर नियन्त्रण कर सकते हैं, अपनी कामनाओ और वासनाओ का नियमन भी कर सकते हैं।

शाकाहार पृथ्वी के सौंदर्यीकरण की एक सुन्दर धारावाहिक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा न तो हम प्रकृति को कोई क्षति पहुँचाते हैं, और न ही स्वय को किसी ऐसे रास्ते पर ले जाते हैं, जो विकृतियो और क्रूरताओ का रास्ता है।

शाकाहार न सिर्फ स्वय मे अहिंसक है, बल्कि वह अहिंसा के लिए सर्जनात्मक चेतना को जगाने वाला तत्त्व भी है।

शाकाहार की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह प्रकृति के प्रति मन मे एक गहन आस्था, और आत्मीयता पैदा करता है। वहाँ लोक और व्यक्ति के बीच कोई विघ्न-बाधा नहीं रह पाती। हम पूरी अनौपचारिकता मे उसके साथ खुले सवाद मे आ जाते हैं। हम न तो किसी को मारना चाहते हैं, और न ही कोई हमे मारना चाहता है। हम एक व्यापक सह-अस्तित्व की भावना से ओत-प्रोत स्वय को निष्काम चित्त से लोककार्य अर्पित कर देते हैं। ये जो युद्ध हो रहे हैं, इन सबका एक ही समाधान है शाकाहार के लिए जागरूकता।

शाकाहार व्यक्ति को न सिर्फ सदाचार की ओर ले जाता है, बल्कि उसे इतना उदार और सहनशील बनाता है कि वह स्वय के समानान्तर पूरी दुनिया, और पूरे 'यूनिवर्स' के बारे मे सोचने लगता है। एक शाकाहारी का जीवनमात्र उस तक सीमित नही रहता, वह लोकार्पित होता है पूरे लोक, विश्व, राष्ट्र और समाज के लिए। एक शाकाहारी अपने व्यवसाय, अपने लक्ष्यो और अपने उद्देश्यो मे बहुजनहिताय (बहुतो की भलाई के लिए) नही, सर्वजनहिताय (सबके कल्याण के लिए)—सर्वोदय (सब के—प्राणिमात्र के – उदय के लिए) की दृष्टि से काम करता है। वह यदि पत्ते को भी छूता है, तो पूरा वृक्ष उसकी मगल कामनाओ में नहा उठता है, वह एक धूलिकण का भी स्पर्श करता है, तो पूरी धरती मे जुड जाता है, वह किसी प्राणि को सहलाता है, तो सपूर्ण विश्व मे अभय और अहिंसा की तरगे उमड पडती हैं।

पूरे विश्व को निरस्त्रीकरण की ओर अग्रसर होने के लिए आवश्यक है, सबसे पहले आदमी के भीतर बैठी तामसिकता के निरस्त्रीकृत करने की। हथियारो के जखीरे को नष्ट करने से या कम करने से यह बात नही बनेगी, बल्कि हमारा मकसद तभी हल होगा, जब मनुष्य इसके लिए भीतर से तैयार हो। यह तभी सभव है, जब मनुष्य अपने खान-पान और रहन-सहन मे हर पहलू पर अहिंसक बने — शाकाहार को सूक्ष्मतापूर्वक अपनाये।

शाकाहार न सिर्फ मनुष्य के बाह्य ढाँचे को [illegible] सामाजिक ढाँचे को भी नियन्त्रित और परिवर्तित करता है।

मनुष्य जैसा खाता है ठीक वैसा ही उसका [illegible] होता है। आहार में किंचित् परिवर्तन से होने वाले मानसिक या शारीरिक परिवर्तन से हम [illegible] नहीं हैं; [illegible] का आहार-परिवर्तन हमारी सम्पूर्ण चेतना को प्रभावित कर सकता है। [illegible] और सात्त्विक आहार सात्त्विकता

जन्मता है, इस तथ्य से मुंह मोडना कठिन है।

मनुष्य वस्तुत अपना भाग्य-विधाता स्वय है, मासाहार से वह अपने दुर्भाग्य को और शाकाहार से अपने सौभाग्य को न्यौतता है।

शाकाहार मात्र आहार नही है वरन् एक सुनिश्चित/सुसिद्धशैली है, एक ऐसी जीवन-पद्धति जो अहिंसा, प्रेम, सह्-अस्तित्व, सहिष्णुता, परस्पर-सम्मान और सद्भाव की नींव पर खडी है। एक ऐसी जीवन-शैली जिसमे शोषण, दमन, धार्मिक कट्टरता, अन्धविश्वास, सामाजिक भेदभाव, कृत्रिमता, औपचारिकता, अराजकता, असम्मान आदि के लिए कोई स्थान नही है। जहाँ अन्धी रूढियो और व्यर्थ के विवादो को दरवाजा खटखटाने की अनुमति नहीं है, उस जीवन-शैली का नाम है शाकाहार।

शाकाहार श्रम और उदात्त जीवन-मूल्यो पर आस्था रखने वाला आहार है। श्रम की महत्ता और उसकी गरिमा की प्राण-प्रतिष्ठा मे उसका विश्वास है। ऐसा श्रम जिसमे बिचौलिये न हो। श्रमिक को जिसमे-से न्यायोचित मिला हो। शाकाहार कोई काल्पनिक स्वर्ग (उटोपिया) नहीं है, वरन् यह एक अत्यन्त व्यावहारिक और ठोस परिकल्पना है। शताब्दियो से मनुष्य क्रूरता/बर्बरता के विरुद्ध युद्ध जूझता रहा है। उसके भीतर गहरे कहीं यह बात है कि मात्र शरीर (उदर) ही अन्तिम नहीं है, बल्कि ऐसा कुछ भी है जो शरीर-के-पार है। शाकाहार का सबन्ध अध्यात्म से भी है और उन सारे प्राणियो के प्रति सम्मान-की-भावना से भी जो उसके इर्द-गिर्द अथवा साथ सदियो से रह रहे हैं। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य, करुणा, सयम, अनुशासन आदि ऐसे जीवन-मूल्य हैं, जिनका शाकाहारी जीवन-पद्धति से अत्यन्त निकट का सबन्ध है।

व्यक्ति के स्वय के विकास की दृष्टि से भी शाकाहार का महत्त्व है। मनुष्य के विकास मे सयम की एक उल्लेखनीय भूमिका रही है। भारतीय जीवन मे सयम को प्रगति का पिता कहा गया है। ये दोनो साथ चलते हैं। अनुशासन सयम का ही अन्य नाम है। व्यक्ति के कुछ ऐसे सास्कृतिक/चारित्रित गुण हैं, जो उसे समाज मे साख और प्रतिष्ठा, आदर और सम्मान प्रदान करते हैं। ये हैं – स्नेह, विश्वास, सहानुभूति, सहयोग, दया, ममत्व, अ-स्वाद, स्वाध्याय आदि। ये सारे गुण शाकाहार से सबद्ध हैं, मासाहार से इनका कोई सरोकार नहीं है।

इस तरह हम देखते हैं कि यदि हमे मनुष्य बनाये रखना है तो शाकाहार के बुझते हुए दीप को ताकत देनी होगी, उसकी लौ को अकम्प रखना होगा। किन्ही कारणो से यदि हम यह नहीं कर पाये तो सब ओर तमस् छा जाएगा और हम उसके घेरे मे बुरी तरह ध्वस्त हो जाएँगे।

△ △

आहार-में-विवेक

एक संतुलित व्यक्तित्व के लिए यह जरूरी है कि तन और मन, देह और दिमाग़ को स्वस्थ और संतुलित खुराक दी जाए। शरीर की खुराक आहार है, जिसे हम विभिन्न वस्तुओ की मात्राएँ निर्धारित कर संतुलित कर सकते हैं। यदि आहार मे एक चीज अधिक और एक कम होगी तो पूरे शरीर का संतुलन डगमगा जाएगा। तन को एसी खुराक चाहिये जो उसके दिमाग़ को स्वस्थ/सक्रिय रख सके ताकि देश की उन संस्थाओ को जीवन्त और स्वस्थ रखा जा सके जिन्हें हम शिक्षा,न्याय, धर्म, संस्कृति आदि शीर्षको से जानते हैं। कहा जाता है यू आर, व्हाट यू ईट (आप वही होते हैं, जो खाते हैं)। खाने मे-से देह के तमाम अवयव-स्थूल-से-सूक्ष्मतर-बनते हैं। मस्तिष्क भी उन्ही वस्तुओ मे से संरचित है, जिन्हें हम रोज-ब-रोज खाते हैं। मसलनन यदि आम हिंसा खाते हैं, तो अहिंसा आप मे-से प्रकट कैसे होगी? 'जैसा बीज, वैसी फसल' एक बहुत सीधा और सहज तर्क है। यदि आप अँधेरा खाते हैं तो भला आप में-से रोशनी जन्म कैसे लेगी? चिराग अँधेरा खाता है, काजल उगलता है। जो जैसा खाता है, वह वैसा है– होता जाता है– उसमे कोई शक-शुबह नहीं है।

आज हम जो खा रहे हैं, हमारे जीवन मे उसी को अभिव्यक्ति दिखाई दे रही है। तलाश करेंगे तो पायेंगे कि आज हमारे आहार मे तामसिक वस्तुएँ अधिक बढ गयी हैं। चारो ओर जो हिंसा, क़त्ल, दुर्घटनाएँ, लूटखसोट आदि का दौरदौरा है, उसकी पृष्ठभूमि पर तामसिक खानपान ही है। आमतौर पर आज का व्यक्ति इस तथ्य को मानने से इकार करेगा कि हम जैसा खाते हैं, वैसा बनते हैं/बनते जाते हैं, किन्तु गहराई में उतरने पर उसे इस तथ्य को मान लेने मे कोई कठिनाई नहीं होगी।

आज हमारे खाने मे कोई विवेक नहीं रहा है। स्वाद/जायका ही एकमात्र कसौटी रह गया है। हम सोच ही नही पा रहे हैं कि हमे क्या खाना चाहिये और क्या नहीं? वस्तुत हमे जो मिल जाता है, या जो हमारी जीभ माँगती है (भला-बुरा, खरा-खोटा) या विज्ञापन जिसे गले उतार देता है, उस पर हम टूट पडते हैं– बिना यह सोचे कि पारिस्थितिकी (इकॉलॉजी) की दृष्टि मे हमारा यह आचरण क्या मतलब रखता है, बगैर यह सोचे कि हमारे इस वर्ताव से आने वाली पीढियो को कौन-से बुरे नतीजे भोगने पडेंगे? आज हम अपने आहार में उन सारी वस्तुओ को शरीक किये जा रहें हैं, जिनका हमारे विकास से (अब तक के) कोई तालमेल नही है। यदि हम समाजशास्त्रियो की इस बात को मान भी ले कि आदमी शिकार-से-काश्त और काश्त-से-उद्योग पर आया है तो भी हम तदनुरूप आचरण कहाँ दे पा रहे हैं? हम आज भी शिकार-पर-अवलम्बित जिन्दगी जी रहे हैं अन्तर यह हुआ है कि अब हमने शिकार को फसल (मछली की/चूजो की) का नाम दे दिया है और अपने चारो ओर की प्राकृतिक संपदा को बेइतहा नष्ट करने लगे हैं। हमने किस्म-क़िस्म के उपाय निकाल लिये हैं और भविष्य की चिन्ता किये बगैर एक खुद-गर्ज जिन्दगी बिता रहे हैं। यह दु खद है और इसके दुष्परिणाम सामने आने लगे हैं। गौर करे कि हमारे खाने मे जिस क़िस्म की बर्बरता, क्रूरता, और उच्छृंखलता बढ रही है, वह आगामी सर्वनाश का दुर्भाग्यपूर्ण संकेत है।

जिस तरह देह को हम विवेकशून्य कुछ भी दे रहे हैं, उसी तरह दिमाग़ को भी ऐसा कुछ दे रहे हैं, जो नहीं दिया चाहिये। एक तो हिन्दी मे अच्छा कुछ प्रकाश मे आ नहीं रहा है और जो भी आ रहा है वह २-३ हजार उपन्यास पर व्यर्थ हो रहा है। दुर्भाग्य यह है कि प्राय जो भी अच्छा लिखा जा जा रहा है या प्रकाशित हो रहा है, उन करोड़ो-करोड़ लोगो तक पहुँच पा रहा है, जिन्हें उसकी जरूरत है। खरीद कर खाने मे तो

आदमी रुचि ले रहा है (शायद यह उसकी अनिवार्यता है), किन्तु खरीद कर पढने मे उसकी कोई दिलचस्पी नहीं है।

इधर हमारे परम्परित आहार पर (जो प्राय शाकाहार ही रहा है), पश्चिम की सभ्यता ने हमला किया है। उसने मासाहार को यन्त्रो और पैकेजिंग की तकनीको मे डाल कर मनुष्य को अधिक क्रूर और कृतघ्नी बना दिया है। विज्ञापनो के माध्यम से हम– भारतीयो के स्वास्थ्य को व्यापार के जिम्मे कर दिया गया है। स्वास्थ्य अब कर्त्तव्य नहीं, व्यापार और नफाखोर व्यापारियो के हाथो मे चला गया है। मासाहार के प्रचार-प्रचार पर आज सार्वजनिक क्षेत्र मे जो खर्च हो रहा है उसका अन्दाज़ हम नहीं लगा सकते।

आश्चर्य तो यह है कि मासाहार का प्रचार-प्रचार शाकाहारियो के प्रचार-माध्यमो से हो रहा है। धन के बल पर खुदगर्ज़ व्यापारी इन साधनो का धडल्ले से इस्तेमाल कर रहे हैं। शाकाहारी वर्ग आज सस्कारवश शाकाहारी है; किन्तु अपने व्यापार-व्यवसाय मे मासाहार के प्रचार-प्रसार मे हिस्सेदारी कर रहा है। पूछने पर इसे वह 'व्यवहार' कह कर टाल रहा है। शायद यह उसकी लाचारी है।

शाकाहार सर्वोत्तम है, इस तथ्य को अब पश्चिम भी मानने लगा है। इसी वर्ष लन्दन मे हुई 'विश्व पुरातत्व परिषद्' मे शाकाहारियो और मासाहारियो का अनुपात बराबर था। इससे शाकाहार की उपयोगिता की ओर दुनिया का ध्यान गया है यह तथ्य साबित होता है, किन्तु ऐसे लोगो से कैसे निपटा जाए जो भारत मे शाकाहारियो की भावनाओ का ध्यान रखे बिना मासाहार के धुआँधार प्रचार-प्रसार मे खून-पसीना एक रहे हैं। वे नितनयी रणनीति और व्यूहरचना अपना रहे हैं। यह चिन्ताजनक है।

हम जानते हैं भारत कृषि/ऋषि सस्कृति का देश है, अत मासाहार से जहाँ एक ओर हमारा पारिस्थितिक वातावरण अपग होगा, वही हमारा सार्वजनिक जीवन भी तहस-नहस हो जाएगा। बहुत आवश्यक है, अत, कि हम अपने सारे काम स्थगित कर पूरी तैयारी के साथ शाकाहार की महत्ता/उपयोगिता लोगो को समझाये और अहिंसा के उपादानो की– जो मूलत हमारी सस्कृति के उपादान ही हैं– रक्षा करे।

△ △

शाकाहार: सुविकसित जीवन-दर्शन

शाकाहार सिर्फ आहार नहीं है बल्कि वह अहिंसा/करुणा/परस्पर सहयोग पर मजबूती से टिकी-खड़ी जीवन-शैली है। शाकाहार मे छीन-झपट, लूटखसोट, मारकाट, और शोषण-दमन की जगह सहानुभूति और त्याग ने ली है।

शाकाहार एक अत्यन्त मानवीय और सुविकसित जीवन-दर्शन है। जहाँ गुर्राने, दहाड़ने, धमकाने, हमला करने, खून-खराबा करने आदि क्रूर कर्मों के लिए कोई गुंजाइश नहीं है। हिंसा से सामुदायिक अथवा व्यक्तिगत– निबटने के लिए शाकाहार से बड़ा कोई अचूक उपाय नहीं है। शाकाहार मनुष्य को खून मे-से बदलता है। उसमे हिंसा की कोई जगह नहीं है। वहाँ प्रीति-ही-प्रीति है– सिर्फ प्रीति, रहम-का-दरिया प्रवाहित है, लहरें भर रहा है, अत समझे कि शाकाहार आहार से आगे की स्थिति है। वह एक पाँव बढ़ाता जीवन-दर्शन है।

वस्तुत शाकाहार एक जीवन-शैली है जो व्यक्ति और समूह दोनो को सुख, समता, और समृद्धि की ओर ले जाती है। शाकाहार का साफ-सुथरा अर्थ है सह-अस्तित्व, एक गुणोन्मुख अहिंसक जीवन-पद्धति।

हमे अविलम्ब जानना चाहिए कि शाकाहार सिर्फ आहार ही नहीं है बल्कि उससे आगे वह एक संपूर्ण जीवन-दर्शन है। वह कोरमकोर वनपतिजन्य वस्तुओ की एक निष्प्राण थाली ही नही है, बल्कि अहिंसामूलक/अत्यन्त मानवीय जीवन की प्रतिनिधि जीवन-शैली भी है। वह जीवन को शोषण, हिंसा और विनाश-से-मुक्त पद्धति से जीने की एक बहुमूल्य कला है। कभी वह हमारे राष्ट्रीय जीवन का एक अभिन्न अग थी, किन्तु पश्चिम के ससर्ग के कारण हम उसे आज भुला बैठे हैं और उसकी जगह हमने एक हिंसक, क्रूर, और आमिषमूलक जीवन-पद्धति को अपना लिया है। हम इस भ्रम-जाल मे फँस गये हैं कि आज हम क्रूरता-पर-टिकी जिस जिन्दगी को जी रहे हैं वह अत्याधुनिक है, सुविकसित है, और एक गौरवशाली स्तर का प्रतीक है। 'स्टेटस' बनाने के दुश्चक्र मे हम एक ऐसे व्यूह मे फँस गये हैं, जिसमे हम-तो-हम हमारी आगामी पीढ़ियाँ तक बहुत मुश्किल से मुक्त हो पायेंगी।

हमे यह महसूस करना चाहिये कि शाकाहार मात्र आहार नहीं है, बल्कि एक सशक्त जीवन-शैली है, जिसका तकाजा है कि हम अपने सामाजिक सबन्ध-शास्त्र का पुन परीक्षण करें और उसमे अपदस्थ करुणा को उपयुक्त स्थान दें। क्रूरता ने आज हमे इतना बदहवास और बदशक्ल कर दिया है कि हम महावीर, बुद्ध, ईसा और महात्मा गाँधी के वंशज हैं, यह पहचानना मुश्किल हो गया है। हमारे चेहरे पर खून-के-जो-दाग हैं यदि हम चाहें तो अभी भी इन्हें करुणा और संवेदनशीलता के पवित्र और अचूक जल मे धो सकते हैं– किन्तु प्रश्न सकल्प का है, एक जीवन शैली को दृढ़ता से अपनाने का है।

यदि हम यह जानेंगे कि शाकाहार मात्र एक थाली नही है वरन् उसमे सदाचार, सद्विचार और सद्व्यवहार भी सम्मिलित है तो हम निश्चय ही व्यक्ति और समाज को एक नयी और सही रोशनी दे सकेंगे, अन्यथा हम उस गहरी खाई मे निरन्तर उतरते जाएँगे जिसमे मौत, अज्ञान और अँधेरे के अलावा और कुछ नहीं है।

शाकाहार एक ऐसी जीवन-शैली है जो रचनात्मक है और मनुष्य के भीतर सोयी पड़ी अनगिनत सम्भावनाओ को जगाती है। उसका सबन्ध रक्तपात से न हो कर मैत्री और मोद से है।

देश मे, दुनिया मे शाकाहार के लिए अब एक सक्षम जागरूकता ने जन्म ले लिया है और आहार-विशेषज्ञ उन तथ्यो को सामने लाने लगे हैं, जो उन्हें गहन खोजबीन के बाद प्राप्त हुए हैं। विशेषज्ञों के एक दल ने स्पष्ट कहा है कि मासाहारियो मे मृत्युदर अधिक है और शाकाहारियो मे काफी कम। इस जागरूकता ने हमारे भीतर स्वतन्त्र चिन्तन की एक रचनात्मक लहर ने जन्म लिया है। अब हम सिर्फ विश्वास ही नहीं कर रहे हैं, बल्कि अपनी खुद की आँखो से देख रहे हैं कि अहिंसक शक्तियाँ सक्रिय हैं और शाकाहार एक स्थापित जीवन-पद्धति के रूप मे प्रकट हो रहा है। हम न सिर्फ आहार को लेकर चिंतित हुए हैं, वरन् अपने देश की अस्मिता को सुरक्षित रखने की चिंता भी हमे हुई है।

हमे शाकाहार और अहिंसा की उस जागरूकता की अगवानी करनी चाहिए जो बीसवीं सदी की साँस में उभरी है और जो इक्कीसवीं सदी का उषःकाल बनने को है।

जीवन की दो पद्धतियाँ हैं। पहली जीवन-पद्धति का नाम शाकाहार है, और दूसरी का मासाहार, प्रथम अहिंसामूलक है, द्वितीय हिंसामूलक, पहली स्वास्थ्य की ओर कदम उठाये है, दूसरी अस्वास्थ्य की ओर, पहली मानवीय/सौन्दर्यपरक है, दूसरी आसुरी/विकृतिपरक, पहली सात्विक है, दूसरी तामासिक, चुनाव निर्भर है हम पर कि हम जीवन को चुनते है, या मृत्यु को, अंधेरे को चुनते हैं या रोशनी को।

शाकाहार मात्र आहार नहीं है, अपितु उसके साथ जीवन का सौन्दर्य उसकी गौरव-गरिमा आवद्ध है।

सह-अस्तित्व के लिए जिस निर्मल जीवन-पद्धति की आवश्यता है, उस पद्धति का नाम है शाकाहार।

शाकाहार मात्र आहार नहीं है, वरन् एक सफल और अनुभूत जीवन-पद्धति है, जिसका उद्देश्य सिर्फ पेट भरना नही है, बल्कि जिसका हमारे चिन्तन और हमारे सस्कारो से भी घनिष्ठ सवन्ध है।

वस्तुत शाकाहारी जीवन-पद्धति के ब्लूप्रिंट (स्वष्ट रूपरेखा कार्यक्रम/कार्य योजना) के क, ख, ग, घ, हैं शान्ति, कान्ति (क्रान्ति भी), हार्द (स्नेह, सुकुमारता, मृदुता यानी अहिंसा का प्रतिनिधि) और रक्षा (रसा यानी धरती भी)। इस तरह जिस जीवन-शैली मे समायोजन का लचीलापन है, एक-दूसरे के सुख की गुजाइश है, उस जीवन-पद्धति का नाम शाकाहार है। यह आत्मोन्नयन मे विश्वास रखने वाली जीवन-शैली है।

शाकाहारी जीवन-पद्धति समायोजन और समरसता-जैसे चारित्रिक गुणो पर खडी हुई है। शाकाहार की थाली मे जो भी सादा है, सुन्दर है, सात्विक है, अक्रूर है, अनिर्मम है, किमी की जान लेकर अस्तित्व मे आया हुआ नही है। शाकाहार की सादगी अकृत्रिम है, प्राकृतिक है, वह आत्मनिर्भर है। सतोष इस पद्धति की अपनी विशेषता है।

समायोजन, सादगी और सतृप्ति (सतोप) का त्रिकोण रचता है सदाचरण, जो मनुष्य का सर्वोपरि विकास है।

एक भ्रातृत्वमूलक, करुणा और अहिसा, मानवीयता और प्राकृतिक मौलिकताओ पर आधारित धरती की कल्पना हम सिर्फ शाकाहारी जीवन-पद्धति मे ही कर सकते हैं।

इस तरह लोग लगातार जाग/जान रहे हैं कि शाकाहार मात्र आहार नहीं, बल्कि एक सुचिन्तित जीवन-पद्धति है, जो अच्छी तन्दुरुस्ती, शान्ति, सुख, सत्य और अहिसा मे परिपूर्ण विश्वास रखती है।

शाकाहार का सीधा-सादा अर्थ है जीवन का ऐसा क्रम जिसमे दूसरो के लिए समुचित आदर और सम्मानीयता गुजाइश हो और सब-सारा सिर्फ खुदगर्जी का स्वार्थ पर टिका हुआ न हो। △△

शाकाहार: सर्वोत्तम जीवन-पद्धति

यह मानना कि शाकाहार सिर्फ एक आहार है, बहुत छोटा विचार है। जब भी हम किसी प्रकार के आहार की चर्चा करे हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि कोई भी आहार सिर्फ आहार नहीं होता, वह समग्र जीवन को प्रभावित और प्रतिबिम्बित करने वाला एक महत्त्वपूर्ण अंश होता है, जिसकी हमारे व्यक्तित्व-निर्माण मे एक उल्लेखनीय भूमिका होती है।

सब जानते हैं कि हम जैसा खाते हैं, वैसा होते हैं। सृष्टि का नियम है कि जैसा बीज होता है, फल भी वैसा ही होता है। आहार चाहे जो/जैसा हो, बीज-रूप होता है। यही बीज हमारी नस-नस मे फैल कर एक पूरे वृक्ष की शक्ल ग्रहण कर लेता है।

शरीर एक तरह का वृक्ष ही है, अवयव जिसकी शाखाएँ हैं, और शिराएँ जिसके रेशे हैं। इसे हम जैसा रखेंगे, वह वैसा/उसी तरह से रहेगा। असल मे हमे चाहिये कि हम इस वैज्ञानिक सचाई को व्यक्तिगत रूप से जानें कि हम आहार के रूप मे जो भी ग्रहण करते हैं, वह उत्तरोत्तर स्थूल-से-सूक्ष्मतर होता जाता है, अर्थात् उससे मास-मज्जा-रुधिर आदि तो बनते ही हैं, हमारी कोमल अनुभूतियाँ भी बनती हैं, अतः यह तय है कि शाकाहार एक सुविकसित जीवन-पद्धति है, जिसमे अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह और ब्रह्मचर्य जैसे सात्त्विक गुणो का महत्त्व है। इसे छोड दुनिया का ऐसा कोई आहार नहीं है जो दूसरो की रक्षा, और उनके भरपूर सम्मान मे आस्था रखता हो।

संभव है जब तक मनुष्य ने खेत-खलिहान और बीज-वृक्ष के रहस्य को न जाना हो, [illegible] पर निर्भर रहा हो, और सामिष आहार लेता रहा हो, किन्तु जैसे-जैसे वह विकसित [illegible] — उसका सांस्कृतिक अभ्युत्थान होता गया, उसके जीवन मे हिंसा की अपेक्षा अहिंसा का [illegible] का आदर बढता गया। अहिंसा मनुष्य की सर्वोत्तम उपलब्धि है। वह उसके [illegible] का सर्वोच्च शिखर है। मांसाहार और अहिंसा दोनो समानान्तर चल [illegible] और अहिंसा ही कदम-से-कदम मिला कर चल सकते हैं। इसी तरह [illegible] हिंसा के साथ कोई तालमेल नही रखते, वे अहिंसा के साथ ही कदम [illegible]

जब हम आध्यात्मिक दृष्टि से शाकाहार पर विचार करते हैं [illegible] जाता है, जिसमे कहा गया है कि दुनिया के सारे जीवधारी [illegible] यदि संसार के सारे प्राणी आत्मवत् हैं तो हमें इस आत्मवत्ता का सम्मान [illegible] अधिकार देना चाहिये। जो देश पेड-पौधो की धडकन को प्रमाणित [illegible] रहा हो, उसमें कभी यदि दूध की नदियाँ बही हो तो कोई आश्चर्य की बात [illegible] अनिवार्य मुद्दा है, अतः जब भी हम उनके आँचल-की-छाया छोड़ेंगे, [illegible] पर्यावरण के प्रदूषित होने की समस्या जिस से जुड़ी हुई है [illegible] उपाय है। यदि [illegible] अहिंसा को पूरी तरह स्वीकार कर [illegible] हो।

जब हम शाकाहार पर [illegible]
प्रकट हुआ है [illegible]

मनुष्य के साथ तो अच्छा व्यवहार करें और सृष्टि के अन्य अस्तित्वो के साथ बदसलूकी करें? क्या ऐसा करने मे हमारे चरित्र का दोगलापन प्रकट नहीं होगा? क्या जब हम पशु-पक्षियो के साथ हिंसा का वर्ताव करेंगे, तब यह आशका बढ नही जाएगी कि हम अपने साथियो के साथ भी आहिस्ता-आहिस्ता वैसा ही क्रूर और वर्वर व्यवहार करने के अभ्यस्त हो जाएँ। वस्तुत मासाहारी का मन उतना सवेदनशील नही रह जाता, जितना एक शाकाहारी का बना रहता है, या उत्तरोत्तर बनता जाता है। शाकाहार के साथ ललित जीवन-मूल्यो का जितना घनिष्ठ सवन्ध है, उतना अन्य किसी आहार के साथ नहीं है, इसलिए सामाजिक दृष्टि से भी यह आवश्यक है कि सपूर्ण समाज ऐसे आहार की अनुशसा करे जिससे समाज पर हिंसा का दवाव कम हो और भाई-चारे की सभावना निरन्तर समृद्ध हो। शाकाहार का सीधा और स्वच्छ मतलब है चारो ओर स्नेह और विश्वास का वातावरण बनाना और प्रकृति के हर अस्तित्व को भयमुक्त रखना। शाकाहार का दूसरा नाम अभय, और निर्विघ्न शान्ति है। एक सतुलित सामाजिक प्रगति के लिए शाकाहार की अपरिहार्यता को अस्वीकार करना सभव नही है।

जहाँ तक आहार-शास्त्र का प्रश्न है, जो तुलनात्मक आँकडे और वैज्ञानिक समीक्षाएँ हमारे सामने हैं, उनसे यह सिद्ध होता है कि शाकाहार की एक ऐसा आहार है जो मनुष्य को वेहतर मनुष्य बनने मे सहयोग कर सकता है। एक आदमी के लिए जितने ऊर्जांक (कैलोरियाँ) ज़रूरी होते हैं, शाकाहार से वे सहज ही मिल जाते हैं। जो लोग सामिषभोजी हैं, उन्हे सव कुछ 'सेकड हैंड' मिलता है। शाकाहारी को वनस्पतियो से सीधा और स्वस्थ पोषण मिलता है, किन्तु मासाहारी को उसे टेढे रास्ते चल कर पाना होता है। दुनिया का ऐसा कोई जीवधारी नहीं है जो मासाहार पर जीवन-यापन करता हो उसे सीधे, या टेढे शरीर-के-चयापचय (मेटॉवोलिज्म) के सतुलन के लिए शाकाहार पर निर्भर रहना होता है।

प्रश्न उठता है कि क्या मासाहार एक परिपूर्ण आहार है? क्या शाकाहार सपूर्ण आहार नही है? क्या हम हाल जन्मे मानव-शिशु को सिर्फ मासाहार पर जिलाये रख सकते हैं? क्यो कोई केवल मासाहार पर टिका रह सकता है? नही। सच तो असल मे यह है कि कोई भी मानव-शिशु आरभ मे शाकाहार के अलावा कुछ और पचा ही नहीं सकता। उसका शरीर इतना सुकुमार होता है कि वह मासाहार की मार सहन हो नही कर सकता। कोई चिकित्सक किसी सद्य जात शिशु को मासाहार देने की सलाह नहीं दे सकता। इसके विग्रीत एक विशुद्ध शाकाहार सिर्फ शाकाहार पर जीवित रह सकता है, अत यह स्वयसिद्ध है कि शाकाहार एक परिपूर्ण आहार है और मासाहार अपूर्ण/असतुलित।

कोई आहार-विशेषज्ञ कार्वोहाइड्रेट्स-रहित आहार की अनुशसा नही कर सकता। आज प्राय सभी आहार-विज्ञानियो ने इस तथ्य को मान लिया है कि अच्छे स्वास्थ्य के लिए रेशायुक्त आहार ज़रूरी है। जिन लोगो के आहार मे कार्वोहाइड्रेट्स नही होते, उन्हे प्राय कब्ज हो जाता है। चिकित्साशास्त्र मे कब्ज को काल कहा गया है। उसे मृत्यु का सदेशवाहक माना गया है।

इस सदर्भ मे हमारा ध्यान अण्डो पर जाता है। अण्डो मे कार्वोहाइड्रेट्स तो गैरहाजिर होते ही हैं, कोलेस्टोरोल की मात्रा इतनी अधिक होती है कि हमारी धमनियाँ कभी भी रुद्ध हो सकती हैं और हम कभी भी हृदयरोग के शिकार हो सकते हैं। खून मे कोलेस्टोरोल-के-स्तर को सतुलित रखने के लिए शाकाहार से वढिया आहार कहीं नहीं है। यह मत हमारा नही है, वल्कि वडे-वडे/नामी-गरामी चिकित्सको का है।

. मासाहार, अण्डे जिसमे सम्मिलित हैं, करने की राय देते हैं वे सभवत इस तथ्य को भूल जाते

है कि कोलेस्टेरोल तथा प्रोटीन आदि को ले कर जो प्रयोग हुए हैं वे सिर्फ चूहो पर ही हुए हैं। चूहो पर हुए प्रयोग-निष्कर्षो को मनुष्य पर लागू करना स्वय मे हास्यास्पद है। कोलेस्टेरोल और प्रोटीन के विशेषज्ञो का कथन है कि चूहो को जन्मोपरान्त मनुष्य की अपेक्षा दस गुना अधिक प्रोटीन लगता है। कुशल चिकित्सको को चूहो और मनुष्यो मे फर्क करना चाहिये। अमरीकी कोलेस्टेरोल-विशेषज्ञ श्री ब्राउन और श्री गोल्डस्टीन, जिन्हे कोलेस्टेरोल के गहन अध्ययन के लिए नोबल पुरस्कार मिला है, ने स्पष्ट कहा है कि मासाहार से हार्टअटैक और कैंसर की आशकाएँ बनी रहती हैं। खून मे कोलेस्टेरोल-के-स्वाभाविक स्तर को कायम रखने के लिए दोनो विशेषज्ञो ने मासाहार से बचने और शाकाहार करने की सलाह दी है।

जब हम आर्थिक दृष्टि से शाकाहार और मासाहार की बहस पर आते हैं, तब पाते हैं कि मासाहार बहुत महँगा पड़ता है। एक मासाहारी २० शाकाहारियो की खुराक पेट मे डाल लेता है। पशुओ-से-प्राप्त आहार पर उनकी देख-भाल/खुराक पर जो खर्च होता है वह इतना ज्यादा है कि एक शाकाहारी पर एक मासाहारी शोषक की तरह गुर्राता दिखायी देता है। जो लोग यह तर्क देते हैं कि दुनिया के सारे लोग शाकाहारी हो जाएँगे तो शाकाहार कम पड़ जाएगा और पशु-पक्षियो की आबादियाँ समस्या बन जाएँगी, ऐसा नही। अर्थशास्त्री माल्थस के अनुसार खाने-पीने की वस्तुओ और जन-संख्या के बीच का सतुलन प्रकृति स्वय बनाये रखती है। यदि मनुष्य अपनी आबादी को बेरोकटोक बढ़ने देता है तो प्रकृति महामारियो तथा विपदाओ तथा विपदाओ द्वारा उसे सतुलित करती है, इसलिए यह कहना कि मासाहार को शाकाहार के लिए जीवित रखा जा रहा है, तथ्यो का धूर्त सयोजन है। जो आँकड़े आहार-शास्त्रियो और अर्थ-विशेषज्ञो ने आकलित किये हैं, उनसे यह सिद्ध होता है कि शाकाहार मासाहार की तुलना मे अधिक सस्ता गुणकारी, और मनुष्य की प्रकृति का अनुरूप आहार है।

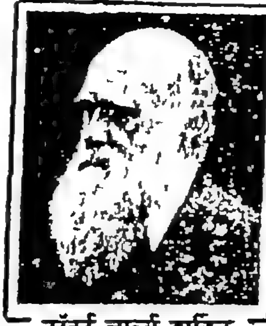
जब हम आहार की समस्या पर मनोविज्ञान की दृष्टि से विचार करते हैं, तब पाते हैं कि मनोविज्ञानिक दृष्टि से भी मासाहार मनुष्य के स्वाभाविक विकास मे बाधाएँ खड़ी करता है। जब क़त्लखानो में पशुओ को मारा जाता है तब वे बोल भले ही न पाते हो, किन्तु अनुभव करते हैं कि यदि उन्हे मौका मिले तो वे अपने हत्यारे के साथ वही सलूक करें जो वह उनके साथ कर रहा है। बदला लेने, क्रोध और बैर की यह गाँठ उनके पूरे शरीर मे फैल जाती है और मासाहार के साथ उपभोक्ता के शरीर मे घुल कर उसे क्रोधी तामसिक और हिंसक बनाती है। यही कारण है कि आज का आदमी अधिक बर्बर, क्रूर, सुलभकोपी और एक-दूसरे के प्राणो का प्यासा बन गया है। आज बात-बात मे एक-दूसरे को मार डालने की धमकी बहुत आम बात हो गयी है। आत्महत्याओ की सख्या बढ़ गयी है। एक-दूसरे को धोखा देने और ठगने की घटनाएँ तो अतिसामान्य हैं। ध्यान से देखने पर हम पाते हैं कि आतकवाद मासाहार, या बढ़ते हुए तामसिक आहार की उपज है। अनुभव से इसे सहज ही माना जा सकता है कि शाकाहार की तह मे प्यार और सहयोग धड़कते हैं, जबकि मासाहार की तह मे हिंसा और क्रूरता का दरिया दहाड़ता है। इस तरह हम देखें कि मनोविज्ञान की नजर में भी मासाहार से व्यक्ति निष्ठुर, सवेदनशून्य और हिंसक बनता है और मासाहार से उसकी कोमल भावनाएँ नष्ट होती हैं तथा समाज के करुणा का दामन प्रदूषित होता है।

दुनिया का ऐसा कोई मजहब नही है जो जान लेने या हिंसा करने की अनुमति देता हो। ससार के सारे धर्म प्रेम करने और एक-दूसरे की रक्षा करने की सीख देते हैं।

△ △

विश्व-विख्यात शाकाहारी दार्शनिक वैज्ञानिक साहित्यकार


अरस्तु


रॉबर्ट चार्ल्स डार्विन


अल्बर्ट आइन्स्टाइन


लियो टॉल्सटॉय


हर्बर्ट जॉर्ज वेल्स


जॉर्ज बर्नार्ड शॉ


महात्मा गांधी


बेंजामिन फ्रैंकलिन


वॉल्टेअर


सर आयजक न्यूटन


लियोनार्दो द विंची


विलियम शेक्सपीयर





डॉ. नेमीचन्द जैन की बहुचर्चित लोकप्रिय कृतियाँ

वैशाली के राजकुमार तीर्थंकर वर्द्धमान महावीर (परिवर्द्धित, चौथा सस्करण)	१५ ००
बहुआयामी महामन्त्र णमोकार	१५ ००
ओम् १०० तथ्य	५ ००
जहर अमृत चुनौतियाँ	१० ००
अपरिचय	५ ००
जैनधर्म १०० तथ्य	७ ००
जैनधर्म · इक्कीसवी शताब्दी	५ ००
जीवन-पीयूष (सामायिक पाठ पद्यानुवाद, विशिष्ट भूमिका-सहित)	२ ००
जिन खोज़ा तिन पाइयाँ (स्वाध्याय, सम्यक्त्व, स्वपर-विज्ञान)	३ ००
अ-युद्ध पुरुष (बाहुबली-प्रसग, द्वितीय सस्करण)	५.००
मानव-सस्कृति के पुरस्कर्ता भगवान् ऋषभनाथ	५ ००
मेरी भावना (सचित्र, विशिष्ट भूमिका-सहित)	३ ००
भक्तानर स्तोत्र (सचित्र, मूल, अन्वय-अर्थ, विशिष्ट भूमिका-सहित)	१० ००
पर्युषण उष पान जीवन का (परिवर्द्धित)	५ ००
एकान्त अपना-अपना अनेकान्त सबका (परिवर्द्धित)	५ ००
हम अन्धे पाँच अन्धे (परिवर्द्धित)	५ ००
अहिसा है हमारी माँ (परिवर्द्धित)	५.००
अहिसा का अर्थशास्त्र	५ ००
प्रणाम महावीर	५ ००
जैन आहार विज्ञान और कला	५ ००
वरक़ मासाहार है	५ ००
मुख़ातिब ख़ुद-ब-ख़ुद (बातचीत स्वय-की, स्वय-से)	१० ००
शाकाहार मानव-सभ्यता की सुबह (परिवर्द्धित, द्वितीय सस्करण)	२० ००
शाकाहार-विज्ञान	१५.००
शाकाहार १०० तथ्य	५ ००
शाकाहार सर्वोत्तम जीवन-पद्धति	२ ००
बेकसूर प्राणियो के खून-मे-सने हमारे ये बर्बर शौक़	२ ००
ना बाबा ना	२.००
मासाहार सौ तथ्य	३ ००
अण्डे के बारे मे १०० तथ्य	२ ००
अण्डा ज़हर-ही-ज़हर	२ ००
अण्डा आपको निगल रहा है	१ ००
क़त्लख़ाने १०० तथ्य	८ ००
क़त्लख़ानो का नर्क	२ ००
हिसा क़त्ल क्रूरता	५ ००
१०० अच्छे काम	५ ००

हीरा भैया प्रकाशन

६५ पत्रकार कॉलोनी, कनाडिया मार्ग, इन्दौर-४५२००१ (मध्यप्रदेश)

डॉ. नेमीचन्द



शाकाहार : १०८ तथ्य

Beta carotene keeps cancer at bay

NEW DELHI, Aug 28 (UNI)

Daily doses of yellow or orange coloured fruits and vegetables can keep the dreaded malaise—cancer—at bay, says a new study

Carrots, oranges and even tomatoes are a good source of the cancer fighter called *beta carotene* Nutritionists have discovered *beta carotene* to be rich in vitamin 'A' activity which has shown convincing results as an anti-cancer agent

Along with Vitamins C and E *beta carotene,* which converts itself into Vitamin A inside the body, has been recognised as potential fighters of the two most dreaded ailments—cancer and cardio-vascular diseases

Researchers R Manorama and C Rukmani from the National Institute of Nutrition have pointed out that Vitamin A also helps fight blindness apart from its anticarcinogenic nature.

In fact, the US National Cancer Institute recommends a daily dose of six milligrammes of *beta carotene,* which amounts to five or six helpings of fruits and vegetables in a day This is almost four times the present estimated daily intake of *beta carotene* in an American's daily diet This recent awareness of the efficacy of *beta carotene* has given a boost—the synthetic variants of the substance

However, most people prefer to take *beta carotene* in its natural form But the major problem in consuming carotenoids in the form of natural substances is that they are genertally not present in high enough concentration Research is on at several nutritional institutes to ensure that food products with carotenoids are not stripped of it during the processing method

One rich source of carotenoids which can be used daily as food is palm oil However, in the process of refining palm oil and removing its natural red colour, most of the carotenoids are washed away

Palm oil in its crude form contains 15 times more carotenoids than carrots and 300 times more than found in tomatoes, according to the Malaysian Palm Oil Production Council (MPOPC), It is this high level of carotenoids that gives the characteristic orange-like colour to the crude oil *(Contd on cover-page 3)*

बीटा कैरोटीन कैंसर को फासले पर रखता है

पोषण-विशेषज्ञो का निष्कर्ष है कि बीटा कैरोटीन में 'ए' विटामिन काफी सक्रिय रहता है। यह 'सी' और 'ई' विटामिनो के साथ खुद शरीर के भीतर 'ए' विटामिन मे बदल कर शरीर की सुरक्षा-पंक्ति को सुदृढ़ बनाता है। गाजर, सतरा और टमाटर इसके अच्छे स्रोत हैं। कैंसर की लड़ाई जीतने मे बीटा कैरोटीन की बडी महत्त्वपूर्ण भूमिका सिद्ध हुई है। वस्तुत· अमरीकी राष्ट्रीय कैंसर सस्थान ने प्रतिदिन ६ मिग्रा बीटा कैरोटीन की खुराक अनुशंसित की है। सस्थान के अनुसार इतनी मात्रा दिन मे छह बार फल तथा साग-सब्जी ले कर पूरी की जा सकती है। अब प्रायः सभी आहार-शास्त्री यह मानने लगे हैं कि पीले और नारगी रंग के फल तथा साग-सब्जी कैंसर-जैसे भीषण रोग को एक तर्कसंगत फासले पर रोक सकते है। ताड़-तैल (पाम-ऑइल) को कैरोटानाइड्स का समृद्ध स्रोत माना गया है।



क्या आप जानते हैं कि-

- शाकाहार का शब्दार्थ है- 'ऐसा आहार जो मनुष्य की योग्यताओ का विकास करे और उसे बलशाली तथा पराक्रम बनाये'।
- 'वेजीटेरियन' शब्द लैटिन भाषा के 'वेजीटस' शब्द से बना है, जिसका अर्थ है— 'स्वस्थ, समग्र, समर्थ, विश्वस्त, ठोस, परिपक्व, ताज़ा'।
- विटामिन 'सी' सिर्फ शाकाहार मे है; वह किसी अन्य आहार मे नहीं है।
- शाकाहार मे कार्बोहाइड्रेट्स होते हैं, जो ऊष्मा के महत्त्वपूर्ण स्रोत तो हैं ही, भोजन को पचाने मे हमारे पाचन-तन्त्र की मदद भी करते हैं। ये आँतो मे सडांद पैदा नहीं होने देते।
- विश्व के शक्तिशाली जीवधारी शाकाहारी हैं; उदाहरणार्थ – घोड़ा, हाथी, ऊँट, बैल, गधा, खच्चर आदि।
- मनुष्य के दांतो की बनावट से यह सिद्ध हो चुका है कि वह बारह लाख वर्ष ईसा पूर्व तक फलाहारी था।
- डॉ. रिचर्ड वुर्तमन के अनुसार मस्तिष्कीय सीरोटोनिन (एक शक्तिशाली रसायन, जो मस्तिष्क की तन्त्र-कोशिकाओ को सक्रिय रखता है) की वृद्धि का अचूक उपाय कार्बोहाइड्रेट-युक्त और कम प्रोटीन वाला आहार है।
- प्रकृति ने दूध-की-शर्करा (लेक्टेव) को पचाने के लिए शाकाहारियो के थूक मे 'टाइलिन' नामक पदार्थ की व्यवस्था की है। यह विशिष्ट पदार्थ मासाहारी जीव-जन्तुओ के थूक मे अनुपस्थित है।
- बाइबिल मे 'अक्षत अन्न की रोटी' को ही 'सपूर्ण आहार' कहा गया है। यह रोटी इतनी पौष्टिक होती है कि इसे जीवन-की-लाठी (स्टाफ-की-लाठी (स्टाफ ऑफ लाइफ) कह कर पुकारा जाता है।
- जितनी जमीन मे उत्पादित चावल से ७५ व्यक्तियो का पेट भरना समव है, उतनी ज़मीन से उत्पन्न गोमास से सिर्फ एक व्यक्ति का पेट भर पाता है।
- शाकाहार किसी भी देश को एक समर्थ/आत्म-निर्भर अर्थ-व्यवस्था उपलब्ध कराने मे समर्थ है।

[illegible]

अब यह सिद्ध हो चुका है कि शाकाहार और अहिंसा दो अलग शब्द नहीं हैं, पर्याय शब्द हैं। शाकाहार एक ऐसी जीवन-शैली है जो किसी भी व्यक्ति या समुदाय को शान्त, संयत, सन्तुलित और सच्चरित्र बना सकती है। बीसवीं शताब्दी का सबसे बड़ा योगदान यह है कि इसने शाकाहार की विशेषताओं को विज्ञान-सम्मत ढंग से प्रस्तुत किया है।

शाकाहार, आज अपनी खूबियों के कारण, पूरे विश्व में लोकप्रिय हुआ है। इसकी सार्थकता और गुणवत्ता को अब अलग से निरूपित करने की आवश्यकता शायद नहीं रही है।

इधर के कुछ वर्षों में शाकाहार पर जो भी पुस्तकें प्रकाश में आयी हैं, उनका रुख प्रायः मांसाहार-विरोधी रहा है, किन्तु शाकाहार १०० तथ्य का उद्देश्य पूरी तरह सकारात्मक है अतः इसमें शाकाहार की विशेषताओं को ही रोशनी में लाने की कोशिश की गयी है।

इस तरह जिस नजरिये से देखें शाकाहार एक चमत्कारिक आहार है, जिसमें जहाँ एक ओर भीषण/असाध्य रोगों से सफलतापूर्वक जूझने की अपूर्व क्षमता है, वहीं दूसरी ओर मनुष्य को एक बेहतर/नीति-संगत नागरिक बनाने का माद्दा भी है।

जब हम इस पर सामाजिकता की दृष्टि से विचार करते हैं, तब देखते हैं कि शाकाहार मनुष्य में एक विशिष्ट रचनात्मक वृत्ति की सृष्टि करता है, वह भाईचारे और मैत्री की भावना को विस्तार देता है। हम खुद देख सकते हैं कि संसार में जितने भी शाकाहारी प्राणी हैं वे सब अपना समाज बना कर जिन्दगी बसर करते हैं, यथा—हाथी, घोड़ा, बन्दर, बैल, गाय, हिरण, ऊँट, खरगोश, भेड़, बकरी आदि, किन्तु शेर, चीते, कुत्ते, बिल्ली आदि अपना समाज नहीं बनाते-चुनते, वे एक-दूसरे को देख भी नहीं सकते। निष्कर्षतः यदि हम चाहते हैं कि देश में भाईचारा विस्तृत हो तो हमें शाकाहार के प्रचार प्रसार के लिए अविलम्ब आगे आना चाहिये।

सौन्दर्य शास्त्र की दृष्टि से भी शाकाहार उपादेय है। वन-उपवन, नदी-पहाड़, हरे-भरे मैदान में बैठ-बैठ कर तो कोई कला-सृजन कर सकता है, किन्तु किसी कत्लखाने में बैठ कर कोई शिल्पकार, चित्रकार या कवि कुछ करना चाहे यह असंभव है। क्या कत्लखाने में कोई सितार-वादन करना या वीणा बजाना — बजा सकेगा? क्या जहाँ खून के पनाले बह रहे हों, प्राणों के लाले पड़े हों वहाँ कोई नृत्य संभव है या वहाँ कोई कोमल कण्ठ स्वर-माधुरी उभार सकेगा? वस्तुतः लालित्य से शाकाहार का ही संबंध है, अन्य किसी आहार का कोई रिश्ता उससे हो नहीं सकता।

यहाँ हम उल्लेख कर सकते हैं कि शाकाहार मितव्ययता-का-अर्थशास्त्र है। शाकाहार से [illegible] कोई नुकसान नहीं है। [illegible] एक पौंड गेहूँ के उत्पादन में जहाँ सिर्फ [illegible] गैलन पानी लगता है वहाँ एक पौंड गोमांस (बीफ) के उत्पादन में ५,२१८ गैलन जल लगता है। क्या यह किसी राष्ट्र की जल-सम्पदा का अपराधिक अपव्यय नहीं है? (देखें-तथ्य १०) इसी प्रकार एक एकड़ जमीन से १६८० पौंड गेहूँ पैदा किया जा सकता है

जबकि इतनी ही जमीन मे मात्र १८२५ पौड गोमास पैदा करना सभव है (देखे-तथ्य ९९)।

जहाँ नैतिकता का सदर्भ है, शाकाहार अहिंसा और शान्ति का प्रतीक और प्रतिपादक है, इसके विपरीत मासाहार स्पष्टत कत्ल, क्रूरता, हिंसा और अशान्ति का सूचक है।

समाजशास्त्र की दृष्टि से जब हम शाकाहार पर दृष्टिपात करते है, तब पता चलता है कि जहाँ भी कत्लखानो की सख्या अधिक है, वहाँ आत्महत्याओ की दर भी अधिक है या बढ गयी है। केरल मे ७१५ अधिकार-प्राप्त कत्लखाने है तथा यहाँ आत्महत्या की दर देश मे सर्वाधिक है अर्थात् प्रतिलाख २७ ३ है, जबकि राष्ट्रीय आँकडा प्रति लाख ९ २ है पजाब मे लायसेंसशुदा ८९ कत्लखाने है। डेराबस्सी कत्लखाना नया खुला है। **हिन्दुस्तान टाइम्स** (नई दिल्ली/ २२ ०८ ९५) की एक खबर के अनुसार वहाँ आत्महत्या की सख्या मे वृद्धि हुई है। इससे तय है कि **शाकाहार तनाव कम करता है और मासाहार विषम/ अशान्त मन स्थिति को जन्म देता है।**

एक उपहासास्पद तथ्य यह भी है कि मनुष्य अपनी आबादी को कम करने के लिए फेमिली प्लानिंग (परिवार-नियोजन) जैसे उपाय अपना रहा है, किन्तु 'वध्य' पशुओ की आबादी बढाने के लिए कृत्रिम गर्भाधान के रास्ते चल रहा है। एक ओर उसका आरोप है कि यदि मासाहार बद हो जाएगा तो पशुओ की आबादी बेतहाशा बढ जाएगी, दूसरी ओर वह पशु-सवर्द्धन (एनीमल हस्बैंड्री) के नाम पर पशुओ की आबादी लगातार बढा रहा है।

जब हम मासाहार के लिए उत्पादित/उपभुक्त पशुओ के आँकडो की समीक्षा करते हैं तब हमारी आँखे खुली-की-खुली रह जाती हैं। वर्ष १९९१ मे सिर्फ अमेरिका ने मासाहार के लिए ६ अरब पशुओ का कत्ल किया था। इस कत्ल मे पौल्ट्री का आँकडा शामिल नही है यदि हम पूरी दुनिया मे हुए पशु-वध का आँकडा प्राप्त करेगे तो यह सख्या ५० गुना अधिक होगी अर्थात् ३०० अरब।

हिंसा की इस भयावह/ व्यवस्थित/ सुसगठित शक्ल को देख कर शाकाहार की भूमिका और अधिक अहम हो जाती है और लगने लगता है कि यदि शाकाहार की ओर लोगो का ध्यान आकृष्ट नही हुआ तो यह दुनिया जीता-जागता दोज़ख बन जाएगी।

- डॉ नेमीचन्द
सपादक 'शाकाहार-क्रान्ति'

इन्दौर ११ सितम्बर १९९५

शाकाहार : १०० तथ्य

'शाक' शब्द संस्कृत की 'शक्' धातु से बना है, जिसका अर्थ है– योग्य होना, समर्थ होना, सहन करना। 'शक्' धातु 'शक्नोति' आदि रूपों में चलती है। इसी से शक्ति, शक्त, शक्तिमान् इत्यादि शब्द बने हैं। 'शाक' शब्द का अर्थ है – बल, पराक्रम, शक्ति, एवं 'शक्त' शब्द के मायने हैं– योग्य, लायक, ताकतवर। इस तरह 'शाकाहार' का वाच्यार्थ हुआ 'ऐसा आहार, जो मनुष्य की योग्यताओं का विकास करे और उसे बलशाली तथा पराक्रमी बनाये'। यह अर्थ आज दिया हुआ नहीं है वरन् शताब्दियों से गंगा-यमुना-सिन्धु-सरस्वती-ब्रह्मपुत्र-ताप्ती-कावेरी के जल में बहता चला आ रहा है।

'वेजीटेरियन' शब्द लैटिन भाषा के 'वेजीटस' शब्द से जन्मा है, जिसका अर्थ है – स्वस्थ, समग्र, समर्थ, विश्वस्त, ठोस, परिपक्व, जीवन्त, ताजा। फ्रांसीसी का 'वेजीटेबिल' शब्द परवर्ती लैटिन के 'वेजीटेबिलिस' शब्द का विकास है, जिसके मायने हैं — 'जीवन-संचारक, अतः जीवन-से-भरपूर'। मूल लैटिन का शब्द 'वेजीटेरे' है, जिसका अर्थ है– 'अनुप्राणित करना, गति देना'। फ्रांसीसी में 'वेजीटेबिल' का अर्थ है 'जीने-में-समर्थ'। वेजीटस (जीवन्त), विजिलेंट (चौकस, सावधान) इत्यादि शब्द भी वेजीटेरियन शब्द से किसी-न-किसी रूप में संबद्ध हैं। इन शब्दों से शाकाहार की विशेषताओं की थाह सहज ही मिल जाती है।

शाकाहार सिर्फ आहार नहीं है, एक सुविकसित चिन्तन/जीवन-पद्धति है। यह एक परिपूर्ण जीवन-शैली (लाइफस्टाइल) है, जो सदियों के अनुभवों के बाद अस्तित्व में आयी है। इस जीवन-पद्धति के सात नियन्त्रक तत्त्व हैं: अहिंसा, करुणा, मानवीयता, सह-अस्तित्व, प्रकृति-से-मैत्री, स्वास्थ्य/स्वच्छता और स्वाधीनता।

जिस जिहाद का परम शब्द शान्ति है, उसका नाम शाकाहार है। शाकाहार का 'शा' शान्ति का परिचायक है प्रतिनिधि है। 'का' कान्ति या क्रान्ति का द्योतक है। शाकाहार का मतलब ही है कि हम जीवन में नयी रोशनी को जन्म दें। उसमें हमेशा रहें। उसे मांजें। उस पर जंग न लगने दें। उसकी चौतरफा देखभाल करें। 'हा' हार्द का प्रतीक है। हार्द का अर्थ



स्नेह और सुकोमलता है। स्नेह परस्पर-प्रीति का परिचायक शब्द है और सुकोमलता, यानी अहिंसा का नुमाइंदा। 'र' प्रतिनिधि है रसा और रक्षा का। रसा धरती का नाम है। जिसमे तमाम रस है, वह रसा है। 'इस रसवन्ती को हम कोई क्षति नही पहुँचायेगे, उसकी हर धडकन की रक्षा करेंगे, उसे सलाम करेंगे' इस/ऐसे शुभ सकल्प का नाम है शाकाहार। इस तरह शाकाहारी जीवन-पद्धति के क ख ग घ हैं— शान्ति, कान्ति, हार्द, और रक्षा।

५. विटामिन 'सी' मात्र शाकाहार मे है, वह किसी अन्य आहार मे अनुपस्थित है। विख्यात चिकित्सक डॉ क्लेनर ने विटामिन 'सी' को अमृत-तुल्य निरूपित किया है। उनका कहना है कि ऑटोमोबाइल्स के इस युग मे विटामिन 'सी' कार्बन मोनोक्साइड-जैसे खतरनाक ज़हर के लिए एक सुदृढ कवच बन सकता है। यह हमारे खून मे

लगातार-सक्रिय-हो-रहे विष से हमारी रक्षा करता है। इसके प्रमुख स्रोत हैं – आंवला, अमरूद, संतरा, मौसम्बी, टमाटर, हरी मिर्च, पालक, फूलगोभी इत्यादि।

शाकाहार में कार्बोहाइड्रेट्स होते हैं, जो ऊष्मा के महत्त्वपूर्ण स्रोत तो है ही, भोजन पचाने में हमारे पाचन-तन्त्र की मदद भी करते हैं। ये आंतो में सड़ांद पैदा नहीं होने देते, यही कारण है कि ज्यादातर शाकाहारी कब्ज की शिकायत नहीं करते। भारत सरकार की हैल्थ बुलेटिन क्र. २३ के अनुसार ये गेहूँ के आटे, बाजरा, ज्वार, जौ, मकई, चावल, मूंग आदि में सर्वाधिक होते है। कार्बोहाइड्रेट्स कैंसर-जैसी जानलेवा बीमारी से आंतो की रक्षा करते है।

हमारे आहार में प्रोटीन की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका है, किन्तु उसे अधिकाधिक पाने की सनक में जहाँ मनुष्य ने अपना स्वास्थ्य खतरे में डाल दिया है, वहीं उसने दूसरे-की-रोटी, और उसके पोषक तत्त्वो पर भी हमला किया है। बहुत कम लोग जानते है कि जब हमारे पाचन-तन्त्र पर प्रोटीन का अधिक बोझ पड़ता है, तब 'डी-रेमीनाइजेशन' की प्रक्रिया-द्वारा शरीर को उसे पचाने या बाहर फेंकने के लिए अतिरिक्त कैलोरियाँ जुटानी पड़ती है। ऐसे में लाभ की जगह नुकसान ही अधिक होता है। प्रोटीन का गणित बहुत आसान और साफ-सुथरा है। प्रत्येक व्यक्ति को अपने वजन के अनुपात में प्रोटीन की मात्रा अपने आहार में समायोजित करनी चाहिये– **वजन एक किलोग्राम, प्रोटीन एक ग्राम।** एक वयस्क को, फिर वह चाहे हल्का-से-हल्का या भारी-से-भारी काम करता हो ५५ ग्राम प्रोटीन प्रतिदिन जरूरी होता है।

विश्व के शक्तिशाली जीवधारी शाकाहारी है, उदाहरणार्थ – घोड़ा, हाथी ऊँट, बैल, गधा, खच्चर आदि। ये मेहनतकश पशु है, जो सदियो से मानव-समाज की सर्वोत्तम सेवा कर रहे है। घोड़ा तो इतना बलशाली है कि मनुष्य ने उसकी शक्ति को मानक मान कर अन्य शक्ति-स्रोतों की क्षमताएँ निर्धारित की है। यह शक्ति-माप हॉर्स-पॉवर (एचपी) के नाम से जाना जाता है।

हमारी धरा पर आज से ३ अरब ५० करोड़ वर्ष पूर्व जीवन की शुरुआत हुई। डायनासोरों का पुरखा [illegible] जो आज से १० करोड़ वर्ष पूर्व इस धरा पर अस्तित्व में था शुद्ध शाकाहारी (हर्बीवोर) था, किन्तु कालान्तर में एक प्रबल प्राकृतिक [illegible] के कारण आज से ८० करोड़



वर्ष पूर्व उसकी प्रजाति लुप्त हो गयी। इस भीमकाय जीवधारी के जीवाश्म उपलब्ध हैं।

१०. समाजशास्त्रियो का कथन है कि अहिंसा-की-अनुभूति उतनी ही प्राचीन है जितनी नदियाँ, पहाड, सघन वन, झरने, घाटियाँ, तलहटियाँ और मनुष्य के दाँतो-की-चबाने-की-प्रथम-पर्त। मनुष्य के दाँतो की सतह इस तथ्य की सुबूत है कि वह सदा से अहिंसा मे आस्था रखता आया है, हिंसा-रक्तपात मे उसका कोई विश्वास नही रहा है। जॉन हॉपकिन्स यूनिवर्सिटी के नृतत्त्वशास्त्री डॉ आलन वाकर का निष्कर्ष है कि मनुष्य के पूर्वज मासाहारी नही थे। वे सर्वभक्षी भी नही थे। वस्तुत वे उन फलो से अपना उदर-भरण करते थे, जो स्वयम्भू थे। फसलो का आविष्कार तब नही हुआ था। डॉ वाकर की खोज़ अत्यन्त विस्तृत और खुर्दबीनी विश्लेषण पर आधारित है। उन्होने मनुष्य की दन्त-रचना का एक करोड बीस लाख वर्षो के काल-पटल पर विस्तृत/सूक्ष्म अन्वेषण किया और निष्कर्ष लिया कि वह बारह लाख (१२,००,०००) वर्ष ईसा पूर्व तक फलाहारी था।

११. इसे चमत्कार कहा जाए या वास्तविकता, कि शाकाहार अमोघ/अटूट शक्ति का स्रोत है। ताइवान की एक विश्वसनीय खबर के अनुसार वहाँ के काओसियुग जिले (काउटी) के शेशुइ ग्राम मे साचिया कुगचेग मदिर के

पीठ की गुफा मे बौद्ध भिक्षु पु चाओ का ग्यारह वर्ष पुराना शव आज भी ज्यो-का-त्यो सुरक्षित है। उसकी मांस-पेशियो मे यथापूर्व लोच है और उनसे दर्शनार्थी हाथ मिला सकते है। शव मे न कोई दुर्गन्ध है और न कोई सडाँध। श्री चाओ ९३ वर्ष जिये। उनके शिष्यो का कथन है कि उनके केश अभी भी बढ रहे है। उनके शरीर पर कोई लेप नही किया गया है। वे बौद्ध जीवन-शैली के सर्वोत्तम अनुगामी थे। उनके बारे मे प्रमुख तथ्य यह है कि वे आजीवन पेडों-की-पत्तियो तथा वर्षा-के-जल पर रहे। यही उनका आहार-पानी था। वे कट्टर शाकाहारी थे।

सपूर्ण योग-विद्या की नीव अहिंसा है। महर्षि पतजलि ने 'योग-दर्शन' मे ५ यम और ५ नियम दिये है। ये है अहिसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह (यम), शौच, सतोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर-प्रणिधान। (नियम)। योग मे अहिंसा सर्वोपरि है, उसके बगैर योगाभ्यास असभव है। ध्यान रहे अहिंसा और शाकाहार पर्याय शब्द हैं।

'शाकाहारियो का अच्छा स्वास्थ्य उनके आहार का परिणाम है'- यह विचार बर्लिन वेजीटेरियन स्टडी (अध्ययन) की जाँच-पडताल का है। जर्मन स्वास्थ्य दफ्तर के सामाजिक औषध और महामारी विज्ञान सस्थान (इन्स्टीट्यूट ऑफ सोशल मेडिसिन एड एपीडीमिओलॉजी) ने १९८५ मे उपर्युक्त अध्ययन शुरू किया था। अध्ययन के अनुसार शाकाहारियो का सतुलित स्वास्थ्य उनके मास न खाने और मोटे रेशे वाले तथा कम कोलेस्टेरोल वाले अन्न-उत्पादनो के लेने का परिणाम है। (जर्मन समाचार, [illegible] १९९१)।

मनुष्य की आँते शाकाहार के लिए है। उनकी सरचना मनुष्य की बौद्धिक और भौतिक बनावट की सगति मे हुई है। ये आँते आगे-पीछे/टेढे-मेढे कई मोड-मरोड लेती है। ये कोलेस्टेरोल और वसा को नियन्त्रित रखने मे असमर्थ है। इन दोनो का अतिभोग किसी भी गभीर रोग का कारण बन सकता है। अधिक लम्बाई के कारण इन्हे खाद्य पदार्थ को आगे ठेलने के लिए तन्तुओं (रेशो/फाइबर्स) की जरूरत होती है। शाकाहार रेशा-युक्त आहार है, अतः मनुष्य-की-आँतो के सर्वथा अनुरूप है।

इस्लाम ने मास खाने को ही नहीं वरन् हिंसा को भी अच्छा नही माना है। हज के सफर में हज करने के बारे में जो विधान है, वह खासतौर से गौर करने लायक है। जब कोई व्यक्ति हज करने जाता है तब वह इहराम (सिर पर [illegible]) बाँध लेता है और जब तक हज सपन्न नही हो

जाती वह उसे बाँधे रहता है। इहराम की स्थिति मे हज करने वाले को पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करना होता है। इस स्थिति मे न तो वह किसी पशु-पक्षी को मार सकता है और न ही किसी जीवधारी पर ढेले से वार कर सकता है, यहाँ तक कि वह घास भी नही नोच सकता। वह किसी हरे-भरे वृक्ष की टहनी/पत्ती भी नही तोड सकता। इस तरह हज करते वक्त अहिंसा के परिपूर्ण पालन का स्पष्ट विधान है।

१६. इस्लाम के पवित्र तीर्थ मक्का-स्थित कस्बे के चारो ओर कई किलोमीटर के घेरे मे किसी भी पशु-पक्षी के कत्ल की मनाही है तथा हज-की-अवधि मे हज करने वाले के लिए मद्य-मास का सर्वथा त्याग भी जरूरी है। इस्लाम मे आध्यात्मिक साधना के दौरान मासाहार पूरी तरह वर्जित है। त्याग की इस स्थिति को तर्के हैवानात (जानवर से प्राप्त वस्तु का त्याग) कहा गया है।

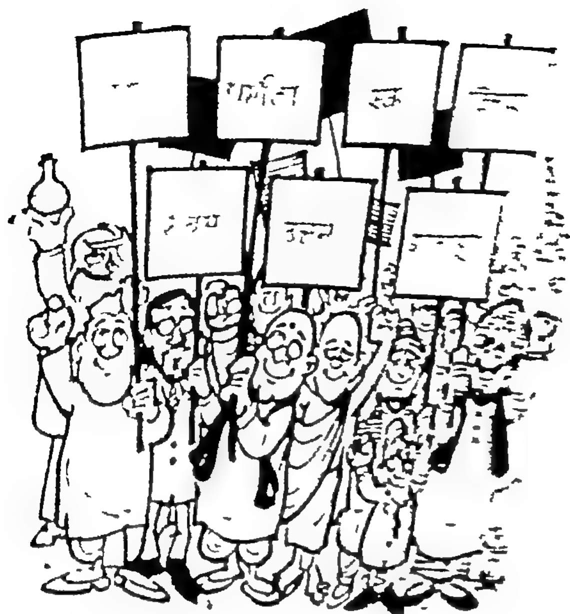
१७. यूनानी दार्शनिक और गणितज्ञ पायथागॉरस (५८२-५०० ई पू) के शिष्य रोमन कवि सैनेका जब शाकाहारी बने तब उन्हे सुखद और आश्चर्यजनक तजुर्बा यह हुआ कि उनका मन पहले से अधिक स्वस्थ, शान्त, सावधान और समर्थ हो गया है।

१८ महान् वैज्ञानिक अल्बर्ट आइन्स्टाइन (१८७९-१९५५) विशुद्ध शाकाहारी थे। वे कहा करते थे कि शाकाहार का हमारी प्रकृति (फितरत) पर गहरा प्रभाव पडता है। यदि पूरी दुनिया शाकाहार को अपना ले तो मनुष्य का भाग्य पलट सकता है।

१९. जॉर्ज बनार्ड शॉ (१८५९-१९५०) एक बार बहुत बीमार पड गये। चिकित्सको ने सलाह दी कि वे अण्डा खाये और मास-का-शोरबा पिये अन्यथा वे जल्दी ही मर जाएँगे। शॉ पूरी तरह शाकाहारी थे। उन्होने राय मानने से इकार कर दिया।

२०. पश्चिमी दुनिया के सर्वप्रथम शाकाहारी ल्योनार्दो-दा-विन्सी (१४५२-१५१९, इटालवी कलाकार एव वैज्ञानिक, शिल्पी और शरीर-विज्ञानी, चित्रकार तथा कवि, दार्शनिक एव गणितज्ञ) पिंजरो मे कैद पक्षियो को खरीद कर पिंजरे खोल दिया करते थे। वे कहा करते थे कि यदि मनुष्य स्वाधीन रहना चाहता है तो फिर वह पशु-पक्षियो को बदी क्यो बनाता है?

२१. तमाम सूफी सन्त शाकाहारी थे। वे घूम-घूम कर शाकाहार का प्रचार-प्रसार करते थे। सेवन्थ डे एडवटिस्ट्स (ईसाइयो का एक वर्ग)



शाकाहारी है। सिक्ख-गुरुद्वारों में लंगर [illegible] नन

पाती, फलत कब्ज हो जाता है। कब्ज को रोगो की खान कहा गया है। ताजा ऑकडो के अनुसार आस्ट्रेलिया मे प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष १३० किलोग्राम गोमास (बीफ) की खपत है, अत सहज ही कैसर-पीडितो की सख्या अधिक है। आहार-मे-तन्तुओ की अनुपस्थिति मे एपीडिसाइटीज़ तथा हेमोरॉइड्स जैसी बीमारियाँ सामान्यत हो जाती हैं।

२५. दिल्ली के सुप्रसिद्ध चिकित्सक प्रो एन एस पी वर्मा के अनुसार शाक-सब्जियो के रेशे मधुमेह (डायबीटिज) से बचाव के लिए उपयोगी हैं। मधुमेह से अप्रभावित रहने के लिए डॉ वर्मा की सलाह है कि अधिक शाक-सब्जियाँ तथा बगैर पॉलिश के अनाज खाने चाहिये। सपूर्ण चयापचय की दृष्टि से मधुमेह अधिक कैलोरियो से होने वाला रोग है न कि अधिक कार्बोहाइड्रेट्स से। मोटापा अग्न्याशय (पैक्रियाज़) से नही बल्कि यकृत (लिवर) की निष्क्रियता से पनपने वाली विकृति है।

२६. **शाकाहार विषमुक्त आहार है।** मासाहार मासाहारियो के पेट मे नाना प्रकार के ज़हर व्यर्थ ही ठूँस देता है। जब किसी पशु का कत्ल होता है और जब वह मौत-से-जूझने के भीषण क्षणो से गुजरता है तब उसमे एपीनेफ्रिन (एड्रीनेलिन), नॉर एपीनेफ्रिन, स्टेरॉइड्स तथा अन्य रसायन, जो प्राकृतिक विष है, उत्पन्न हो जाते है। ऐसे पशुओ का मास किसी भी तरह खतरे से खाली नही है।

२७ शाकाहार के उत्पादन मे जितनी ऊर्जा खर्च होती है, उसके सही और सतुलित उपभोग मे-से उससे कई गुना ऊर्जा मिल जाती है। मासाहार मे यह गणित उलट जाता है। उसके उत्पादन मे जितनी ऊर्जा लगती है, अनुपातत उमसे बहुत कम लौटती है। ध्यान रहे **शाकाहार धनात्मक और मांसाहार ऋणात्मक आहार है।**

२८ हिसाब लगाया गया है कि यदि अमेरिका-वासी मास का उपभोग १० प्रतिशत कम कर दे अर्थात् शाकाहार का इतना छोटा-मा प्रतिशत अपने आहार मे जोड ले तो दुनिया के १० करोड लोगो को भोजन मिल सकता है।

२९. द न्यू बैमिक फूड ग्रुप्स-१९९१ (फिजीशियन्स कमिटी फॉर रिस्पोन्सिबल मेडीमिन) ने निम्नाकित प्राथमिकताओ के साथ इस आहार-समुदाय का अनुमोदन किया है- १ मावुत अनाज, २ साग-सब्जी, ३ फलियाँ ४ फल।

३० माबित हो चुका है कि शाकाहार के उत्पादन मे किसी भी प्रकार की



कोई फिजूलखर्ची नही है, जबकि मासाहार के उत्पादन मे इतना अपव्यय होता है कि विकसित देशो को मास मुहैया कराने मे कई विकासशील देश भुखमरी के शिकार होने लगे है, अत यह आरोप सर्वथा झूठ है कि यदि दुनिया के तमाम मासाहारी शाकाहार करने लगे तो शाकाहारी भूखो मरने लगेगे। गवाह है ये आंकडे—

एक पौंड मासाहार के उत्पादन मे सामने अंकित पौंड अनाज का [illegible] लग जाता है

गोमांस	एक पौंड	सोलह पौंड	(अनाज या सोयाबीन)
सुअर का मांस	एक पौंड	छह पौंड	(अनाज या सोयाबीन)
टर्की का मांस	एक पौंड	चार पौंड	(अनाज या सोयाबीन)
मुर्गी अण्डे	एक पौंड	तीन पौंड	(अनाज या सोयाबीन)

- [illegible] का अभिमत है कि यदि अमरीकी १० प्रतिशत मासाहार [illegible] करने लगे तो [illegible] प्रतिशत, ५० प्रतिशत अधिक करने लगे तो [illegible] प्रतिशत और यदि शत-प्रतिशत शाकाहार करने लगे तो वे [illegible] और ९० प्रतिशत [illegible] हो सकते है।
- [illegible] ने [illegible] को बचाने के लिए शाकाहारियो के दूध मे [illegible] पदार्थ की व्यवस्था की है। यह विशिष्ट पदार्थ [illegible] के दूध मे अनुपस्थित रहता है। मासाहारी

प्राणियो के दूध मे 'लेक्टेव' (दुग्ध-शर्करा) भी नही होता, जबकि शाकाहारियो के दूध मे यह पाया जाता है।

३३. वैज्ञानिको ने अब इस तथ्य को पूरी तरह स्वीकार कर लिया है कि हम जो कुछ खाते है वह 'सीरोटोनिन' (एक शक्तिशाली रसायन, जो मस्तिष्क की तन्त्र-कोशिकाओ को सक्रिय रखता है) के माध्यम से प्रत्यक्ष और लगभग तुरन्त हमारे मस्तिष्क, हमारी निद्रा, यौन वृत्ति, भूख, तथा अन्य प्रकार के व्यवहार को नियन्त्रित करता है। डॉ रिचर्ड वुर्तमन के अनुसार मस्तिष्कीय **सीरोटोनिन** की वृद्धि का अचूक उपाय उच्च कार्बोहाइड्रेटयुक्त और कम प्रोटीन वाला आहार है।

३४. कर्नल कर्कब्राइड ने अपनी बहुचर्चित पुस्तक **हमारा भोजन और विश्व-शान्ति** मे लिखा है कि 'शाकाहारी पशु-पक्षी स्वभाव से ही जीवन के कल्याणकारी पक्ष की ओर प्रवृत्त पाये जाते है। क्षमा, सहिष्णुता, परदु ख-मोचन आदि गुण उनमे अनायास ही विकसित रहते है। मैने तो देखा है कि हृदय-के-वैभव मे कभी-कभी तो ये मनुष्यो को भी पराजित करते है। मैने दूध और अनाज पर बाघ पाले है और पाया है कि मासाहार-के-बगैर भी ये वर्षो जीवित रहे और उनके स्वभाव पूरे बदल गये, लेकिन मासाहारी पालतू बाघो की प्रवृत्तियो को मै हजार प्रयत्न करने पर भी नही बदल सका। वे मेरी ट्रेनिग के बावजूद नव्वे प्रतिशत हिसक एव बर्बर ही रहे।'

३५. वनस्पति-जनित आहार मे दीर्घजीविता-के-तत्त्व विद्यमान है। वृक्ष स्वय इसके जीते-जागते उदाहरण है। ऐसे अनेक वृक्ष है, जो हजारो वर्ष से ज्यो-के-त्यो खडे है। कुरुक्षेत्र (हरियाणा) का ज्योतिसर-स्थित वटवृक्ष लगभग पॉच हजार वर्षो से यथावत है। आस्ट्रेलिया के क्वीन्सलैड नगर मे ससार का सबसे पुराना वृक्ष है। 'मेक्रोजामिया' जाति का यह वृक्ष है तो सिर्फ २० फुट ऊँचा, परन्तु इसकी उम्र बारह हजार साल है। इस वृक्ष ने मनुष्यो को जगली जीव के रूप मे भी देखा है और सभ्य नागरिक के रूप मे भी। मनुष्य की सैकडो पीढियो ने इस वृक्ष के नीचे विश्राम किया है और पता नही, भविष्य मे कितनी सदियो तक यह वृक्ष अपने पास आने वालो को इसी प्रकार छाया प्रदान करता रहेगा।

३६. सुप्रसिद्ध पॉप गायिका मेडोना शाकाहारी है। इसी तरह माइकैल जैक्सन, तथा इसी पक्ति मे है विश्व के दमखमी, मद्धम और खूब

[illegible] खिलाड़ी, जैसे मार्टिना नवरातिलोवा। ये सब किसी मजहब या जाति की वजह से शाकाहारी नहीं है अपितु इनका विश्वास है कि शाकाहार जीवन को स्वस्थ और बेहतर गुणवत्ता प्रदान करता है, वह जीवन के सभी रूपों के प्रति सम्मान-का-भाव जगाता है, तथा वह अमीर देशों द्वारा गरीब मुल्कों के शोषण को नकारता है।

यह धारणा, कि शाकाहार मे आवश्यक अमीनो एसिड्स नहीं है, अत मांसाहार जरूरी है, अब पूर्णत झूठी साबित हो चुकी है। इस दृष्टि से नारियल-का-पानी सर्वोत्तम सिद्ध हुआ है। इसमे आर्जिनिन, हिस्टीडिन, लायसिन, ट्रिप्टोफिन, फेनीलेलेनिन, टायरोसिन, मेथियोनिन, सिस्टिन, थ्रियोनिन, ल्यूसिन, आइसोल्यूसिन और वेलिन अमीनो सहज और समुचित मात्रा मे उपलब्ध है।

ब्रिटेन के ५० प्रतिशत परिष्कृत युवा न केवल शाकाहारी है, वरन् वे शाकाहार को अनिवार्य भी मानते है। सर्वेक्षणों की भविष्यवाणी है कि



मुर्दा आहार (डेड फूड) की श्रेणी में आता है, अतः दुनिया-भर के लोगों ने अब इस सचाई को मानना शुरू कर दिया है कि जो जितना अधिक मांसाहार करता है, वह उतना अधिक हृदयाघात (हार्ट-अटैक), अम्लता (एसिडिटी), अतितनाव (हायपर-टेंशन) और यहाँ तक कि कैंसर के नजदीक भी होता जाता है। विश्व-भर से प्राप्त आँकड़ों से अब यह बिलकुल स्पष्ट हो गया है कि भलीभाँति संतुलित शाकाहार ही स्वास्थ्यप्रद जीवन का एकमात्र उपाय है।

मांसाहार के उत्पादन में जल की कम-से-कम खपत होती है। उदाहरण के लिए प्रस्तुत हैं कैलीफोर्निया के ये आँकड़े–

एक पौंड	गैलन/जल	एक पौंड	गैलन/जल
टमाटर	२३	अंगूर	७०
आलू	२४	दूध	१३०
गेहूँ	२५	अण्डे	५४४
गाजर	३३	चूजे	८१५
सेबफल	८९	सूअर-का-मांस	१६३०
नारंगी	६५	गोमांस	५२१४

उल्लेखनीय है कि यदि कोई व्यक्ति हफ्ते में पाँच बार ५-५ मिनिट फव्वारा-स्नान करे तो प्रतिदिन २० गैलन जल के हिसाब से हफ्ते-भर में १०० गैलन जल का उपयोग करेगा अर्थात् पूरे वर्ष में ५,२०० गैलन जल। इसका मतलब यह हुआ कि एक पौंड गोमांस के उत्पादन में जितना पानी लगता है उससे कम में एक व्यक्ति आराम से पूरे वर्ष स्नान कर सकता है।

[illegible] यूनिवर्सिटी (अमेरिका) स्थित स्वास्थ्य अनुसंधान केन्द्र के [illegible] डॉ. [illegible] ने कहा है कि ताजा अध्ययन इस बात का [illegible] देते हैं कि बादाम, काजू, पिस्ता, अखरोट आदि में बीटा कैरोटिन, विटामिन ई और विरोधी ऑक्सीकर (एंटी-ऑक्सीडेंट्स) होते हैं जो कैंसर से रक्षा कर सकते हैं।

[illegible] 'ओल्डवेज प्रिजर्वेशन एंड एक्सचेंज ट्रस्ट', जो आहार, [illegible] और कृषि की सांस्कृतिक परम्पराओं की रक्षा और उनके सार्वभौम [illegible] के लिए समर्पित है, ने एक नये भूमध्यसागरीय आहार [illegible] का प्रतिपादन किया है, जिसे भूमध्यसागरीय आहार [illegible] नाम दिया गया है। [illegible] है– [illegible] की [illegible]

(नट्स), अच्छा स्वास्थ्य, भूमध्यसागरीय आहार। उक्त आहार मे गिरियो के पोषण-सबन्धी लाभो पर जोर दिया गया है।

४८. रेस्त्राँ एड होटल गाइड्स (हैस-नीत्श-वर्लाग, वर्वान्तर स्ट्रीट, ११२ डी-५२५२५, वाल्डफ्यूक्ट) ने 'यूरोपियन वेजीटेरियन गाइड' प्रकाशित की है। जिसमे १८ यूरोपीय देशो के २,००० रेस्त्राँ के त्रिभाषिक विवरण दिये गये है।

४९. एक दशक पूर्व नीदरलैड की १ ५ प्रतिशत आबादी शाकाहारी थी, जब कि आज वहाँ ५ प्रतिशत आबादी शाकाहारी है, अर्थात् पहले १,४६,८९,००० की कुल जनसख्या मे मे २,२०,३३५ लोग शाकाहार करते थे, अब ७,३४,४५० लोग शाकाहारी है। नीदरलैड मे ईसाई धर्म प्रचलित है।

५० गेलप पोल अनुमान के अनुसार यू के (यूनाइटेड किंगडम) मे हर हफ्ते ३ हजार लोग शाकाहारी बन जाते है। यह सख्या उन २५ लाख लोगो के अतिरिक्त है, जो शाकाहारी है और यू के की कुल जनसख्या (५,६६,४८,०००) के ४ प्रतिशत है, अर्थात् यू के मे २२ लाख ६५ हजार ९२० लोग शाकाहारी है।

५१ ७३ देश विश्व शाकाहार काग्रेस (वर्ल्ड वेजीटेरियन काग्रेस) के सदस्य है। रूस ने नवीनतम सदस्यता ग्रहण की है।

५२ पूर्व जैन मुनि श्री चित्रभानु द्वारा सचालित न्यूयॉर्क-स्थित 'अन्तर्राष्ट्रीय जैन ध्यान केन्द्र' (जैन मेडीटेशन इटरनेशनल सेटर) के आज मे २१ वर्ष पूर्व सिर्फ ३५ सदस्य थे। आज यह सख्या २५,००० है। ये सब शाकाहारी है। सयुक्त राज्य अमेरिका (यू एस ए) मे डेढ करोड शाकाहारी है। उक्त आँकडा यू एस ए की कुल जनसख्या (२४,९१,००,०००) का ६ २ प्रतिशत है।

५३ यू के मे शाकाहारियो की सख्या लगातार बढ रही है, फलस्वरूप उनके मार्गदर्शन के लिए निर्देशिकाएँ (गाइड्स) निकालना जरूरी हुआ है। लन्दन-स्थित शाकाहारी भोजनालयो/उपाहार-गृहो की एक सपूर्ण जेबी गाइड प्रकाशित हुई है। द क्रूएल्टी-फ्री गाइड टू लन्दन पुस्तिका मे २५० जगहो, जिनमे १३० रेस्त्राँ है, का परिचय दिया गया है। पुस्तक लन्दन के पुस्तक-विक्रेताओ मे ४.५० पौड (लगभग २५० रु.) मे उपलब्ध है। डाक-द्वारा इसे 'क्रूएल्टी-फ्री लिविंग, १२६ चर्च फील्ड रोड, लन्दन डब्ल्यू ३६ बीएस' से प्राप्त किया जा सकता है।



५४ शाकाहार के प्रभाव और विस्तार को ध्यान मे रख कर अब बर्जर किंग (फास्ट फूड चैन) भी 'वेजीटेरियन बर्जर' बनाने लगा है। पिज्झा हट्स को भी शाकाहारी पनीर (रेनेट-मुक्त चीज़) बनाने पर विवश होना पडा है। अब वह 'शाकाहारी पिज्झा' बनाता है।

५५ जीनेसिस (१ २९) मे परमात्मा ने कहा है कि 'देखो, मैंने पृथ्वी पर तुम्हे ऐसी शाक-सब्जियाँ दी हैं, जो बीज धारण करती हैं। प्रत्येक वृक्ष, एक बीज उत्पन्न करने वाले वृक्ष की परिणति है। यही मनुष्य का आहार है।'

५६ 'द कसेप्ट ऑफ वेजीटेरियनिज्म' (गोस्पेल, ओ ओ ओबु, पृ ३-४) मे कहा गया है कि ऐसा कभी नही हुआ कि परमात्मा ने मनुष्य को पक्षियो, पशुओ अथवा टिड्डो को मारने और खाने का निर्देश दिया हो। परमात्मा का आदर्श वाक्य है- **जियो और जीने दो**। केचुओ की अपनी दुनिया है, पक्षियो की अपनी। परमात्मा नही कहता कि तुम उनसे टकराओ। स्पष्ट कहा है कि वनस्पतियो के तमाम फल/बीज तुम्हारे आहार होगे? क्या कभी ऐमा हुआ है कि तुम फल/बीजो पर निर्भर रहे हो और तुम्हे तृप्ति-बोध न हुआ हो?

५७. आश्चर्यजनक है कि क्रूरता-मुक्त जीवन-शैली विस्फोटक गति से विकास की ओर है। गत दस वर्षों मे यूनाइटेड किंगडम (यू के) के २५ प्रतिशत कसाइयो ने अपना काम-धन्धा बद कर दिया है। लगभग २,०० ब्रिटेनवासी हर हफ्ते शाकाहारी बन रहे है। २ करोड ४० लाख लोगो ने मास खाना कम कर दिया है।

५८. ब्रिटेन मे शाकाहार अब एक महान् सामाजिक क्रान्ति के रूप मे उभर कर सामने आ गया है। सिर्फ लन्दन मे १०० से अधिक शाकाहारी रेस्त्रॉं है तथा ब्रिटेन के हर स्कूल मे शाकाहारी भोजन को प्रवेश मिल गया है।

५९. ब्रिटेन मे शुद्ध शाकाहारियो की सख्या उत्तरोत्तर बढ रही है। आज से ५० साल पहले वीगनो (शुद्ध शाकाहारियो) की सख्या लगभग नगण्य थी, किन्तु आज सिर्फ ब्रिटेन मे एक लाख अस्सी हजार वीगन हैं तथा ३० लाख से अधिक शाकाहारी है।

६० वीगन जीवन-शैली मे दूध-शहद/ऊन-रेशम आदि के लिए कोई जगह नही है। इन्हे पशु-उत्पाद माना जाता है। वीगन-वर्ग दूध की जगह

(प्लाट-मिल्क) का उपयोग करता है। उसमे सोया दूध और अण्डा-मुक्त 'प्लामिल मायोनीज' काफी लोकप्रिय हैं।

६१ शाकाहार एक अहिसामूलक, क्रूरता-मुक्त जीवन-पद्धति है, अत' 'क्रूरता-मुक्त' होने का मतलब है ऐसे खाद्य, पेय, पदार्थ तथा पेशो की खोज जिनमे स्वाद, फैशन, अनुसधान या अन्य कार्यों मे पशु एव जीवधारियो का शोषण नही होता, उनके साथ क्रूर व्यवहार नही किया जाता, तथा उन्हे किमी भी कारण किसी तरह की यातना नही दी जाती।



६२ शाकाहार की सबसे बडी विशेषता है उसमे सश्लिष्ट (कॉम्प्लेक्स) कार्बोहाइड्रेट्स का होना। रसायन-शास्त्रियो के शब्दो मे कॉम्प्लेक्स कार्बोहाइड्रेट्स वे है, जिनमे अनेक शर्कराओ (सुगर्स) के अणु (मॉलीक्यूल्स) परस्पर अनुबद्ध रहते हैं। अनाज, फलियाँ और साग-सब्जियाँ सश्लिष्ट कार्बोहाइड्रेट्स से भरपूर होती हैं। सचाई यह है कि माम (चूजे तथा मछली सहित), दुग्ध-उत्पाद, और अण्डो से कॉम्प्लेक्स कार्बोहाइड्रेट्स बिल्कुल नही होते।

६३. **फूड फॉर लाइफ** के सुप्रसिद्ध लेखक डॉ नील बर्नार्ड का कथन है कि एक औसतन शाकाहारी का वजन एक औसतन मासाहारी की तुलना मे काफी कम होता है, अत मोटापे के स्थायी और अचूक नियन्त्रण के लिए सस्ता, सहज और सादा उपाय शाकाहार ही है।

६४ नयी खोजो के अनुसार मासाहारियो-के-खून मे शाकाहारियो-के-खून-की अपेक्षा मूत्राम्ल का स्तर (यूरिक लेवल) उच्चतर होता है। उनके रक्त मे असामान्य लिपिड्स (वसीय) होते है, विशेषत उच्चतर कोलेस्टेरोल और टायग्लिसेराइड्स। पूना अस्पताल (पुणे, महाराष्ट्र) ने अपने रक्त-अधिकोष (ब्लड-बैक) मे 'शाकाहारी ब्लड' और 'गैर-शाकाहारी ब्लड' अलग-अलग रखना शुरू कर दिया है। अन्य बैके भी इस तरह के पार्थक्य पर गभीरतापूर्वक विचार कर रही है।



६५. द हीरेटिक्स फीस्ट (अपधर्मी आहार) के मशहूर लेखक कॉलिन स्पेसर ने लिखा है कि समस्त शाकाहारी जीवन-शैलियो की मान्यता है कि मासाहार आत्मोत्थान के मार्ग मे सबसे बडी बाधा है। आत्म-विकास की दृष्टि से शाकाहार ही निर्विघ्न और उपकारक है।

६ वे लोग जो इस तथ्य मे भरोसा रखते है कि ससार के समस्त प्राणियो मे आत्मा अवस्थित है, वे यह भी मानते है कि उनका सम्मान किया जाना चाहिये। यदि पुनर्जन्म कही है तो निश्चय ही यह सभव है कि जिसे मामाहार के लिए मारा जा रहा है वह जीव हमारा ही कोई पुरखा कभी रहा हो। इस तरह मासाहार अध्यात्मवादियो के लिए बुनियाद मे ही वर्जित आहार है।

७ क्रूरता-मुक्त लन्दन-निर्देशिका (क्रूएल्टी फ्री गाइड टू लन्दन) के पृष्ठ ३७ पर एक आदर्श शाकाहारी की विशेषताओ का सचित्र उल्लेख हुआ है, ये हैं- १.बगैर चमडे का ब्रीफकेस, २.बगैर चमडे के जूते, ३.सुन्दर सूती वस्त्र



सूट), ४.केले(पाथेय), ५ पशुओ पर जिनका परीक्षण नहीं हुआ है ऐसे न्धहर (डिओडेरेट्स)। इसी पुस्तक के १० वे पृष्ठ पर अंकित है- १ शान्त

मन, २ क्रूरता-मूक्त शृगार-प्रसाधन, ३ सुखद सूती परिधान, ४ बार-बार काम मे लाया जा सकने वाला झोला, ५ बगैर चमडे के जूते (नॉन-लेदर शूज)।

६८. किसी भी शाकाहारी को रोओ (फर्स) से बनी वस्तुओ का उपयोग नही करना चाहिये। पूरी दुनिया मे रोएँदार चमडे के लिए १९,०००,००० मिंक प्रतिवर्ष मार डाले जाते है।

६९. वीगन (शुद्ध शाकाहारी) जीवन-शैली को एक वाक्य मे परिभाषित करते हुए **क्रूएल्टी फ्री गाइड टू लन्दन** के सपादक स्लेक्स बुर्क ने कहा है कि एक शाकाहारी न तो किसी जीव-जन्तु के किसी अन्तर्वर्ती (भीतरी) भाग को खाता है और न ही उसके किसी बाहरी भाग को ओढता-पहिनता है।

७०. दुनिया की सबसे ज्यादा फैशनपरस्त मानी जाने वाली पत्रिका 'हार्पर्स' और 'क्वीन' ने ब्रिटेन के शाकाहारियो पर कई महत्त्वपूर्ण लेख प्रकाशित किये है। इनके अनुसार भविष्य मे मासाहारियो का सामाजिक बहिष्कार ठीक उसी तरह होने वाला है, जिस तरह आज धूम्रपान करने वालो का हो रहा है।

७१. पोषण-विज्ञानियो ने पता लगाया है कि बीटा केरोटिन, जो गाजर, सतरे और टमाटर मे सहज उपलब्ध है, कैसर से भलीभॉति जूझ सकता है। बीटा केरोटिन की यह विशेषता है कि वह विटामिन 'सी' और 'ई' से मिल कर शरीर के भीतर स्वय को विटामिन 'ए' मे परिवर्तित कर लेता है। विटामिन 'ए' को कैसर और हृदय–रोगो का सभाव्य प्रतिरोधक (पोटेशियल फाइटर) माना गया है।

७२. सच्चाई यह है कि आज दुनिया मे इतना अनाज है कि वह सुख से जिन्दा रह सकती है बशर्ते अन्न का सुव्यवस्थित/न्यायपूर्ण वितरण हो। यह धारणा गलत है कि कुपोषण का कारण गरीबी है, खयाल रहे, गरीबी नही बल्कि असली कारण छुतहा बीमारियाँ हैं। विकासशील देशो मे प्रतिदिन ८,००० बच्चे निर्जलीकरण (डीहाइड्रेशन) से मर जाते है, जिन्हे सहज ही नमक-शक्कर के सतुलित घोल से बचाया जा सकता है। सर्वविदित है कि **मांसाहार निर्जलीकरण की दवा नहीं है; शाकाहार है।** एक तो वह इसे होने ही नही देगा, दूसरे इत्तफाकन यदि हो भी गया तो वह उसकी चिकित्सा मे समर्थ/अचूक है।

७३. ससार के सभी प्राणियो मे उत्कट जिजीविषा (जीने-की-इच्छा) पायी जाती है। कोई जीवधारी-यहाँ तक वायरस (विषाणु) और बैक्टीरियम (जीवाणु) भी अपने ढग से जीना चाहते हैं। 'जियो और जीने दो' मानव-समाज की सर्वोत्तम उपलब्धि है, इसीलिए आधुनिक शाकाहारियो ने 'कोपलो'/'दुर्वांकुरो' को अपना प्रतीक चिह्न चुना है। आज यह जिजीविषा का विश्व-मान्य प्रतीक है, जो मानवीय जीवन-शैली का यह अमर सदेश देता है कि **वनस्पतियाँ पौष्टिकता की सर्वश्रेष्ठ स्रोत हैं।**



७४ आज विश्व की एक तिहाई आबादी भुखमरी के भयानक शिकजे मे है। ध्यान रहे, हमारा उपग्रह सपूर्ण विश्व का पेट भरने मे समर्थ है। हम प्रोटीन-समृद्ध वानस्पतिक खाद्यो को बचाये, उन्हे बर्बाद न करे। इन्हे हम पशुओ को खिलाने की जगह मनुष्यो को उपलब्ध कराये। शायद हम यह नही जानते कि पशुओ मे-से गुजर कर मास की शक्ल मे जो प्रोटीन हम तक पहुँच

उसका कितना बडा भाग बर्बाद हो जाता है। प्रोटीन का सीधा उपभोग विश्व को आर्थिक बर्बादियो से बचा सकता है।

७५ अब यह एक स्थापित तथ्य है कि वनस्पतियाँ एक सपूर्ण पोषण अर्थात् प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट्‌स, वसा, विटामिन तथा खनिज उपलब्ध करा सकती है, अत हमे मैदा, पॉलिश-किये-हुए दाल-चावल तथा शक्कर के स्थान पर चापड-युक्त आटा, बगैर पॉलिश-के-दाल-चावल तथा गुड का उपयोग करना चाहिये।

७६ 'डॉक्टर' के चिकित्सा-सबन्धी सपादक श्री डेविड पोटर्टन ने 'नर्सिग टाइम्स' की 'पूर्ति' (३० मार्च १९७८) मे कहा है कि मास को आँतो से गुजरने मे ३ से ४ दिन लग सकते है, जबकि तन्तु-समृद्ध (फायब्रस) शाकाहार २४ घटो मे ही अपनी आन्त्रयात्रा सपन्न कर लेता है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि **एक शाकाहारी शिशु को पश्चिम जगत् की तमाम विकारमूलक (डीजेनरेटिव्ह) बीमारियो से बचाया जा सकता है।**



७७ अमरीकी फूड एड न्यूट्रीशन बोर्ड की नेशनल रिसर्च कौसिल ने साफ कहा है कि अधिकाश पोषण-विज्ञानी इस तथ्य मे सहमत है कि यदि शाकाहार का यथोचित सयोजन किया जाए तो वह स्वय मे सपूर्ण/पर्याप्त आहार है

दुनिया के प्राय सभी मुल्को मे शुद्ध शाकाहारियो ने अपना स्वास्थ्य उत्तम प्रकार से बनाये रखा है, जो इस बात का प्रतीक है कि यदि सतुलित और समीचीन चुनाव किया जाए तो शाकाहार अमृतोपम है।

७८ सन् १९४५ मे रसायन-शास्त्र-विषयक नोबल पुरस्कार से सम्मानित डॉ अर्तुरी वर्तनेन (हेलिस्की, फिनलैड मे जैव-रासायनिक शोध सस्थान के निदेशक) ने कहा है कि दुग्ध-शाकाहारियो को फल, शाक-सब्जी, दाल, वसा-न्यूनित दूध आदि से तमाम आवश्यक पोषण-तत्त्व सहज ही मिल सकते है।

७९ लन्दन विश्वविद्यालय के पोषण-विज्ञानी श्री टी ए बी साडर्स ने कहा है कि आर्थिक और दार्शनिक कारणो से पश्चिम के आदमी का आहार आगे चल कर वीगन (शुद्ध शाकाहारी) के समान हो जाएगा। इधर के वर्षो मे हालात काफी बदले है। कुछ दशक पूर्व एक शाकाहारी को गँवार माना जाता था, किन्तु अब शाकाहार न सिर्फ एक सामान्य जन का आहार है बल्कि कहे कि फैशन का एक अग भी बन गया है। सुप्रसिद्ध पोषणविद् फ्रे एलिस का इसमे बहुत बडा योगदान है।

८० शाकाहार सदियो से मानव-समाज को सन्तुलित पोषकता प्रदान करता आ रहा है। ईसा पूर्व छठी शताब्दी के विख्यात गणितज्ञ पायथागोरस ने निरामिष आहार को तर्कसगत आहार निरूपित किया है। उनके तर्क हैं - शाकाहार से शरीर स्वस्थ रहता है, पर्यावरण के प्रति हम [illegible] निभाते है, और धार्मिक/दार्शनिक दृष्टि मे इसकी [illegible] है।

८१ आर्लिगटन मे 'शाकाहार पोषकता' पर आयोजित [illegible] कांग्रेस (२८ जून- १ जुलाई १९९२) के [illegible] के अतिथि-सपादक पेट्रीसिया जॉन्स्टन ने 'प्राक्कथन' मे कुछ [illegible] सर्वेक्षणो का उल्लेख किया है, जिनमे-से एक का निष्कर्ष है कि अमेरिका के १३ ५ प्रतिशत परिवारो मे कम-से-कम एक शाकाहारी सदस्य अवश्य है जिसका सीधा-सादा मतलब है कि सम्पूर्ण अमेरिका मे एक करोड बीस लाख शाकाहारी हैं।

८२ एलोपेथी के लोग जहाँ एक ओर नारियल-तेल मे कोलेस्टेरोल की बात कर कर उसे बदनाम करने की कोशिश मे है वही दूसरी ओर होम्या-चिकित्सको का मानना है कि नारियल-तेल नारियल-[illegible] नारियल-का-गूदा स्वस्थ रहने के लिए वरदान है। [illegible]

होम्यो-चिकित्सक डॉ एस वैद्य प्रकाश के अनुसार नारियल-पानी
पोटेशियम्म, सोडियम की तरह के इलेक्ट्रोइट्स तथा कार्बोहाइड्रेट्स होने की
वजह से वह निर्जलीकरण-की-अवस्था (डीहाइड्रेशन) मे बेहद उपयोगी
है।

८३. विकासशील देशो मे शाकाहार इसलिए भी बहुत जरूरी है चूँकि वह उन
अर्थतन्त्र को मजबूत बना सकता है। विकसित देश मास का अधिक मूल्य
कर इन देशो की वन-सपदा को चरागाहो मे बदलने पर आमादा है और इ
तरह अन्तत उन्हे खाद्यान्न-दुर्भिक्ष की ओर धकेल रहे है। आन्ध्रप्रदेश
अपने खेतो को चरागाहो मे बदलना शुरू कर दिया है।

८४. मानव-समाज इन सवेदनशील क्षणो मे जिस पर्यावरणिक तथा आर्थि
भुखमरी के भीषण दौर से गुजर रहा है, उसके लिए अधिकाशत पशु-कृष
(केटल-रेंजिग) जिम्मेदार है। हमारे उपग्रह की २४ प्रतिशत भूमि प
निवसित करोडो-करोड मानव-आबादी का उदर-पोषण कोई असभव का
नही है, बशर्ते वर्तमान मे हम धरती पर गुजर-बसर कर रही पशु-सख्
(एक अरब अट्ठाइस करोड) के लिए अनाज का कोई विकल्प तलाश क
और उसे कृत्रिम तरीको से सर्वद्धित न करे। पशु-सख्या को लगातार ब
कर हम धरती के पर्यावरण-प्रबन्ध को उत्तरोत्तर प्रलय की ओर ले जा र
है। यदि हम चाहे, तो शाकाहार हमे इस अ-सतुलन और सर्वनाश से बच
सकता है।

८५. जेरेमी फिकिन ने अपनी बहुमूल्य कृति **बियोड बीफ, द राइज एंड फा ऑफ द कैटल कल्चर** मे कहा है कि यदि हम गोमास खाना कम कर तो हृदयाघात, कैसर और पक्षाघात जैसे रोगो से अनायास ही बचा जा सकता है, नतीजतन लाखो लोग बेहतर तन्दुरुस्ती का आनन्द ले सकेगे तथा जैसे ही औद्योगिक मुल्को मे गोमास की माँग कम होगी, करोडो डॉलर का चिकित्सा-व्यय बचेगा और लोग सुदीर्घ जीवन की ओर अग्रसर होगे। सबमे बडी घटना यह होगी कि विकासशील देशो की कृष्य भूमि अन्नोत्पादन के लिए मुक्त हो जाएगी, फलस्वरूप कुपोषण और गरीबी का बोझ आपोआप कम हो जाएगा। ध्यान रहे **विकासशील देशो के अर्थतन्त्र के लिए शाकाहार अमृतोपम है।**

८६ औद्योगिक विश्व ने विकासशील देशो पर उन्हे उन्नत करने के नाम पर 'विश्व बैंक' और 'इटरनेशनल मॉनीटरी फड' के सरचनात्मक ममायोजन कार्यक्रमो (स्ट्रक्चरल एड्जस्टमेट प्रोग्रेम्स) के तहत जो

योजनाएँ थोपी हैं, वे तीसरी दुनिया के लिए बडी कमरतोड साबित हुई हैं। ये कार्यक्रम विकासशील देशो के अर्थवित्तीय शोषण से सबन्धित हैं, मूलत इनका मानवीयता से कुछ भी लेना-देना नही है। इन कार्यक्रमो को निर्यात के लिए अनाज, कॉफी, कपास, कोको और इसी तरह के अन्य पदार्थ चाहिये। दोनो सस्थाएँ चाहती हैं कि कर्ज़-मे-फँसे मुल्क जब तक पूरी तरह छिन्न-भिन्न न हो जाएँ, मूलधन की जगह व्याज चुकाते रहे। **मांस-निर्यात की लगातार मॉग गोश्तखोर विकसित मुल्कों का एक भयावह षड्यन्त्र हैं** – जब तक हम इस मर्म को नही समझेगे विदेशी शिकजे मे तडपते रहेगे। ध्यान रहे **शाकाहार किसी भी देश को एक समर्थ/आत्म-निर्भर अर्थव्यवस्था उपलब्ध कराने मे समर्थ है।**

७ सुप्रसिद्ध चिकित्सक डॉ ए लीफ ने 'नेशनल ज्यॉग्राफिक' के एक लेख तथा वर्ष १९९५ मे लिखी अपनी एक किताब मे कहा है कि कश्मीर के हुंजा, रूस के **अबखासिया** और इक्वाडोर के **विल्काबम्बस** ऐसे लोग हैं, जो अपने आहार मे पशु-वसा का उपयोग नही करते। ये सुदीर्घजीवी, मेहनतकश और दिलेर हैं। डॉ लीफ को ऐसे दृश्य सामान्यत देखने को मिले– आलुओ-से-भरा थैला ढोता ११७ वर्षीय वृद्ध, १०४ वर्ष की अवस्था मे बर्फ-जैसे ठण्डे जल वाली झील मे तैरता व्यक्ति, तथा ९५ वर्ष की उम्र मे लकडियॉ चीरता वयस्क। वे तब अचम्भित रह गये, जब उन्हे इस बात का पता चला कि ये सब शाकाहारी हैं।

८. लन्दन के सुप्रसिद्ध चिकित्सक अलेक्ज़ेडर हैग ने शाकाहार का समर्थन इसलिए किया है कि यह **यूरिक अम्ल का स्रोत नहीं है।** उनका निष्कर्ष है कि 'यूरिक-एसिडेमिया' (खून मे मूत्र-अम्ल का अधिक होना) माइग्रैन जैसी बीमारी को जन्म देता है। डॉ हैग ने १८९० ई मे 'यूरिक एसिड एज ए फैक्टर ऑन द कॉजेशन ऑफ डिसीज़' पर अपनी बहुचर्चित थीसिस पेश की थी। **वे शाकाहार को मूत्राम्ल-मुक्त** (यूरिक एसिड फ्री डायट) आहार मानते हैं।

९ शाकाहारियो मे गैर-शाकाहारियो की तुलना मे अस्थि-सघनता (बोन-डेन्सिटी) अधिक होती है, इसीलिए शाकाहारी अस्थि-क्षरण (ओस्टिओपोरोसिस) से न सिर्फ सुरक्षित रहते हैं, अपितु वृद्धावस्था तक मे उन्हे यह बीमारी नही होती।

१०. बम्बई-स्थित ऑल इडिया एनीमल वेल्फेअर एसोसिएशन ने जीव-जन्तुओ के मूलभूत अधिकारो पर एक पुस्तिका प्रकाशित की है, जिसमे भारतीय सदर्भ मे ऐतिहासिक, सामाजिक, नैतिक और वैधानिक परिप्रेक्ष्यो का ध्यान रख कर पशु-जगत् की अधिकार-रक्षा के मुद्दे को दृढता के साथ पेश किया गया है। तय है इससे शाकाहार को एक नया आयाम मिलेगा तथा देश-के-पर्यावरण की रक्षा के लिए एक विशिष्ट जागरूकता बनेगी।

११ १९४२-४५ मे पॉच अमरीकी चिकित्सको ने मैक्सिको मे पोषकता की जॉच-पडताल के निमित्त एक मूल्याकन-श्रृखला हाथ मे ली, जिसके निष्कर्ष मे कहा गया कि यदि मैक्सिको पर अमरीकी आहार-शैली को थोपा गया तो वहाँ के लोगो का पोषण-स्तर उठने की जगह गिर जाएगा। निष्कर्ष मे कहा गया है कि मैक्सिको के **तराहुमरा इडियन्स** का रहन-सहन/खान-पान कल्पनातीत रूप मे चमत्कारिक है। एक तराहुमरा ५ दिनो मे ५०० मील चल सकता है, वह ७० घटो मे १०० पौड वजन ढो कर ११० मील जा सकता है, किक-बॉल जैसे राष्ट्रीय खेल मे वह लगातार ४८ घटे (लगभग १७५ मील) दौड सकता है, तथा इस खेल की एक महिला खिलाडी ५० मील दौड सकती है ध्यान रहे **तराहुमरा पूर्णतया शाकाहारी है।**

यूनानी दार्शनिक-सुकरात (४७०-३९९ ई पू) को कौन नही जानता? एक दिन जब वे अपने प्रिय शिष्य ग्लोकोन से एक शहर बसाने के बारे मे विचार-विमर्श कर रहे थे, तब उन्होने कहा कि 'शान्त और स्वस्थ जीवन तथा एक सुखद/निरापद वृद्धावस्था' के लिए शाकाहार जरूरी है। उन्होने कहा कि ऐसे ही लोग मेरे **स्वास्थ्य-नगर** (सिटी ऑफ हेल्थ) को मूर्त रूप दे सकेंगे। मासाहारी नगर का वर्णन करते हुए उन्होने कहा कि यह एक ऐसा नगर हो सकता है, जो उदर-दाह से पीडित होगा और जिसे चिकित्सको की अक्सर आवश्यकता पडेगी।

कृषि का मूल सम्बन्ध शाकाहार से है, किन्तु इन दिनो पशुओ को जिस अमानवीय ढग से सवर्द्धित किया जाता है, वह पर्यावरण के लिए अत्यन्त हानिकारक है। इस तरह की कृषि मनुष्य-मात्र के लिए चिन्ता का विषय है। सिंक्लेर ने न्यूयॉर्क से प्रकाशित अपनी किताब 'द जगल' मे पशु-मेलो का मन-को-दहलाने-वाला विवरण दिया है।

[illegible] के [illegible] गिरजा ([illegible] चर्च) अमरीकी धरती पर

उन्नीसवी शताब्दी मे आविर्भूत हुआ। यह शाकाहारी ईसाई गिरजा 'शरीर को प्रभु का मन्दिर' मानता है और कोशिश करता है कि वह किसी अस्वच्छ आहार से दूषित और अपवित्र न हो। एसडीए शाकाहार के प्रबल समर्थक हैं। चिकित्सा-सबन्धी परीक्षणो के अनुसार इस मत के मानने वालो को अन्यो की तुलना मे अधिक स्वस्थ, स्फूर्त, सुदीर्घजीवी और परिश्रमी पाया गया।

डॉ विन्स्टन जे क्रेग ने 'द अमेरिकन जर्नल ऑफ क्लिनिकल न्यूट्रीशन' (मई १९९४, जिल्द ५९, अक ५) मे प्रकाशित अपने शोध-लेख 'आयर्न स्टेटस ऑफ वेजीटेनिरयन्स' मे कहा है कि समुचित रूप से योजित सुसतुलित शाकाहार की तुलना विश्व के किसी भी आहार-शैली के स्तर से की जा सकती है।

गलतफहमी है कि कुत्ते शाकाहार पर जीवित नही रह सकते, कुत्ता तो कुत्ता, शेर तक शाकाहारी हो सकता है। पर्यावरणविद् श्रीमती मेनका गाँधी ने अपनी बहुचर्चित कृति हेड्स एड टेल्स (पृ १६०) मे लिखा है कि 'कुत्तो के लिए मासाहार जरूरी नही है। मेरे घर मे [illegible] कुत्ते हैं – जिनमे-से एक 'वशानुगत रुग्ण' को छोड, कभी कोई [illegible] नही हुआ। जादूगर पी सी सरकार जूनियर के पास एक [illegible] शेर है, जो सकुशल और प्रसन्न है।' **प्रश्न, तथापि, यह [illegible] होता है कि कुत्ता अथवा शेर तो मासाहार छोड़ [illegible] मनुष्य यह जानते हुए भी कि मासाहार [illegible] नहीं छोड पा रहा है।**

प्रथम विश्व-युद्ध (१९१७) के दौरान [illegible] आयात लगभग ठप्प हो गया। वस्तु [illegible] शाकाहारी देश बनना पडा। [illegible] हुआ कि लोगो का स्वास्थ्य [illegible] विश्व-युद्ध के दौरान [illegible] अर्थात् मास और [illegible] शाकाहारी देश बन [illegible] प्रभावित किया। [illegible] आश्चर्यजनक [illegible] हो जाने के [illegible]

[illegible]

घटनाओ ने साबित कर दिया कि **शाकाहार एक अचूक स्वास्थ्यप्रद जीवन-पद्धति है।**

९८. पर्सिया मे युद्धरत जवानो (१८७१) की अच्छी सेहत का कारण उन्हे चोकर-युक्त अनाज (होलग्रेन) की रोटी दिया जाना था। बाइबिल मे 'अक्षत अन्न की रोटी' को ही 'सपूर्ण आहार' कहा गया है। यह रोटी इतनी पौष्टिक होती है कि इसे लोग **जीवन-की-लाठी** (स्टाफ ऑफ लाइफ) कह कर पुकारते है। इसी तरह द्वितीय विश्व-युद्ध के जुझारू जवानो की अपूर्व स्फूर्ति और शक्ति का श्रेय भी साबुत अनाज की रोटी को दिया जाता है।

९९. कृषि-विज्ञानी सी डब्ल्यू फॉर्वर्ड (अमेरिका) ने शाकाहार/मासाहार के उत्पादन मे लगने वाली जमीन के जो ऑंकडे दिये हैं, उनसे सिद्ध हुआ है कि **शाकाहार दुनिया के किसी भी मुल्क के लिए श्रेयस्कर है।** ऑकडे इस प्रकार है—

जमीन एक एकड	वजन पौंड मे
गोमास	१८२ २५
बकरे का गोश्त	२२८०
गेहूँ	१६८००
जौ	१८०००
फलियाँ	१८०००
जई	२३०००
मक्का	३१२००
चावल	४५६५०
आलू	२०१६००

आश्चर्य! जितनी जमीन मे उत्पादित चावल से ७५ आदमियो का पेट भरना सभव है, उतने गोमास से सिर्फ एक आदमी का पेट भर पाता है!!

१००. अब वक्त आ गया है कि दुनिया यह फैसला करे कि उसे सीधे शाकाहार करना है अथवा किसी माध्यम से। सामान्यत मासाहारी वर्ग गायो, सुअरो, चूजो, टर्की, बकरो, मेमनो, हिरणो, खरगोशो, घोडो इत्यादि शाकाहारी प्राणियो को अपना आहार बना रहा है। **सवाल है कि क्या दुनिया प्रथम श्रेणी का शाकाहार करे अथवा द्वितीय श्रेणी का।** यह एक ऐमी समस्या है, जिसका समाधान हर आदमी को व्यक्तिगत, राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर खोजना है।

△△

Beta carotene keeps cancer at bay

(Contd from cover-page 2)

Palm oil in its crude form is put through a refining process which involves heat. Since carotenoids are usually very heat sensitive, most of it gets destroyed Even food that is kept warm for hours in ovens in fast food joints loses whatever little carotenoids it possesses

In the case of palm oil, consumers prefer a light golden colour in the oil as indicative of good quality

The MPOPC, after noticing that carotenes were getting wasted away in the process of refining palm oil, has promoted research to ensure that most of the carotenoids remain in the final product, says Ashima Raheja, a nutritionist with MPOPC (India)

With the persistent efforts of nutrition scientists, a process has now been discovered by which palm oil can be produced in large quantities for commercial consumption The refined, bleached and deodorized red palm oil, now being produced, contains most of the carotenes as well as Vitamin E which is present in the crude oil △

Seven reasons to stay vegetarian

(Contd from cover-page 4)

5 NO TOXINS Apart from the non-violence viewpoint, slaughtering of animals brings many toxins to the meat-eater While animals are slaughtered, the fear and their struggle to escape death stimulates the secretion of epinephrine, nor-epinephrine, steroids and other chemicals which are *ipso facto* toxic in nature With the meat one consumes various toxoids which are highly hazardous

6 LESS LOSS OF ENERGY Conversion of plant protein into animal protein results into a great loss For example, in egg 69 per cent, pork 85 per cent and beef 94 per cent of vegetable proteins end up as waste Energy output of vegetarian food is more than energy input in order to harvest or produce it Whereas in non-veg food energy output is less than energy input The white loaf requires twice as much energy from fossil fuels for its manufacture as the consumer will obtain from eating it. Similar loss is ten folds for battery eggs and 20 folds for deep sea fish

7 HUMAN BEING A VEGETARIAN ANIMAL A study of human anatomy and physiology also reveals that human being is a vegetarian animal A) Like vegetarian animals, our small and large intenstine is four times longer than our body length whereas in case of carnivores it is about the same size B) We do not have fangs which carnivores have for biting into flesh Human canines are not true canines They are quite small C) Human saliva is alkaline containing ptyalin to digest carbohydrates whereas in carnivores it is acidic D) For digesting highly protenous flesh diet gastric secretion of carnivores is highly acidic, whereas human gastric secretion is one-fourth of the former E) Human beings do not have claws for tearing flesh like carnivores F) Cornivores liver secretes a much larger quantity of bile into the gut to deal with high fat meat diet.

Thus in the final analysis one must choose vegetarian diet on humanitarian and health grounds

Many people fear to adopt vegetarian lifestyle because they think that if non-veg. food is stopped, oppetite will be reduced and they will become weak.

-Dr. Girish Patel

Seven reasons to stay vegetarian

HEALTH is not only a precious possession but resource in which the whole community has a stake Yet, there is a great misunderstand- ing above the ways and means to restore and maintain the health

Your daily diet plays a significant role in prompting physical, mental and spiritual health of a person While our regular diet should contain carbohydrates, proteins, fat, vitamins, minerals etc in average balanced quantity, the nature of our diet should be vegetarian for the following reasons

1 REDUCING CHOLESTEROL Fat in non-vegetarian diet is saturated and cholesterol producing Increased cholesterol leads to atherosclerosis, high blood pressure and gallstones On the other hand, chlorophyll present in green leafy vegetables reduces the cholesterol from blood and protects the person from number of cholesterol linked diseases

2 REDUCING URIC ACID Uric acid is the end product of various protein metabolisms Human kidneys can cope with excretion of about seven grains of uric acid per day As the meat diet contains high amounts of uric acid, it increases load on kidneys and the results may be kidney stones or inflammations in kidney tissues at the outset and kidney failure in the long run Uric acid also leads to troubles such as gout

3 FACILITATES BOWEL ACTIVITY Meat diet has no fibre content, it lacks cellulose or roughage without which bowel cannot move properly and one suffers fron constipation which is considered by our ancient systems to be the fertile mother of many diseases Interestingly, recent statistics also support the above belief Australia, which consumes 130 kg of beef per year per head, suffers more from bowel cancer Diseases like appendices and hemarrhoids commonly called piles are always due to constipation whether latent or patent

4 PROTECTION AGAINST DIABETES Some medical experts advise non-vegetarian food to diabetic patients as it contains less carbohydrates Although the fact is true, it is a very narrow view of the total metabolism An investigation led by Prof N S P Verma of Delhi had found that the fibre content of vegetables acts as a protection against diabetes To reduce the chances of developing diabetes, Dr Verma suggests eating more vegetables and unpolished cereals Keeping the total metabolism in view diabetes is an excess-caloric disease more than an excess carbohydrate disease In obese people fault may not primarily lie in pancreas but with liver

(Contd on cover-page 3)

शाकाहार की सात प्रमुख विशेषताएँ है

१. यह कोलेस्टेरोल को कम करता है; २. मूत्राम्ल (यूरिक एसिड) को घटाता है; ३. पाचन-तन्त्र को रोग-मुक्त रखता है; ४. मधुमेह (डायबीटीज़) नहीं होने देता; ५. विष-मुक्त होता है; ६. इसके उत्पादन मे न्यूनतम ऊर्जा लगती है; ७. मनुष्य का शरीर- तन्त्र इसके। सर्वथा उपयुक्त है।

—डॉ गिरीश पटेल





प्राणियों के

सपने

○ हमारी हिंसा का जाल अब इतना घिनौना और खून-से-सना हो गया है कि हम अपने पालतू कृषि-पशुओं को भी काट कर खाने लगे हैं। –पृ ६

○ कहा जाता है कि गाय के थनों में तैंतीस करोड देवता निवास करते हैं; किन्तु आज हमारे ही अपने मुल्क में, महावीर और बुद्ध के देश में, गांधी और विनोबा, विवेकानन्द और रामकृष्ण परमहंस के देश में रोज़ ही सूर्योदय के साथ हज़ारों गायें-भेंडे काट दी जाती हैं। अकेले देवनार (बम्बई) का कत्लखाना ही–जो एशिया का सबसे बडा कत्लघर माना जाता है–प्रतिवर्ष एक लाख से अधिक पशु मौत के घाट उतारता है। देवनार प्रतिमास अस्सी हजार टन मांस का निर्यात करता है। –पृ ७

○ मधुमेह (डायबेटीज) के लिए जिस 'इन्सुलिन' नामक दवा का उपयोग हम करते है वह भेड या बैल या गाय के अग्न्याशय (पैंक्रियाज) में-से प्राप्त की जाती है। इस कारण नामालूम कितनी भेडें/गायें/बछडे कत्ल कर दिये जाते हैं। –पृ ८

○ दवाइयों की निर्विघ्नता और अचूकता के लिए अमेरिका ने हज़ारों बंदरों की जानें ले ली है। खरगोश-जैसे भोले-निरीह प्राणी की आँखें शेम्पू छीन लेता है। –पृ ९

○ आंकडों का यदि तनिक नज़दीक से अध्ययन किया जाए तो पता चलेगा कि एक मांसाहारी १४ शाकाहारियों के बराबर पडता है। सुअर का एक किलो मांस १४ किलो शाकाहारी भोजन से बनता है। सुअर की खुराक १४ आदमियों के बराबर होती है। इस तरह आर्थिक दृष्टि से भी मांसाहार लाभप्रद नहीं है–प.९

○ आप आश्चर्य करेंगे कि हमारे देश में मेढकों को मारने और उनकी टांगों को धड से अलग करने के कारखाने लगाये गये हैं। कई जंगली जातियों और ग्रामीणों को मेढक पकडने की तालीम दी गयी है, उन्हें प्रशिक्षित किया गया है। १९६७ में मेढक की ५० टन टांगों का निर्यात हुआ था। १९८० में यह आंकडा ५० टन हो गया और इस तरह ३ करोड मेढक मौत के घाट उतारे गये। –पृ ११

○ हम कैप्सुलों के रूप में लगातार मांसाहार ही कर रहे है। कैप्सुले जिलेटिन नामक पदार्थ से बनती हैं। जिलेटिन हड्डियों, खुरों, पशुओं के ऊतकों (टिस्सूज) को उबाल कर प्राप्त होता है। इसे पशुओं की झिल्लियों आदि से भी प्राप्त किया जाता है। –पृ. १२

○ सेंट-उत्पादन के लिए हर वर्ष हज़ारों बिज्जू मार डाले जाते हैं। –पृ. १३

○ लोरिस की आँखे बहुत प्यारी होती हैं। इसका जिगर और इसकी आँखें पीस कर सौंदर्य-प्रसाधन बनाये जाते हैं। इसे स्लेंडर लोरिस के नाम से पुकारा जाता है। –प १४

→

बेकसूर प्राणियों के **खून-में-सने** हमारे ये **बर्बर** शौक

डॉ. नेमीचन्द जैन

बेकसूर प्राणियो के खून मे
सने हमारे ये बर्बर शौक
-डॉ नेमीचन्द जैन

प्रकाशन : हीरा भैया प्रकाशन
६५, पत्रकार कॉलोनी,
कनाड़िया मार्ग,
इन्दौर-४५२ ००१ मध्यप्रदेश

मुद्रण : नईदुनिया प्रिन्टरी
बाबू लाभचन्द छजलानी मार्ग,
इन्दौर-४५२ ००१ मध्यप्रदेश

आकल्पन : आर पाचाल

पहली बार	दिसम्बर १९८६
चौबीसवी बार	दिसम्बर १९९७
कुल सख्या	७०,०००

मूल्य तीन रुपये

ISBN 81 - 85760-01-2

अन्तर्राष्ट्रीय मानक पुस्तक सख्या–
81-85760-01-7

दो शब्द

विज्ञान की तस्वीर दोनों तरह की है – उजली, मैली। उजली इसलिए कि उसने हमे सत्य-की-खोज की एक व्यवस्थित, विश्वसनीय और तर्कसंगत पद्धति दी है, मैली इसलिए कि उसने मनुष्य के हाथ में विनाश के नये और खतरनाक हथियार थमा दिये हैं, जिनसे वह अपना नुकसान तो कर ही रहा है, पृथ्वी और प्रकृति को भी तहस-नहस करने पर तुला है।

धरती की हरी खोल लगभग ध्वस्त हो चुकी है, अत जगह-जगह मरुस्थल सिर उठाने लगे हैं। मनुष्य के बर्बर, क्रूर, और खूनी शौकों के कारण कई सुन्दर-उपयोगी पशु-पक्षियों की नस्लें खत्म हो चुकी हैं और कई नष्ट होने की डगर पर हैं। प्रयोगशालाओं में उसने भोले-भाले पशुओं के साथ जो बदसलूक किया है, उसे कुदरत कभी माफ नहीं कर सकती। जीभ-के-चटखारों तथा शरीर-के-शृंगार के लिए मनुष्य ने पशुओं पर बेहिसाब जुल्म किये हैं, जो अन्तत. उसके तथा उसकी संस्कृति के लिए बूमरैंग (आत्मघाती) सिद्ध होने वाले हैं।

प जवाहरलाल नेहरू ने कहा था . 'यदि पशु-पक्षियों का अस्तित्व खतरे में पड़ता है तो हमारा जीवन तुरन्त सुस्त और बदरंग पड़ जाएगा'। इसी तरह मनीषी चिन्तक अल्बर्ट स्वाइत्जर के शब्द हैं 'मनुष्य जीवित प्राणियों के प्रति जिस हमदर्दी का अनुभव करता है, वही उसे सच्चे अर्थों में मानवीय बनाती है'। क्यों भूल रहे हैं हम महापुरुषों की इन सूक्तियों को और क्यों उजाड़ रहे हैं बदहवास, प्रकृति और पृथ्वी का सुहाग ?

प्रस्तुत पुस्तिका 'तीर्थंकर शाकाहार प्रकोष्ठ' का सर्वप्रथम प्रकाशन है, जो 'तीर्थंकर' के मार्च-अप्रैल १९८५ के अंक में अविकल प्रकाशित हो चुका है। इस लेख की लोकप्रियता और इसके प्रभाव का जीता-जागता सुबूत यह है कि कुछ ही महीनों बाद इसका गुजराती-अनुवाद बड़वाण से प्रकाशित 'कल्याण' (गुजराती मासिक) में प्रकाशित हुआ है, जिसे हजारों-हजार लोगों ने पढ़ा।

हमे वस्तुत इस पुस्तिका के माध्यम से अपने जीवन को इस कसौटी पर कसना है कि क्या हम अपनी नगण्य सुविधाओं, समृद्धियों और शोभाओं के लिए लाखों-लाख जीवधारियों की जानें ले रहे हैं – वदहवास उन्हे मौत के घाट उतार रहे हैं ? छोड़े उन वस्तुओं को जो इन निरीह-निर्दोष प्राणियों के खून-मे-नहायी हुई हैं और अपनायें एक ऐसा सादा, शान्त, सुखी और स्वस्तिकर जीवन जो 'जियो और जीने दो' के सास्कृतिक वोधवाक्य को सार्थक कर सके।

'प्रकोष्ठ' ने ऐसी ही दो और पुस्तिकाएँ प्रकाशित की है, ये हैं–'अण्डा जहर-ही-जहर' (पाँचवीं वार प्रकाशित तथा वगाली और गुजराती भाषाओं मे अनुवादित) तथा 'क्या आप अण्डा खा रहे हैं ? नहीं, वल्कि असलियत यह है कि अण्डा आपको खा रहा है' आशा है इन तीनों पुस्तिकाओं से हमारे जनजीवन को एक व्यसन-मुक्त/सुखी/निर्विघ्न जीवन की स्फूर्ति प्राप्त होगी।

इसी तरह 'प्रकोष्ठ' ने हिन्दी मे १६ रवर सीले तैयार करवायी हैं, जिनमे अकित वाक्य-वाक्यांशों मे विज्ञान की पृष्ठभूमि पर एक अहिंसक, स्वस्थ, और प्रदूषण-मुक्त जीवन जीने की प्रेरणा दी गयी है। हमारा विनम्र निवेदन है कि आप इन सीलों को लिफाफों, अन्तर्देशीय पत्रों, कार्डों, मनीऑर्डर कूपनों, विलों, केशमेमो आदि पर लगायें और अहिंसा/शाकाहार के प्रचार-प्रसार मे हमारी सहायता करे।

हमारा विश्वास है कि इस पुस्तिका का व्यापक स्वागत होगा और इसे सभी भाषाओं के माध्यम से दूर-दराज तक पहुचाया जाएगा।

नेमीचन्द जैन
सपादक 'तीर्थंकर' मासिक



बेकसूर प्राणियों के खून-में-सने हमारे ये बर्बर शौक

जब भी मैं किसी कोंपल, या किसी पशु-शावक को
छूता हूँ तो लगता है मैं सारे विश्व का
स्पर्श कर रहा हूँ। मैं करुणा और कृपा में नहा उठता हूँ।
मुझे लगता है यह जगत् कितना सुन्दर/कितना सुखद है, किन्तु
जैसे ही मेरा ध्यान मनुष्य की बर्बरताओं की ओर जाता है मैं
थर्रा उठता हूँ यह सोच कर कि यह इतनी हरी-भरी धरती और
इसके कूदते-फुदकते/छलांगें-भरते शृंगार को उजाडने/तहस-नहस करने पर
क्यों तुला है? क्या यह स्वयं इस सारे व्यापक सौंदर्य का
भागीदार नहीं है? आज सारे जगत् की हरी खोल खतरे में
है। खेत उजड रहे हैं। धरती सूख रही है। पृथ्वी पानी पर
तैर रही है, किन्तु आज इसके गाँव-शहर एक-एक बूंद पानी के
लिए तरसने लगे हैं?

क्यों हुआ जा रहा है यह सब? क्या हम इसे अपने हाथों
अपने ही पाँव पर कुल्हाड़ी मारना नहीं कहेंगे? क्या मनुष्य
स्वयं इस धरती-के-मित्र प्राणियों को, जो इसे स्वच्छ, साफ, सुथरी,
और सुन्दर बनाये रखने में अपनी विशद भूमिका निभाते हैं,
रोज-ब-रोज लाखों की संख्या में मौत के घाट नहीं उतार रहा
है? जिस क्षण मनुष्य की ये बर्बरताएँ थमेंगी उस दिन फिर यह
धरती सुखद/तहय बनेगी; किन्तु अफसोस, हिंसा का दौर बढ़ रहा

है और पृथ्वी पर से पशु-पक्षियों की कई नस्लें समाप्त हो रही हैं। कीटनाशक दवाओं और रासायनिक द्रवों ने इस सदी में जो गजब ढाया है, वह किसी महाप्रलय से कम नहीं है।

यह दुनिया बहुत बड़ी है। खूबसूरत है। इसमे पहाड़ है। घने वन हैं। कल-कल बहती नदियाँ हैं। निरन्तर प्रवाहित झरने है। कुहुकती कोयले हैं। फुदकते चचल-चपल बदर हैं। तेज दौडते खरगोश हैं। भागती-कूदती गिलहरियां हैं, किन्तु मजा यह है कि वे हमे निभा रहे हैं और हम उन्हें निभा नहीं पा रहे हैं। वे हमे दूध-दही का वरदान दे रहे हैं और हम उनकी जानें लेने पर आमादा हैं। हमारी इस धरती पर नामालूम कितने निरीह/भोले/खुशमिजाज प्राणी निवास करते हैं

ये प्राणी पृथ्वी के गर्भ मे, समुद्र मे, वृक्षों पर, गिरि-कन्दराओं मे, बियाबां/सघन जगलों मे अरबों-खरबों की सख्या मे रहते हैं कभी सूरज देख पाते हैं और कभी नहीं देख पाते, क्योंकि इनमे से करोड़ों प्राणी मनुष्य की कृपा पर जीवित हैं। उनके सूर्योदय और सूर्यास्त उसके अनुग्रह पर निर्भर है।

इनमें-से कुछ शाकाहारी हैं, कुछ आमिष-भोजी। मनुष्य प्रकृति से, उसकी शरीर-रचना से आमिष-भोजी नहीं है, किन्तु उसमें जिह्वा-लोलुपता इतनी अधिक है कि वह अपने क्षणिक सुख के लिए इन प्राणियों को रोज ही मौत के घाट उतार रहा है। उसने बड़ी-बडी क़त्लगाहें खोल रखी हैं इनकी हत्या के लिए।

कीडे-मकोडे, कीट-पतिगे भी लाखों क़िस्म के हमारी इस धरती के निवासी हैं और इसे सुन्दर, सतुलित, और स्वच्छ बनाये हुए हैं; किन्तु हमें यह सब सह्य नहीं है और हम अपने बर्बर/नृशंस शौकों और अधुनातन फैशनों के लिए करोड़ों की सख्या में उनकी बलि चढा रहे है।

हमारी हिंसा का जाल अब इतना घिनौना और खून-में-सना हो गया है कि हम अपने पालतू कृषि-पशुओं को भी काट कर खाने लगे हैं (आज के संदर्भ में हम इसलिए इस जीभ-लपलपाती हिंसा का जिक्र कर रहे हैं ताकि हम अपने-अपने स्तर पर इसका मुकाबला कर सकें और एक अहिंसक जीवन-शैली की स्थापना का भरपूर प्रयत्न कर सकें)

गाय-बैल कृषि-पशु हैं। गाय भारत का एक पूज्य पशु है। करोड़ो

लोग आज भी इसकी पूजा करते हैं, इसके स्वास्थ्यप्रद मूत-का-आचमन करते हैं। इसके पवित्र/रुजहारी गोबर से अपना घर-आँगन लीपते हैं। कहा जाता है कि गाय के थनों में तेंतीस कोटि देवता निवास करते हैं, किन्तु आज हमारे ही अपने मुल्क में, महावीर और बुद्ध के देश में, गांधी और विनोबा, विवेकानन्द और रामकृष्ण परमहंस के देश मे रोज ही सूर्योदय के साथ हजारों गायें-भेड़ें काट दी जाती हैं

मनुष्य को चाहिये स्वाद/वह है इन्द्रियों का दास, इसीलिए वह अपने वहशी/जगली/क्रूर शौकों के लिए निरीह/निर्दोष प्राणियों का खून बहा रहा है/खून पी रहा है।

देवनार यहाँ प्रतिदिन दो हज[illegible]
घाट उतारे जाते हैं

अकेले देवनार (बम्बई) का कत्लखाना ही – जो [illegible] सबसे बड़ा कत्लघर माना जाता है – प्रतिवर्ष एक लाख [illegible] के घाट उतारता है। देवनार प्रतिमास [illegible] निर्यात करता है। इसमें सब किस्म के [illegible], बछड़ा-बछड़ी, पेंटा-पेंडी, [illegible] हैं। [illegible] इतना ही नहीं है बल्कि मनुष्य की [illegible] शक्ल ले ली है। वह [illegible] टाँगें तोड़ कर नकली/[illegible] है और इन्हें देवनार के कत्लखाने को बेच देते हैं

जिन दवाइयों को हम खाते हैं हम नहीं जानते कि वे किस कदर खून-मे-डूबी, या खून-मे-सनी है। मधुमेह (डायबेटीज) के लिए जिस इन्सुलिन नामक दवा का उपयोग हम करते हैं वह भेड या बैल या गाय के अग्न्याशय (पेंक्रियाज) में-से प्राप्त की जाती है। इस निमित्त नामालूम कितनी भेडे/गायें/बछडे क़त्ल कर दिये जाते है। फ्रास की साझेदारी में चल रही बम्बई की 'फ्राको' कम्पनी 'डेक्सोरेज' नाम की एक दवा का उत्पादन करती है, जिसके पेकिंग पर यद्यपि सतरों का चित्र है, तथापि इसमे हीमोग्लोबिन के नामान्तर से देववनार मे कत्ल पशुओं का ९५ प्रतिशत खून रहता है, यह हमारी दवाई की दूकानों पर बिकती है। देवनार के कत्लखाने मे जिन पशुओं को मारा जाता है उनका ताजा खून अलुमुनियम के टिनों मे ट्रकों द्वारा/टेम्पो मे/टेक्सी मे वर्ली मे लोटस सिनेमा के पास फ्राको कम्पनी मे ले जाया जाता है जहां 'डेक्सोरेज' खूबसूरत बोतलें तैयार की जाती है। क्या हम इन/ऐसी सारी दवाइयों को ले कर उनके भक्ष्याभक्ष्य पर कभी विचार कर सकेंगे ?
याद रखें उक्त तत्व मे अल्कोहल-का-आधार दे कर ९५ से ९८ प्रतिशत खून मिलाया जाता है।

भारत एक अहिंसा-प्रधान/कृषि-प्रधान/अहिंसा-प्रेमी देश है, जहां आयुर्वेद का सीमातीत विकास हुआ था कभी।
ईसा की तीसरी शताब्दी मे दक्षिण भारत मे समन्तभद्र नाम के
ईसा की तीसरी शताब्दी मे दक्षिण मे समन्तभद्र नाम के कोई मुनि हुए थे, जिन्होंने १८,००० पराग-रहित पुष्पों की किस्मों पर आधारित 'पुष्पायुर्वेद' का आविष्कार किया था। क्या हम ऐसे सुखद/अहिंसक प्रयोग आज नहीं कर सकते ?
भारत जडी-बूटियों का देश है, आज भी यहां से हमारी बहुमूल्य जडी-बूटियां/वनस्पति विदेश जाती है और तैयारशुदा दवाइयों के रूप से अधिक महँगी बन कर लौटती है। खैर जो हो, हिंसा का जो दौर आज हमारे सामने है उसका मुकाबला हमे प्राणपण से/सपूर्ण शक्ति से करना चाहिये। ताज्जुब है जो पशुधन सदियों से हमारी सेवा कर रहा था आज हम उसके प्रति इतने कृतघ्न हुए, हैं कि उसे बिना किसी सकोच के कसाई घरों को सौंप रहे हैं !!
जो मेंढक शताब्दियों से हमारे कुए-तालाव, खेत-खलिहान की प्रदूषण और कीडों-मकोडों से हिफाजत करता आ रहा है आज उसकी टांगों की तिजारत हम कर रहे हैं !!

मनुष्य ने अपनी जीभ के लिए क्या नहीं किया है, उसने इस सुन्दर सृष्टि की उन सांसों को उजाड़ दिया है जो प्रकृति की अभूतपूर्व शृंगार थीं; जिन्हें प्रकृति ने अपने शृंगार के लिए बनाया था, धरती को एक अपूर्व छटा प्रदान करने के लिए जिनकी रचना हुई थी, उनसे आज हमारे देश की आधुनिकाएँ

अपने अधरों का रंजन कर रही हैं, उनसे अपने केश/अपने रूमाल सुवासित कर रही हैं और बनवा रही हैं अपने पर्स, अपनी चप्पलें। जो हो मनुष्य जैसे-जैसे सभ्य होता गया है, वैसे-वैसे उसमें-से करुणा का लोप होता गया है और उसकी क्रूरता बढ़ती गयी है। देखिये न, दवाइयों की निर्विघ्नता और अचूकता के लिए अमेरिका ने हजारों बंदरों की जानें ले ली हैं। खरगोश-जैसे भोले/निरीह प्राणी की आँखें शेम्पू छीन लेता है।

कहा जा रहा है कि दुनिया में चूंकि कृषि-उत्पादन कम है और मनुष्य की आबादी निरन्तर बढ़ रही है अतः अब मांस की खेती की जानी जरूरी है, इसीलिए शाकाहारी जनता में तरह-तरह के भ्रम फैला कर उसे पथभ्रष्ट किया जा रहा है। शाकाहारी अण्डे, मछली-की-खेती (फिश फार्मिंग), अण्डों-की-खेती (एग फार्मिंग) इसी तरह के धोखा देने वाले संस्कार-भंजक शब्द हैं।

आंकड़ों का यदि तनिक नजदीक से अध्ययन किया जाए तो पता चलेगा कि एक मांसाहारी १४ शाकाहारियों के बराबर पड़ता है। सुअर का एक किलो मांस १८ किलो शाकाहारी भोजन से बनता है। सुअर की खुराक १४ आदमियों की खुराक के बराबर होती है। इस तरह यह आर्थिक दृष्टि से भी लाभप्रद नहीं है।

जहां तक स्वास्थ्य की नजर से देखने का प्रश्न है, बहुत स्पष्ट है कि जिन पशुओं का मांस खाया जाता है उनका स्वास्थ्य कैसा है इसकी चिन्ता कौन करता है अतः बीमार पशुओं की बीमारी भी मांसाहारियों के पेट में जाती है। एक मनोवैज्ञानिक अध्ययन के अनुसार कत्ल करने की प्रक्रिया में पशु पर जो हिंसक/[illegible] प्रतिक्रियाएँ होती हैं वे भी मांसाहारी की चेतना पर अंतरित होती हैं [illegible] अधिक तामसिक होता जाता है। सैकड़ों लोग रक्तचाप, गुर्दों [illegible] हृदय-रोग से केवल मांसाहार के कारण ग्रसित हो जाते हैं।

मनुष्य ने इस सुन्दर/रत्नगर्भा वसुन्धरा को इस [illegible] है कि वह दिन अब बहुत करीब है कि जब प्रकृति [illegible] होंगे। कहा जा सकता है (हम पुष्ट भी कर [illegible] वाकया दूर भी हो गयी है। जहां तक [illegible] है [illegible]

मांसाहार पर टिका हुआ है; किन्तु अब वे भी शाकाहार के महत्त्व को जानने लगे हैं और सात्त्विकता की ओर अपना कदम तेजी से उठा रहे हैं।

एक किताब है इन्सेक्ट्स। लेखक हैं एम एस मणि। श्री मणि ने इस किताब की भूमिका मे लिखा है कि हमने भारत के मानव-जीवन और कीडों-मकोडों की समानताओं पर इस पुस्तक मे जोर दिया है और कहा है कि कीडे इस देश के आदिवासी हैं, प्रथम भारतीय हैं, जो आज भी हमारे राष्ट्रीय जीवन की विशेषताओं, हमारी महानताओं और हमारी विपत्तियों मे बराबर की हिस्सेदारी कर रहे हैं। इस किताब का उद्देश्य कीट-जीवन के प्रति प्रीति उत्पन्न करना है। इसी किताब मे उन्होंने कहा है कि हक़ीकत में जिन कीडों को हम उपेक्षा की दृष्टि से देखते हैं वे हमारे प्राकृतिक दृश्यों, हमारी कृषि-संपदाओं, हमारे उद्योग-धन्धों के सरक्षक और शिल्पी हैं। श्री मणि के अनुसार अब तक साढे सात लाख कीडों की किस्मों का नामकरण किया जा चुका है। कितने कीडे रहते है इस धरती पर इसकी जानकारी हमे नहीं है पर इतना सही है कि उनकी आबादी मनुष्य की आबादी से कई अरब गुना है। यदि यह आबादी मनुष्य-जाति पर हमला कर दे तो कोई ऐसा कीटनाशक नहीं है जो उसकी एकबारगी रक्षा कर सके।

वस्तुत हमे इन कीट-पतिंगों का, इन पशु-पक्षियों का कृतज्ञ होना चाहिये जो हमारी इस धरती को स्वर्ग बनाते हैं/बनाये हुए है, किन्तु हम वैसा कहाँ कर रहे हैं—कर रहे हैं उलटा यानी उनका सहार कर रहे है।

इन कीडों को भी आदमी ने नहीं छोडा है। अपने स्वाद के लिए उसने इन पर हमला शुरू कर दिया है। अफ्रीका, सूडान, अरेबिया और अमेरिका मे टिड्डों/भृगों को चर्बी मे तल कर चॉकलेट मे पाग लिया जाता है और चटखारे ले-ले कर खाया जाता है। वहाँ इसे सबमे स्वादिष्ट तश्तरी माना जाता है। हमारी अपनी बहुत-सी जगली जातियाँ दीमक को तल कर मसालों मे बघार कर खाती हैं, किन्तु यह उनका अज्ञान है—मुश्किल वहाँ है वास्तव मे—जहाँ सभ्यता के चरमोत्कर्ष के साथ मनुष्य बर्बर हुआ है।

यहाँ हम कुछ प्राणियों के बारे मे, जो मासूम/बेकसूर/सुशोभन/मांसल/सुकुमार हैं, बता रहे हैं जिनके साथ दुनिया के सुसभ्य मुल्कों ने गजब के जुल्म ढाये हैं और जिन्हें नेस्तनाबूद करने मे उन्होंने कोई कोरकसर नहीं छोडी है।

सबसे पहले हम मेंढक को ले रहे हैं। यह एक ऐसा प्राणी है जो जल और जमीन दोनों पर रह लेता है। वर्षा मे तो प्राय इसकी टर्र-टर्र सुनी ही जा सकती है। भारतीय कवियों ने इसे 'दादुर' कहा है, और जगह-जगह पर इसका वर्णन किया है, किन्तु हमारे देश ने विदेशी मुद्रा के लोभ-लालच मे इस पर बेहद जुल्म ढाना शुरू किया है। विगत पन्द्रह वर्षों मे हमारे मुल्क ने विदेशी मुद्रा कमाने मे पागलपन

मे एक नया ही उद्योग शुरू किया है । विदेशों मे भारतीय मेंढकों की टाँगें बहुत स्वादिष्ट मानी जाती हैं । आज इनकी विदेशी माँग इतनी अधिक बढ गयी है कि मेंढकों की संख्या के लगातार घटते जाने से खेती को नुकसान लगने लगा है । कई सरकारों को, जिनमें आन्ध्र राज्य की सरकार प्रमुख है, इसके वध पर प्रतिबन्ध



मेंढक क्या कसूर है इनका ?

लगाना पडा है । आन्ध्र में दिसम्बर १९८८ तक के लिए मेंढकों तथा अन्य जन्तुओं के मारने पर कड़ा प्रतिबन्ध लगा दिया गया है ।

आप आश्चर्य करेंगे कि हमारे इस देश मे मेंढकों को मारने और उनकी टाँगों को धड से अलग करने के कारखाने लगाये गये हैं । कई जंगली जातियों और ग्रामीणों को मेंढक पकडने की तालीम दी गयी है, उन्हें प्रशिक्षित किया गया है । १९६७ में मेंढक की ५० टन टाँगों का निर्यात हुआ था ।

एक मेंढक की टाँगों का वजन औसतन १०० ग्राम होता है तदनुसार ५ लाख मेंढक मारे गये ।

१९८० में यह आंकड़ा ३५०० टन हो गया और इस तरह ३ करोड़ मेंढक मौत के घाट उतारे गये । इसके अतिरिक्त चिकित्सा-के-संदर्भ में मेंढकों की जो जानें डिस्सेक्शन (विच्छेदन) में जाती हैं उनका तो कोई हिसाब ही नहीं है ।

मेंढक का कुसूर सिर्फ इतना है कि उसकी शरीर-रचना मनुष्य की शरीर-रचना-जैसी है ।

विज्ञान के प्रयोगों में मेंढक तो काम मे आता ही है और-और प्राणी भी उपयोग में आते हैं । अमेरिका की विभिन्न प्रयोगशालाओं में खोजबीन के लिए १९७१

जिन निरीह/मूक/बेआवाज प्राणियों के प्राण लिये गये उनका एक मोटा-सा विवरण इस प्रकार है –

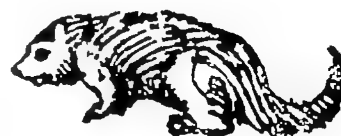
बंदर ८५२८३०, सुअर ४६६२४०, बकरे २२,६६१, कछुए १,८०,०००, बिला २,००,०००, कुत्ते ५,००,०००; खरगोश ७,००,०००, मेंढक १५ से २० लाख; चूहे ४,००,००,००० । ध्यान रहे इन प्रयोगों के परिणाम-स्वरूप जो दवाइयाँ बनायी जाती हैं उनका उपयोग हम रोज कर रहे हैं ।

जहाँ तक मांसाहार का प्रश्न है वह सीधे-टेढ़े कई तरह से हो रहा है । हम कॅप्सुलों के रूप मे लगातार मांसाहार ही कर रहे हैं । कॅप्सुलें जिलेटिन नामक पदार्थ से बनती हैं । जिलेटिन हड्डियों, खुरों, पशुओं के ऊतकों (टिस्सूज) को उबाल कर प्राप्त होता है । इसे पशुओं की झिल्लियों आदि से भी प्राप्त किया जाता है ।



बछड़ा

चीज बनाने के लिए रेनेट का इस्तेमाल होता है । रेनेट क्या है ? यह एक जामन है जिससे दही जमाया जाता है और फिर उससे चीज बनाते हैं। रेनेट बछड़ों के चतुर्थ अग्न्याशय/आमाशय की झिल्ली मे-से मिलता है । हजारों बछड़ों की जानें रेनेट के लिए जाती हैं । कहते हैं रेनेट का विकल्प होते हुए भी जायके के लिए मनुष्य इसे बेहतर मान रहा है ।



बिज्जू

बिज्जू को सब जानते हैं। यह बिल्ली-जैसा छोटा जानवर होता है। इसे भी मनुष्य ने अपना शौक पूरा करने के लिए मारना शुरू कर दिया है । सौंदर्य-प्रसाधनों मे

इसका उपयोग होता है। इसे बेंतों से सूंता जाता है ताकि इस ताडना से उद्विग्न होकर उसकी यौन-ग्रन्थि स्रवित हो, फिर इस स्राव को एक तेज धार वाले चाकू से बड़ी निर्ममता से खरोंच लिया जाता है। यह सुगंधित होता है, अत कई तरह के सेंट बनाने के काम आता है। क्या जब आप इत्र-सेंट लगाते, या सूंघते हैं तब आपकी पीठ पर उन बेंतों के दाग उभरते हैं, जो बिज्जू की पीठ को झेलने होते हैं ?

इस तरह हर वर्ष हजारों बिज्जू सेंट-उत्पादन के लिए मार डाले जाते हैं।



लोरिस →

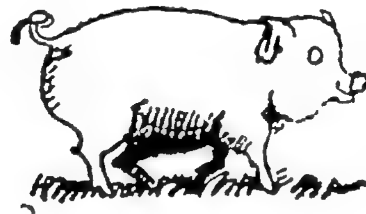
लोरिस को लें। यह लेमूर जाति का एक छोटा/नाटा, मंदगामी बंदर है। श्रीलंका और जावा में यह बहुतायत में पाया जाता है। यह क्वाड्रुमेनस प्राणी है, जो अपने पैरों से हाथ की तरह भी इस्तेमाल कर सकता है। इस मासूम का सौकुमार्य भी आदमी को शुभ नहीं।

इसकी आंखें बड़ी प्यारी बड़ी-बड़ी तश्तरियों-जैसी होती हैं। इसका जिगर और इसकी आंखें पीस कर सौंदर्य-प्रसाधन बनाये जाते हैं। इसे स्लेंडर लोरिस के नाम से पुकारा जाता है।



गिनी पिग

गिनी पिग एक शाकाहारी प्राणी है। इसे गिनी पिग इसलिए कहते हैं चूंकि बर्तानिया में इसकी कीमत एक गिन्नी थी। गिन्नी एक सोने का सिक्का था, जो सन् १६६३ और १८१३ के बीच ब्रिटेन में प्रचलित था। गिनी पिग दुनिया-भर में पाया जाता है। इसकी चमड़ी पर रोएँ होते हैं। यह चूहे के परिवार का जन्तु है। इसकी चमड़ी काफी स्निग्ध/कोमल होती है। हजामत बनाने के बाद जिस लोशन का उपयोग आदमी अपनी त्वचा पर करता है उसकी सहनशीलता/संवेदनशीलता की जांच के लिए गिनी पिग की खाल पर प्रयोग किया जाता है ताकि मनुष्य की खाल को कोई हानि न पहुँचे। मनुष्य की खाल बची रहे, उसकी सुन्दरता बरकरार रहे, अतः गिनी पिगों की जानें सैकड़ों/हजारों की संख्या में ले ली जाती हैं।



सुअर

सुअर यद्यपि बड़ा बदसूरत जानवर है, किन्तु वह एक सफाईदार जन्तु भी है। सफाई के प्रति हम भले ही इसके ऋणी न हों, किन्तु इतना तो कम-से-कम करें कि इसके बाल, यहां तक कि भौंहों और पलकों के भी, न नोचें और इसे जिन्दा न भूनें। लोग बाल, चर्बी और मांस के लिए सुअर को जिन्दा जला डालते हैं। यह है मनुष्य की क्रूरता का एक जीता-जागता उदाहरण।

भारत में सुअर मारने का सिलसिला 'यूनीसेफ' की पहल पर गुजरात से चला, भारत में आज सुअर मारने की ७ बड़ी फैक्टरियां हैं, जिनमें-से एक बोरीवली बम्बई स्थित नेशनल पार्क में है। यहां माफको नामक संस्थान सुअर-के-मांस का उत्पादन करता है। यहीं जैनियों का त्रिमूर्ति तीर्थ भी है।

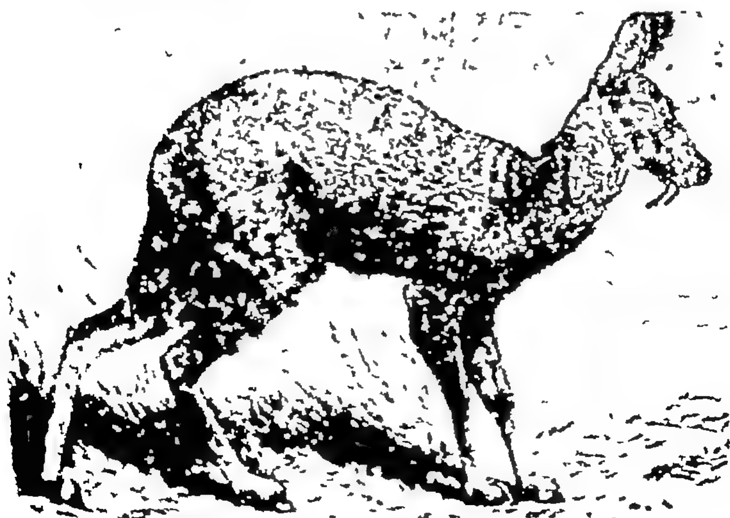
सिवेट बिल्ली-की-जाति का एक सघन रोओं वाला जानवर है। हिन्दी में इसे गन्धमार्जार के नाम से जाना जाता है। सब से पहले इसे एक सँकरे पिंजरे में डाल दिया जाता है और फिर धीरे-धीरे सता-छेद कर इसकी जान ले ली जाती है। कस्तूरी मृग को जिस तरह कस्तूरी के लिए मारा जाता है ठीक उसी तरह इसकी जान गंध/सेंट बनाने के लिए ले ली जाती है। माना जाता है कि सिवेट जितना अधिक

गुस्सा करती है उतनी ही अधिक अच्छी और अधिक कस्तूरी प्राप्त होती है, अत: उसे लकड़ी से चोंच-चोंच कर उत्तेजित किया जाता है ताकि उसकी ग्रन्थि पर कस्तूरी आये और उसे खोंच-खरोंच लिया जाए। यह कस्तूरी सिवेट के चतुर्थ गन्धाशय/पेट से प्राप्त की जाती है। १५-२० दिन बाद उसका पेट चीरा जाता है और कस्तूरी निकाल ली जाती है।



वीवर

वीवर• मूपक-जैसा जन्तु होता है। इसके शरीर से प्राप्त होने वाला तैल सौंदर्य-प्रसाधन के लिए काम मे आता है। चूंकि यह एक रोएँदार जन्तु है, इसलिए इसके चमड़े के कोट भी बनाये जाते हैं। ध्यान दें, एक कोट यानी साठ वीवरों के प्राण। एक वीवर से मिलने वाली खाल बमुश्किल रूमाल-जितनी होती है। वीवर केस्टर वंश का पशु है। इसके छोटे-छोटे कान होते हैं, दांत छैनी की तरह पैने होते हैं, आगे के पाँव छोटे होते हैं, पूंछ अन्वर/सघन होती है। इसमें-से केस्टोरियम नामक गंध प्राप्त होती है, जिसे दवा और पर्फ्यूम दोनों के काम में लाया जाता है। इसे मादक द्रव्य के रूप मे भी उपयोग मे लाते हैं। वीवर को पकड़ना आसान नहीं है, अत: इसे पकड़ने के लिए लकड़ी के खूंटे गाड़ कर उस पर लोहे के तारों का जाल बिछाया जाता है। इस जाल मे जकड़े वीवर को १५-२० दिनों तक भूख-प्यास से तड़पाया जाता है और फिर अन्तत: मनुष्य की गंधतृप्ति के लिए इसे उसकी बलि-वेदी पर चढ़ा दिया जाता है।



कस्तूरी मृग

लोमडी और हिरण भी लगातार बडी नृशंसतापूर्वक मारे जा रहे हैं। अभयारण्यों की स्थापनाओं के बावजूद हमारे देश में हिंसा का व्यापक सिलसिला जारी है। कस्तूरीमृग की हमारे काव्य/हमारी संस्कृति/हमारे पुराणों मे बड़ी ख्याति है। इस मृग की नाभि में कस्तूरी होती है। यही कस्तूरी उसके प्राणों के लिए घातक सिद्ध हुई है। कश्मीर की घाटियों मे हिरण प्रचुरता से पाये जाते हैं। इन्हें फांसने के लिए घास के नीचे जाल बिछाये जाते हैं, फँस जाने पर इसकी नाभि/टुंडी काट कर कस्तूरी निकाली जाती है तथा इसके चर्म से चप्पलें/पर्स/खिलौने आदि बनाये जाते हैं। क्या जो इत्र आप सूंघते हैं उसमें उसकी नाभि पर लगे नश्तर की प्रतिध्वनि आपको नहीं सुनायी देती ?



कराकुल

कराकुल भेडों को भी बदकिस्मती के इस शिकजे से गुजरना पडता है। कराकुल के रोएँ बेहद महीन, घुंघराले, आकर्षक और सघन होते है। स्निग्ध/मसृण रोएँ चमडी के लिए ही इसके प्राणों का अपहरण किया जाता है। मनचलों/छैलों की टोपियों और उनकी वेशभूषा के लिए इनकी खाल काम मे आती है। माना जाता है कि जन्मपूर्व यदि मेमने को मादा भेंड के पेट से निकाल लिया जाए तो उसके फर/रोएँ बेहद नफीस/नरम होते हैं। अपने इस बर्बर शौक को पूरा करने के लिए कराकुल को प्रसव-से-पूर्व ही मार डाला जाता है।

१९७६ मे रूस ने कराकुल भेड़ों की सर्वप्रथम खेप उपहार-स्वरूप भारत भेजी थी। विदेशियों के दबाव से, और विदेशी मुद्रा के लालच में कराकुल-का-सवर्द्धन शुरू हुआ। कभी-कभी तो कराकुल के साथ इतना बेरहम सलूक किया जाता है कि सुनने पर हमारा रोआं-रोआं थर्रा उठता है।

४८ घंटे के सद्य जात कराकुल-शिशु की खाल को व्यापारिक दृष्टि से सर्वोत्तम माना जाता है। इसे प्राप्त करने के लिए कराकुल भेड को बेंतों से सूंता जाता है, ताकि उसे गर्भपात हो जाए और कसाइयों को वक्त-से-पहले कराकुल-भ्रूण मिल जाए। यह बाजार में बहुत महंगे दामों पर बेची जाती है। कहां जाएगी मानव-सभ्यता प्रकृति और प्राकृतिक संपदा के साथ इस तरह का बदसलूक कर ?

कराकुल की निर्मम हत्या करने वालों से इतना अवश्य पूछा जाना चाहिये कि क्या वे एक भी कराकुल बना सकते हैं ? मिटाना आसान है, बनाना किसी सस्था, प्रवृत्ति तक का मुश्किल होता है—फिर यह तो चेतना और धड़कन का अत्यन्त संवेदनशील क्षेत्र है—इसमे तो असफलता के अलावा और कुछ हाथ लग ही नहीं ।

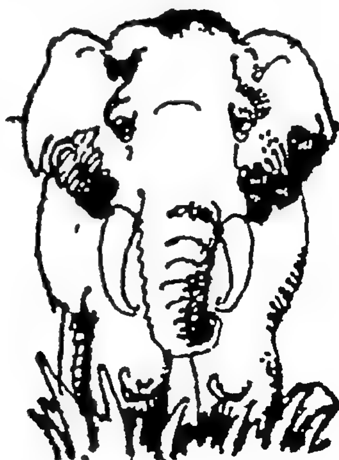


सील मछली के बच्चे

सील मछली के बच्चों के साथ मनुष्य ने जो जुल्म किये है उन्हे देखते बादलों को पानी बरसाना बन्द कर देना चाहिये। सील कनाडा मे प्रचुरता से पायी जाती है। जो लोग इसके उत्पादनों का व्यापार करते हैं वे इसे बेसबॉल की तरह-बल्ले से पीट-पीट कर मार डालते हैं। नॉर्वे मे लोहे की तीखी सलाई इसके सिर में घोंप दी जाती है ताकि इसकी खाल बेदाग/अखण्ड निकल आये । सील-शिशु की खाल से कोट बनाये जाते हैं। जब सील-शिशु लहुलुहान होता है और मादा अपने खून-से-सने तड़पते बच्चे को देखती है, तब सूरज तक कांप उठता है और समुद्र तक दहाड़ पड़ता है, किन्तु ताज्जुब मनुष्य के बर्बर शौक को कुछ भी नहीं होता।

सील-शिशु का कोट दुर्लभ वस्तु माना जाता है। वस्तुत यह इतना चपल होता है कि इसे पकड पाना कठिन होता है। शिकारियों को सील के तुरन्त जन्मे बच्चे की तलाश रहती है। वे छिपकली की तरह इस पर आंख लगाये रहते हैं। नर्म रोएंदार खाल को प्राप्त करने के लिए १३-१४ दिन के मासूम सील-शिशु को बड़ी बेरहमी से मार डाला जाता है – इतनी बेरहमी से कि एक बार आंसू के भी आंसू आ जाते हैं। औरतें जिन्हें करुणावान्/संवेदनशील माना जाता है, इसके बने कोट अधिक पहनती हैं। एक कोट मे कम-से-कम ६-१० सील-शिशुओं की मौतें अंकित रहती हैं।

हाथी →



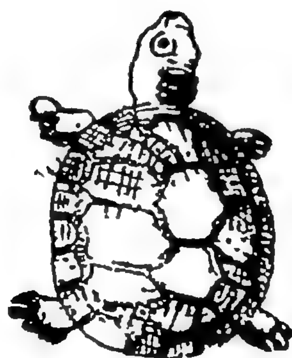
हाथी एक मांगलिक पशु है। यदि स्वप्न में वह आ जाए तो बड़ा शुभ माना जाता है, किन्तु आफ्रिका आदि मुल्कों में इसे जहरीले फल खिला कर मार डाला जाता है ताकि इसके दांत प्राप्त किये जा सकें और उनसे खिलौने, वाले और चूड़ियां बनायी जा सकें।

क्या किसी हथनी का सुहाग उजाड़ कर हाथी-दांत की चूड़ियां पहिनना उचित है?



व्हेल मछली

व्हेल दुनिया की सब से बड़ी शाकाहारी (यह मांस नहीं खाती) मछली मानी गयी है, यह लगभग ६३ फुट लम्बी होती है। यह बड़ी चेतना-सपन्न मछली होती है। इसकी शरीर-रचना मनुष्य की शरीर-रचना की तरह ही जटिल और उत्तम होती है। इसे कई घंटों मे मारना सभव होता है। मारने के लिए हार्पन ग्रेनेड का उपयोग किया जाता है। मांस-लोलुप यद्यपि इसका मांस खा जाते हैं, किन्तु मूलत इसका उपयोग एंबरगीस नामक सुगधित पदार्थ प्राप्त करने के निमित्त ही होता है। इसका जो तेल निकलता है उसे मिसाइलों के पुर्जों को चिकनाने और सुरक्षित रखने के काम मे लाते हैं। सील/डॉल्फिन के साथ भी ऐसा ही क्रूर व्यवहार मनुष्य कर रहा है।

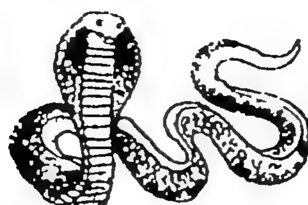


कछुआ

कछुआ जिसे संस्कृत/हिन्दी मे कच्छप भी कहते हैं एक कथा-प्रसिद्ध जलचर है, जो पृथ्वी पर भी चल लेता है, किन्तु जो प्राय नदी-तटों पर गड्ढा खोद कर छुपा पड़ा रहता है।

जो लोग इसकी टोह में रहते हैं वे बड़े कौशल से इसे उलट देते हैं और फिर बड़ी क्रूरतापूर्वक इसके कोमलांगों को टुकड़े-टुकड़े कर सबन्धित कारखानों को बेच देते हैं। इसके अवयवों से प्राप्त चर्बी से एक तेल बनाया जाता है जो सौन्दर्य-

प्रसाधन की तरह प्रयुक्त होता है। जिस कछुए का हमारे देश में ढाल के रूप में प्रयोग होता था विदेशों में आज उसे ही सौंदर्य-प्रसाधनों के रूप में काम में लिया जाता है। क्या हमारी माँ-बहिनें सौंदर्य-प्रसाधनों का इस्तेमाल करते समय अपने विवेक का उपयोग करेंगी ताकि कछुओं की तथा और-और निरीह/निर्दोष प्राणियों की जानें बच सकें ?



साँप

साँप चीन, बर्मा, और भारत में प्रचुरता में पाया जाता है। इससे लोग डरते भी हैं और इसका भोजन की तरह उपयोग भी करते हैं। भारत के उत्तरी-पूर्वी हिस्सों में साँप का भोजन की भाँति इस्तेमाल होता है। मध्यप्रदेश की आदिवासी जातियाँ भी इसे खाती हैं। हाँगकाँग में साँप के गॉल ब्लेडर से शराब/दवाइयाँ बनायी जाती हैं। साँप की वसा का उपयोग कई औषधियों के निर्माण में होता है। साँप की चमड़ी का वाणिज्यिक महत्त्व भी है, उससे पर्स/चप्पलें बनायी जाती हैं। साँप की खाल निकालने का काम बहुत क्रूर है। साँप को किसी वृक्ष के [illegible] से ठोक देते हैं और फिर एक तेज धार वाले चाकू से उसे [illegible] हैं [illegible] उसे काटते वक्त मांस के लोथड़े और खून के फव्वारे चारों ओर [illegible] करते हैं



बाघ

बाघ/बघेरा एक [illegible] [illegible]
है। [illegible]

होने का डर रहता है। बाघ को प्राय तनियों से कसा जाता है या फिर उसकी पूंछ उठा कर गुदा द्वार से गर्म सलाखा भोंक दी जाती है। इस तरह प्राप्त बाघ की खालें बहुत महँगी आती है।



कोस्सेट्रा (रेशम का कीडा)

कोस्सेट्रा रेशम के कीडे को कहते हैं। यह अपने चारों ओर नरम रेशों की गुन्थी (ककून) को जन्मता है और फिर स्वाभाविक रूप से बाहर निकल आता है, किन्तु जो लोग रेशम का कारोबार करते हैं वे इसकी जान लिये बिना नहीं मानते। वे कोस्सेट्रा को खौलते हुए पानी में उबाल-उबाल कर मार डालते हैं रेशम के एक कुर्ते या साडी में कितने कोस्सेट्राओं की जानें लिपटी होती हैं ? हजारों की। क्या वह किलबिलाहट/उनके उबाले जाने के वक्त की पीडा कभी आपको नहीं सताती ? आश्चर्य की बात तो यह है कि

दक्षिण भारत मे कर्नाटक से सैकडों जैन रेशम का धन्धा करते हैं। इस तरह रेशम आकर्षक भले ही हो, अहिंसक जीवन-शैली का अंग वह स्वप्न मे भी नहीं हो सकता।



बन्दर

मेढक और खरगोश की तरह बन्दर भी मनुष्य की क्रूर बर्बरताओं का शिकार हुआ है। वैज्ञानिकों/चिकित्सकों ने उस पर सर्वाधिक जुल्म ढाये हैं। ये सारे प्रयोग इतने वहशी हैं कि इन्हें पढ-सुन कर किसी के भी प्राण थर्रा उठ सकते हैं। बन्दरों पर दवाइयों के लिए तो प्रयोग हुए ही हैं हेअर डाइ (बालों के खिज़ाब) के लिए भी कई प्रयोग हुए हैं। इसे एक ट्यूब/नली के जरिये लिप्स्टिक टेल्कम पिलाया जाता है, जिसके दौरान या तो वह खुद-ब-खुद प्रभु को प्यारा हो जाता है या कभी नहीं हुआ तो पोस्टमार्टम द्वारा उसकी विरोधिका-शक्ति की जांच के लिए उसके प्राण ले लिये जाते हैं।

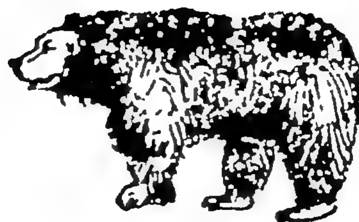
सब जानते हैं कि बन्दर एक बेहद चपल शाकाहारी पशु है, सब से बड़ी बात यह है कि डार्विन के अनुसार वह आदमी का पुरखा भी है तो देखें कि हम अपने पुरखों की कैसी फजीहत कर रहे हैं? अन्तरिक्ष-यात्रियों के संदर्भ मे बन्दर के साथ बड़ा क्रूर प्रयोग किया जाता है। इसके हाथ-पांव और शरीर को जकड़ कर महीनों डाल दिया जाता है ताकि यह जाना जा सके कि अन्तरिक्ष-यात्री इस अवस्था मे कितने समय तक जीवित रह सकेंगे। सानफ्रान्सिस्को (अमेरिका) मे बन्दरों के साथ जो प्रयोग हुए हैं, वे दिल दहलाने वाले हैं। कई चिकित्सीय प्रयोगों में उनके बाल झड़ गये हैं और कइयों मे उन्हें पक्षाघात हुआ है।

नेवला बड़ा वफादार जानवर माना जाता है, किन्तु मनुष्य ने उसे उसकी वफादारी का इनाम उसकी जान ले कर दिया है। वैसे नेवला आसानी से पकड़ मे नहीं आता है, किन्तु पकड़ने मे कुशल लोग इसे इसके बिल में-से सड़ासी द्वारा खींच लाते हैं और मार डालते हैं। इसकी खाल का उपयोग भी फैशनेबुल वस्तुओं के बनाने में किया जाता है।



शुतरमुर्ग

शुतरमुर्ग एक शाकाहारी भीमकाय पक्षी है। यह भी [illegible] क्रूरता का शिकार होने से नहीं बच सका है। एक तो जब तक यह [illegible] है तब तक हर महीने इसके बाल/पंख नोच लिये जाते हैं, [illegible] लोच [illegible] जाते हैं। इसकी खाल का उपयोग [illegible] के लिए खोले जाते हैं।



भालू

भालू मदारी की आजीविका का साधन माना गया है। वह इसे नचाता है और अपना पेट पालता है, किन्तु किस्सा यहीं खत्म नहीं हो जाता, भालू/रीछ को नाचना जिस तरह से सिखाया जाता है वह सारा काम बडा क्रूर/बेरहम है। उसे गर्म तवे पर खडा कर दिया जाता है, जिसकी आंच पा कर वह तडपने लगता है, लोग इसे नाचना मानते हैं। अनुभूति का प्रश्न है। भालू को तवे पर इतना/इतनी बार रखा जाता है कि उसे जीवन-भर यही लगता है कि वह गर्म तवे पर ही खडा है। इसे फांसने का तरीका बडा अजीब है। इसे धोखे से गडहे मे गिरा कर पकड़ लिया जाता है। इसके २४ से ४८ घंटे के सद्यजात शिशु को इसलिए मार डाला जाता है चूंकि उसकी खाल बहुत नरम होती है और उससे बडी आकर्षक/मुलायम टोपियां बन सकती हैं।

इन क्रूरताओं को जानने का एकमात्र मक्सद यही है कि हम जब भी किसी चीज को खरीदें अपने विवेक को जागृत रखें तथा ऐसी सामग्री कदापि न लें जो किसी के खून-मे-सनी हो।



कुत्ते

कुत्ते सदियों से मनुष्य की सेवा करते रहे हैं, किन्तु मनुष्य ने कभी इस वफ़ादार कौम के साथ उतना अच्छा व्यवहार नहीं किया, जितना अच्छा किया जाना चाहिये अमेरिका में नर्म खाल के कुत्तों का एक साथ क़त्ल कर दिया जाता है। इन्हें क़तार में खड़ा कर दिया जाता है और बिजली के करंट से मार दिया जाता है। इनमें

अधिकांश पप्स होते हैं। इसकी नर्म खाल के पर्स बनाये जाते हैं। देश की नगर-पालिकाएँ/नगरपालिक निगम आवारा कुत्तों को प्रतिदिन बहुत बड़ी संख्या में बिजली के शॉक से, या जहर दे कर मार डालते हैं।



मिंक (गंध-मार्जार)

मिंक, या चिन्चिल्ला एक रोएँदार खूबसूरत जानवर है। दुर्भाग्य से रोमवाले पशुओं पर आदमी हमेशा से कहर ढाता रहा है। मिंक एक निरीह प्राणी है, जो अपने मसृण/चिकने रोओं के लिए मशहूर है। मिंक की खाल जिस तरह खींची जाती है, वह एक लोमहर्षक दृश्य है। इसके फर (रोमों) से टोपियाँ/कोट/स्वेटर/खिलौने/ब्लेंकेट/पर्स/सीट-कव्हर्स इत्यादि बनाये जाते हैं। जिनकी खाल का आदमी लगातार इस्तेमाल करता आ रहा है वे हैं खरगोश, कराकुल, भेड़, मिंक, गिलहरी, रीछ, कुत्ता, बकरा आदि। मिंक लगभग २० सेंटीमीटर लम्बा जानवर होता है। यह नर-वानर (प्राइमेट) श्रेणी का जन्तु है। इसके कान गोल, आँखें सुदीर्घ, और प्रांजल होती हैं। यह ज्यादातर दक्षिण भारत और लंका में पाया जाता है। विश्व में मिंक-उत्पादनों में विगत चालीस वर्षों में काफी वृद्धि हुई है। अब तो भारत भी होड़ में आगे आ गया है (अच्छाइयों की होड़ में आगे आने की आदत वह धीरे-धीरे भूल रहा है)। आज से ४० साल पहले साढ़े तीन लाख मिंकों की हत्या होती थी, किन्तु आज यह संख्या ढाई करोड़ हो गयी है अर्थात् हर साल दुनिया में ढाई करोड़ मिंक मौत के घाट उतार दिये जाते हैं, क्यों?

स्पष्टतः मनुष्य के मौज-शौक के लिए। दुःखद यह है कि मिंकों का सारा जीवन पिंजरों में बीतता है, किन्तु जैसे ही इनकी चमड़ी व्यापारिक दृष्टि से काम में आने-जैसी हो जाती है, इन्हें मार डाला जाता है।

फर/रोएँ के व्यापार ने भारत को भी हिंसा की अन्तहीन दौड़ में ला खड़ा किया है। कश्मीर में कुलू से कोई सत्तर मील दूर गारसा है जहाँ खरगोश की खाल का एक व्यवसाय खड़ा किया गया है। खरगोशों के संवर्द्धन के लिए फार्म बनाये गये हैं, जिनमें खरगोशों को इसलिए पाला जाता है ताकि आगे चल कर उनकी खाल खींची जाए और विदेशी मुद्रा को देश में आकर्षित किया जाए। जिस तरह कश्मीर में खरगोश की खाल उतारी जाती है ठीक ऐसे ही बीकानेर (राजस्थान) में कराकुल भेड़ों की खालें उतारी जाती हैं।

ग्राइये, फिर एक बार मिक-के-किस्से पर ग्रायें। मिक-शिशु बहुत सुन्दर होता है, शिशु दुनिया-भर के सुन्दर ग्रौर निरीह होते हैं। वे भगवत्-रूप होते हैं। इन शिशुग्रों की पीठ पर एक सुनहला पट्टा होता है, जो बड़ा होने पर लुप्त हो जाता है, ग्रत इन्हें कम उम्र में ही मार डाला जाता है।

इन पट्टों से महिलाग्रों-के-कोट बनाये जाते हैं। एक कोट मे सैकड़ों पट्टे लगते हैं। यूरोप ग्रौर ग्रमरीका की ग्रमीर महिलाएँ 'चिन्चिल्ला कोट' पहनती हैं। यह कोट संसार का सबसे महँगा कोट माना जाता है।

खरगोश की खाल तो खींची ही जाती है उसे कई ग्रौर-ग्रौर प्रयोगों में भी शहीद होना होता है।

बाजार में तरह-तरह के शेम्पू मिलते हैं, किन्तु शायद ग्राप नहीं जानते कि इन शेम्पू-तरलों मे खरगोश का ग्रन्धत्व/उसकी मौत घुली हुई है।

कहीं शेम्पू इनका उपयोग करने वाली कोमलांग नारियों की ग्रांख न ले बैठे, या कहीं उनके कोमल चर्म/त्वक् को कोई नुकसान न पहुँच जाए, ग्रत· प्रयत्न किया जाता है कि इसे ग्रधिकाधिक निरापद बना लिया जाए। ऐसा करने में खरगोश की ग्रांखें चली जाती हैं ग्रौर उनमें खून उभर ग्राता है। शेम्पू को



खरगोश

बाजार मे लाने से पहले उसे खरगोश की नरम ग्रांखों मे डाला जाता है। ऐसा उसे बांध कर ही किया जा सकता है, क्योंकि इससे जो तड़पन ग्रौर कष्ट उसे होता है उसकी हम कल्पना नहीं कर सकते। ग्रांखें खुली रहने के लिए कभी तो उसकी पलकों को टांक दिया जाता है ग्रौर कभी ग्राइग्रोपनर्स का उपयोग किया जाता है।

हम समझते हैं शेम्पू के स्थान पर ग्रौर बहुत सारे विकल्प हैं जिनका उपयोग सरलता से ग्रौर ग्रधिक प्रभावशीलता के साथ किया जा सकता है।

एस्ट्रोजन प्राप्त करने की कथा भी बड़ी दर्दनाक है। एस्ट्रोजन परफ्यूमरी के काम ग्राता है। इसे गर्भवती घोड़ी के मूत्र से प्राप्त किया जाता है। घोड़ी को डंडों से मारा जाता है ताकि मूत्र दे ग्रौर ग्रधिकाधिक एस्ट्रोजन उपलब्ध हो। एस्ट्रोजन के लिए घोड़ी को प्राय. गर्भवती रखने की कोशिश भी की जाती है। ग्रौर भी हैं कई जुल्म ग्रादमी के जो वह लगातार पशुग्रों पर, ग्रौर प्रकृति पर ढा रहा है, किन्तु हमने यहां चुने हुए कुछ इसलिए दिये हैं ताकि हमारा विवेक जगे ग्रौर हम रोजमर्रा के काम में ग्राने वाली वस्तुग्रों को ग्रहिंसा के संदर्भ मे ही खरीद सकें, या काम में ला सकें।



→

○ भारत में सुअर मारने का सिलसिला 'यूनीसेफ' की पहल पर गुजरात में चला। भारत में आज सुअर मारने की ७ बड़ी फैक्टरियाँ हैं, जिनमें-से एक [illegible] [illegible]-[illegible] नेशनल पार्क में है। वहाँ 'मापको' नामक संस्थान सुअर-के-मांस का उत्पादन करता है। यहीं जैनियों का त्रिमूर्ति तीर्थ भी है। —पृ. १४

○ [illegible] को १५-२० दिनों तक भूख-प्यास में तड़पाया जाता है और फिर अन्ततः मनुष्य की [illegible] के लिए उसे उसकी बलिवेदी पर चढ़ा दिया जाता है। —पृ. १५

○ क्या जो इत्र आप सूंघते हैं उसमें कस्तूरी मृग की नाभि पर लगे नश्तर की चीत्कार आपको नहीं सुनायी देती? —पृ. १६

○ ४८ घंटे के सद्य जात कराकुल-शिशु की खाल को व्यापारिक दृष्टि से सर्वोत्तम माना जाता है। इसे प्राप्त करने के लिए कराकुल भेड़ को बेंतों से सूंता जाता है, ताकि उसे गर्भपात हो जाए और कसाइयों को वक्त-से-पहले कराकुल-भ्रूण मिल जाए। इसकी खाल बाजार में बहुत महँगे दामों पर बेची जाती है। कहाँ पहुँचेगी मानव-सभ्यता प्रकृति और प्राकृतिक सपदा के साथ इस तरह का बदसलूक कर? —पृ. १६

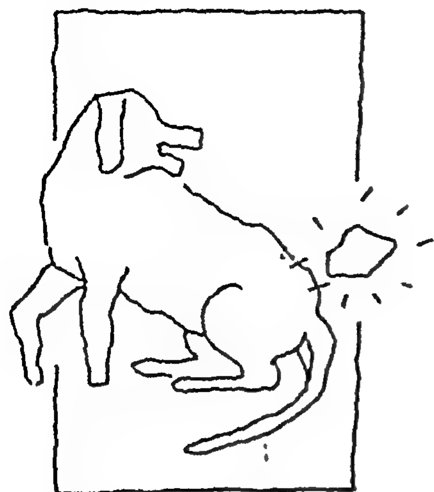
"जिस क्षण मनुष्य की ये बर्बरताएँ थमेंगी उस दिन फिर यह धरती सुखद/सह्य बनेगी; किन्तु अफसोस, हिंसा का दौर बढ़ रहा है और पृथ्वी-पर-से पशु-पक्षियो की कई नस्ले समाप्त हो रही हैं। कीटनाशक दवाओ और रासायनिक द्रवो ने इस सदी में जो गजब ढाया है, वह किसी महाप्रलय से कम नही है। यह दुनिया बहुत बड़ी है। खूबसूरत है। इसमे पहाड़ हैं। घने वन हैं। कल-कल बहती नदियाँ हैं। निरन्तर प्रवाहित झरने हैं। कुहुकती कोयले हैं। फुदकते चंचल-चपल बदर हैं। तेज-दौड़ते खरगोश हैं। भागती-कूदती गिलहरियाँ हैं। नामालूम कितने मासूम प्राणी हमारी इस धरती के निवासी हैं; किन्तु मजा यह है कि वे हमें निभा रहे हैं और हम उन्हें निभा नहीं पा रहे हैं।"











ना बाबा ना

ना लाला ना

डॉ. नेमीचन्द

ना वावा ना
डॉ नेमीचन्द

प्रकाशन : हीरा भैया प्रकाशन
६५, पत्रकार कॉलोनी,
कनाडिया मार्ग,
इन्दौर- ४५२ ००१ मध्यप्रदेश

चित्रांकण सतोष जडिया
सयोजन : आर पाचाल

पहली बार : नवम्बर १९९२
दूसरी बार : अप्रैल १९९४
तीसरी बार : अक्टूबर १९९४
चौथी बार : नवम्बर १९९५
पांचवी बार : फरवरी १९९६
छठी बार फरवरी १९९७
सातवीं बार : मई १९९७

कुल प्रतियाँ : २७,०००
मुद्रण नईदुनिया प्रिंटरी,
बाबू लाभचन्द छजलानी मार्ग,
इन्दौर- ४५२ ००९ मध्यप्रदेश

मूल्य तीन रुपये

ISBN 81-85760-05-5
अन्तर्राष्ट्रीय मानक पुस्तक संख्या-
81-85760-01-5

सुनिये

ना बाबा ना अद्‌भुत है इसलिए कि यह हिंसा, हत्या, खून-खराबा, मारकाट, क्रूरता और आतंक के इन अप्रिय-वीभत्स क्षणो मे हमारे आगे खड़ी पीढ़ी के मन मे करुणा की मिसरी घोलने का काम करती है। यदि हम हर काम मे करुणा की पहल नहीं करेंगे तो तय है कि हमारी बेरहम-निष्ठुर मानसिकता पूरे देश को जड़-मूल से उखाड़ देगी।

मेरा मानना है, हम सब भी यही देख-सुन रहे हैं, कि हमारे देश मे — कहे पूरी दुनिया मे — हिंसा ने बड़ी मजबूती और ताक़त से अपने पांव जमा लिये हैं।

हम अपनी अर्थ-व्यवस्था, समाज-संरचना, नीति, धर्म, संस्कृति आदि का ध्यान रखे बिना मात्र शौक़, मनोरंजन, स्वाद, और सुविधा के लिए अपने पर्यावरण का सर्वनाश करने पर आमादा है और उन जीव-जन्तुओं तथा पेड़-पौधों का, जो सदियो से हमारा साथ दे रहे हैं, व्यापक संहार कर रहे है।

खान-पान और रहन-सहन के अशुद्ध और हिंसक हो जाने की वजह से हम हर कहीं युद्ध लड़ रहे है, कई मुल्को को भुखमरी की भट्टी मे झोंक रहे हैं, हत्याएँ कर रहे हैं, हरी-भरी धरती को रेगिस्तान बना रहे है, और इस तरह, अन्ततः अपनी आने वाली पीढ़ी की राह मे काँटे डाल रहे है।

इस छोटी-सी पुस्तिका मे मैंने उन विषम परिस्थितियो की ओर तर्कसंगत इशारा किया है जिनसे हम बच सकते है और कर सकते है अपने पर्यावरण की रक्षा।

हमारा कर्तव्य है कि हम स्कूलो/परिवारो मे बच्चो को यह बताये कि पेड़-पौधे और पशु-पक्षी हमारे साथी-सहयोगी है, अत हम उन्हे कोई कष्ट न दे उनकी जी-जान से रक्षा करे, उन्हे प्यार दे, और बदले मे उनसे भरपूर मनोरंजन प्राप्त करे।

मुझे विश्वास है यह नन्ही-सी किताब घर-घर की दहलीज पर [illegible] होगी और [illegible] देगी।

[illegible]
[illegible] सितम्बर [illegible]

—डॉ. नेमीचन्द,
सम्पादक तीर्थंकर [illegible]

सुनिये

ना बाबा ना अद्‌भुत है इसलिए कि यह हिंसा, हत्या, खून-खराबा, मारकाट, क्रूरता और आतक के इन अप्रिय-वीभत्स क्षणो मे हमारे आगे खडी पीढी के मन मे करुणा की मिसरी घोलने का काम करती है। यदि हम हर काम मे करुणा की पहल नहीं करेंगे तो तय है कि हमारी बेरहम-निष्ठुर मानसिकता पूरे देश को जड-मूल से उखाड देगी।

मेरा मानना है, हम सब भी यही देख-सुन रहे हैं, कि हमारे देश मे — कहे पूरी दुनिया मे — क्रूरता ने बडी मजबूती और ताक़त से अपने पाँव जमा लिये हैं।

हम अपनी अर्थ-व्यवस्था, समाज-सरचना, नीति, धर्म, सस्कृति आदि का ध्यान रखे बिना मात्र शौक़, मनोरजन, स्वाद, और सुविधा के लिए अपने पर्यावरण का सर्वनाश करने पर आमादा हैं और उन जीव-जन्तुओ तथा पेड-पौधो का, जो सदियो से हमारा साथ दे रहे हैं, व्यापक सहार कर रहे हैं।

खान-पान और रहन-सहन के अशुद्ध और हिंसक हो जाने की वजह से हम हर कहीं युद्ध लड रहे हैं, कई मुल्को को भुखमरी की भट्टी मे झोक रहे हैं, हत्याएँ कर रहे हैं, हरी-भरी धरती को रेगिस्तान बना रहे हैं, और इस तरह, अन्तत अपनी आने वाली पीढी की राह मे काँटे डाल रहे हैं।

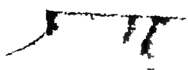
इस छोटी-सी पुस्तिका मे मैंने उन विषम परिस्थितियो की ओर तर्कसगत इशारा किया है जिनसे हम बच सकते हैं और कर सकते हैं अपने पर्यावरण की रक्षा।

हमारा कर्तव्य है कि हम स्कूलो/परिवारो मे बच्चो को यह बताये कि पेड-पौधे और पशु-पक्षी हमारे साथी-सगाती हैं, अत हम उन्हे कोई कष्ट न दे, उनकी जी-जान से रक्षा करे, उन्हे प्यार दे, और बदले मे उनसे भरपूर मनोरजन प्राप्त करे।

हमे विश्वास है यह नन्ही-सी किताब घर-घर की देहलीज पर मुस्करा कर जा खडी होगी और आबालवृद्ध सबको करुणा का अमर सदेश देगी।

न्दौर,
१ दिसम्बर १९९२

—डॉ नेमीचन्द,
सपादक 'तीर्थंकर' 'शाकाहार-क्रान्ति'



ना बाबा ना
डॉ नेमीचन्द

प्रकाशन : हीरा भैया प्रकाशन
६५, पत्रकार कॉलोनी,
कनाडिया मार्ग,
इन्दौर- ४५२ ००१ मध्यप्रदेश

चित्रांकन : संतोष जडिया
संयोजन : आर पांचाल

पहली बार : नवम्बर १९९२
दूसरी बार : अप्रैल १९९४
तीसरी बार : अक्टूबर १९९४
चौथी बार : नवम्बर १९९५
पांचवी बार : फरवरी १९९६
छठी बार फरवरी १९९७
सातवीं बार : मई १९९७

कुल प्रतियाँ : २७,०००
मुद्रण नईदुनिया प्रिंटरी,
बाबू लाभचन्द छजलानी मार्ग,
इन्दौर- ४५२ ००९ मध्यप्रदेश

मूल्य तीन रुपये

ISBN 81-85760-05-5
अन्तर्राष्ट्रीय मानक पुस्तक संख्या-
81-85760-01-5

ना वात्रा ना
डॉ नेमीचन्द

प्रकाशन : हीरा भैया प्रकाशन
६५, पत्रकार कॉलोनी,
कनाडिया मार्ग,
इन्दौर- ४५२ ००१ मध्यप्रदेश

चित्रांकण : सतोष जडिया
सयोजन : आर पाचाल

पहली बार : नवम्बर १९९२
दूसरी बार : अप्रैल १९९४
तीसरी बार : अक्टूबर १९९४
चौथी बार : नवम्बर १९९५
पांचवी बार : फरवरी १९९६
छठी बार फरवरी १९९७
सातवीं बार : मई १९९७

कुल प्रतियाँ : २७,०००
मुद्रण नईदुनिया प्रिंटरी,
बाबू लाभचन्द छजलानी मार्ग,
इन्दौर- ४५२ ००९ मध्यप्रदेश

मूल्य तीन रुपये

ISBN 81-85760-05-5
अन्तर्राष्ट्रीय मानक पुस्तक सख्या-
81-85760-01-5

सुनिये

ना बाबा ना अद्भुत है इसलिए कि यह हिंसा, हत्या, खून-खराबा, मारकाट, क्रूरता और आतक के इन अप्रिय-बीभत्स क्षणो मे हमारे आगे खडी पीढी के मन मे करुणा की मिसरी घोलने का काम करती है। यदि हम हर काम मे करुणा की पहल नहीं करेंगे तो तय है कि हमारी बेरहम-निष्ठुर मानसिकता पूरे देश को जड-मूल से उखाड देगी।

मेरा मानना है, हम सब भी यही देख-सुन रहे हैं, कि हमारे देश मे — कहे पूरी दुनिया मे — क्रूरता ने बडी मजबूती और ताक़त से अपने पाँव जमा लिये हैं।

हम अपनी अर्थ-व्यवस्था, समाज-सरचना, नीति, धर्म, सस्कृति आदि का ध्यान रखे बिना मात्र शौक़, मनोरजन, स्वाद, और सुविधा के लिए अपने पर्यावरण का सर्वनाश करने पर आमादा हैं और उन जीव-जन्तुओ तथा पेड-पौधो का, जो सदियो से हमारा साथ दे रहे हैं, व्यापक सहार कर रहे हैं।

खान-पान और रहन-सहन के अशुद्ध और हिंसक हो जाने की वजह से हम हर कहीं युद्ध लड रहे हैं, कई मुल्को को भुखमरी की भट्टी मे झोक रहे हैं, हत्याएँ कर रहे हैं, हरी-भरी धरती को रेगिस्तान बना रहे हैं, और इस तरह, अन्तत अपनी आने वाली पीढी की राह में काँटे डाल रहे हैं।

इस छोटी-सी पुस्तिका मे मैंने उन विषम परिस्थितियो की ओर तर्कसगत इशारा किया है जिनसे हम बच सकते हैं और कर सकते हैं अपने पर्यावरण की रक्षा।

हमारा कर्तव्य है कि हम स्कूलो/परिवारो मे बच्चो को यह बताये कि पेड-पौधे और पशु-पक्षी हमारे साथी-सगाती हैं, अत हम उन्हे कोई कष्ट न दे, उनकी जी-जान से रक्षा करे, उन्हे प्यार दे, और बदले मे उनसे भरपूर मनोरजन प्राप्त करे।

हमे विश्वास है यह नन्ही-सी किताब घर-घर की देहलीज पर मुस्करा कर जा खडी होगी और आबालवृद्ध सबको करुणा का अमर सदेश देगी।

न्दौर,
। दिसम्बर १९९२

—डॉ नेमीचन्द,
सपादक 'तीर्थंकर' 'शाकाहार-क्रान्ति'

ना बाबा ना

दो घटनाएँ अकस्मात् याद आ रही
हैं। एक टीचर हैं। सूझबूझ के
धनी। बैठकखाने मे बैठे चाय की
चुस्कियाँ ले रहे हैं। खुश हैं। खब्ती
नहीं हैं, किन्तु उनमे एक
जानलेवा आदत है। जहाँ भी
चीटियाँ दीख पडती हैं, उन्हे
गिन-गिन कर मार डालते हैं। रूम
की फर्श पक्की है। टाइल लगे हैं,
किन्तु जिन्दगी-जिन्दगी है, वह
पाताल/पाषाण फोड कर भी उबक
आती है। एक दरार मे-से काली
चीटियो का एक रेला चला आ
रहा है। टीचरजी की आँख उन
पर पड गयी है। वे उन्हे मारने
लगे हैं। मैं अवाक् हूँ। हाथ
पकडना चाहती हूँ—पकड नही पा
रही हूँ। पूछ रही हूँ —यह क्या
कर रहे हैं? क्यो ले रहे है नन्ही
जान इन चीटियो की? क्या
बिगाडा है इनने आपका? बोले—
बिगाडा कुछ नही है, पर मैडम,
मज़ा आता है। मैं उठ कर चली
गयी और फिर कभी उस
बैठकखाने मे नही गयी।

एक बार एक सज्जन से आकस्मिक
भेट हो गयी। वे सोफे पर बैठे थे।
बरसात के दिन थे। उनके रहने
का तरीका बहुत स्वच्छ नही था।
मक्खियाँ चारो ओर थी। मक्खियो
का कोई दोष भी नही था। यदि
स्वच्छता होती तो शायद वे वहाँ
न होती, किन्तु मैं स्तब्ध हूँ कि ये
सज्जन भी उन टीचर महाशय की
तरह मक्खियो पर पिले पडे हैं।
और बेतहासा मारे जा रहे हैं।
आसपास मक्खियो का ढेर है और
ये इत्मीनान से बैठे हैं। मैंने
पूछा— यह आप क्या कर रहे हैं?
बोले मैडम, यह तो रोज का काम
है। इसमे मुझे आनन्द आता है।
आई सिम्पली एजॉय दिस। मुझे
मतली-जैसी हो आयी और मैं हाथ
जोड कर बिना कुछ बोले भाग
खडी हुई।

जाने से पहले इन दोनो से मैंने
एक सवाल किया था — क्या आप
कोई चींटी या मक्खी
हैं?

टीचरजी ने कहा— देखिये बहिनजी, बनाना हमारा काम नही है। हम मिटा सकते है, बना नही सकते, बनाने वाला अपना काम कर रहा है, हम अपना काम कर रहे है। हम दोनो ने अपना-अपना काम बॉट लिया है। मैंने उठते-उठते उनसे कहा था — और यदि कोई कनपटी-मार जैसे रक्तपिपासु से आपका वास्ता पड जाए और आप उसके शिकार हो जाएँ तो क्या हो? बोले कानून है जो उस पर लागू होगा और हम या हम-जैसे बचा लिये जाएँगे। यानी आदमी ने अपने लिए कानून बना रखे है और दूसरे प्राणियो की रक्षा के लिए कानून नही है!! मक्खीमार महाशय ने कोई उत्तर नही दिया। वे शायद कुछ सोचने लगे हो।

पर ऐसा नही है कि दुनिया मे सिर्फ क्रूर/बेरहम/अविवेकी लोग ही है। कुछ रहमदिल लोग हुए है, जिनका ध्यान मनुष्य की दुष्टताओ और क्रूरताओ की ओर गया। अतीत मे, सभी मुल्को मे ऐसे लोगो की कमी नही रही है। ऋषि-मुनि-सत अहिंसा पर समर्पित रहे है और उन्होने पेड-पौधो/पशु-पक्षियो को गले लगाया है— उनकी प्राण-रक्षा के लिए अपने प्राणो की बाजी लगायी है। उनकी एक-एक सॉस ने दुनिया की हर एक सॉस का सम्मान किया है।

अमेरिका मे एक आदमी हुआ क्लीवलैड एमोरी (न्यूयॉर्क/ इस सदी का आठवॉ दशक) जिसने पशुओ पर होने वाली ज्यादतियो और क्रूरताओ, अत्याचारो और जुल्मो के खिलाफ आवाज उठायी और लाखो प्राणियो की जान बचायी। वह कहा करता था कि हम दयालु/करुणावान् क्यो नही हो सकते? (व्हाय काट वी वी काइड?)। ऐसा क्या है जो हमे दयालु होने से रोकता है? इसी तरह का काम 'बिउटी विदाउट क्रुएल्टी' की सस्थापिका लेडी मुरील डाउडिंग ने किया। वे दया/करुणा की प्रतिमूर्ति सिद्ध हुई।

क्या हम अपनी रोज़मर्रा की जिन्दगी मे करुणा को सम्मिलित

मुर्दा आहार (डेड फूड) की श्रेणी मे आता है, अत दुनिया-भर के लोगो ने अब इस सचाई को मानना शुरू कर दिया है कि जो जितना अधिक मासाहार करता है, वह उतना अधिक हृदयाघात (हार्ट-अटैक), अम्लता (एसिडिटी), अतितनाव (हायपर-टेशन) और यहाँ तक कि कैसर के नजदीक भी होता जाता है। विश्व-भर से प्राप्त आँकडो से अब यह बिलकुल स्पष्ट हो गया है कि **भलीभाँति सतुलित शाकाहार ही स्वास्थ्यप्रद जीवन का एकमात्र उपाय है।**

४५. शाकाहार के उत्पादन मे जल की कम-से-कम खपत होती है। उदाहरण के लिए प्रस्तुत हैं कैलीफोर्निया के ये आँकडे—

एक पौंड	गैलन/जल	एक पौंड	गैलन/जल
टमाटर	२३	अगूर	७०
आलू	२४	दूध	१३०
गेहूँ	२५	अण्डे	५४४
गाजर	३३	चूज़े	८१५
सेवफल	४९	सूअर-का-माँस	१६३०
सतरा	६५	गोमास	५२१४

उल्लेखनीय है कि यदि कोई व्यक्ति हफ्ते मे पाँच बार ५-५ मिनिट फव्वारा-स्नान करे तो प्रतिदिन २० गैलन जल के हिसाब से हफ्ते-भर मे १०० गैलन जल का उपयोग करेगा अर्थात् पूरे वर्ष मे ५,२०० गैलन जल। इसका मतलब यह हुआ कि एक पौंड गोमास के उत्पादन में जितना पानी लगता है उससे कम मे एक व्यक्ति आराम से पूरे वर्ष स्नान कर सकता है।

४६ लोमा लिडा यूनिवर्सिटी (अमेरिका) स्थित स्वास्थ्य अनुसधान केन्द्र के निदेशक डॉ गेरी फ्रेजर ने कहा है कि ताजा अध्ययन इस बात का सकेत देते हैं कि बादाम, काजू, पिस्ता, अखरोट आदि मे बीटा केरोटिन, विटामिन ई और विरोधी ऑक्सीकर (एटी-ऑक्सीडैट्स) होते हैं, जो कैसर से रक्षा कर सकते है।

४७. बोस्टन-स्थित 'ओल्डवेज प्रिजर्वेशन एड एक्सचेज ट्रस्ट', जो आहार, पाकशास्त्र और कृषि की सास्कृतिक परम्पराओ की रक्षा और उनके सार्वभौम विनिमय के लिए समर्पित है, ने एक नये भूमध्यसागरीय आहार फार्मूले का प्रतिपादन किया है, जिसे 'भूमध्यसागरीय आहार पिरामिड' नाम दिया गया है। पिरामिड है— वृक्ष की गिरियाँ

टीचरजी ने कहा— देखिये बहिनजी, बनाना हमारा काम नही है। हम मिटा सकते है, बना नही सकते, बनाने वाला अपना काम कर रहा है, हम अपना काम कर रहे है। हम दोनो ने अपना-अपना काम बॉट लिया है। मैंने उठते-उठते उनसे कहा था — और यदि कोई कनपटी-मार जैसे रक्तपिपासु से आपका वास्ता पड जाए और आप उसके शिकार हो जाएँ तो क्या हो? बोले कानून है जो उस पर लागू होगा और हम या हम-जैसे बचा लिये जाएँगे। यानी आदमी ने अपने लिए कानून बना रखे है और दूसरे प्राणियो की रक्षा के लिए कानून नही है।। मक्खीमार महाशय ने कोई उत्तर नही दिया। वे शायद कुछ सोचने लगे हो।

पर ऐसा नही है कि दुनिया मे सिर्फ क्रूर/बेरहम/अविवेकी लोग ही है। कुछ रहमदिल लोग हुए है, जिनका ध्यान मनुष्य की दुष्टताओ और क्रूरताओ की ओर गया। अतीत मे, सभी मुल्को मे ऐसे लोगो की कमी नही रही है। ऋषि-मुनि-सत अहिंसा पर समर्पित रहे है और उन्होने पेड-पौधो/पशु-पक्षियो को गले लगाया है— उनकी प्राण-रक्षा के लिए अपने प्राणो की बाजी लगायी है। उनकी एक-एक सॉस ने दुनिया की हर एक सॉस का सम्मान किया है।

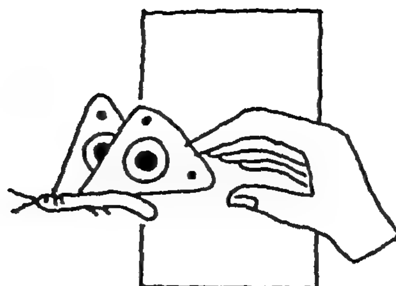
अमेरिका मे एक आदमी हुआ क्लीवलैड एमोरी (न्यूयॉर्क/ इस सदी का आठवॉ दशक) जिसने पशुओ पर होने वाली ज्यादतियो और क्रूरताओ, अत्याचारो और जुल्मो के खिलाफ आवाज़ उठायी और लाखो प्राणियो की जान बचायी। वह कहा करता था कि हम दयालु/करुणावान् क्यो नही हो सकते? (व्हाय कांट वी बी काइड?)। ऐसा क्या है जो हमे दयालु होने से रोकता है? इसी तरह का काम 'बिउटी विदाउट क्रुएल्टी' की सस्थापिका लेडी मुरील डाउडिंग ने किया। वे दया/करुणा की प्रतिमूर्ति सिद्ध हुई।

क्या हम अपनी रोजमर्रा की जिन्दगी मे करुणा को सम्मिलित

नही कर सकते? क्या हम दुनिया के तमाम प्राणियो/पशु-पक्षियो/पेड-पौधो/कीडे-मकोडो को अपना सखा/दोस्त नही बना सकते? जब ये' सब/सारे मिल कर हमारे जीवन की रक्षा करते हैं, तब फिर क्या हमारा यह कर्त्तव्य नही है कि हम सब मिल कर इनकी जीवन-रक्षा के लिए हर पल तैयार रहे?

किन्तु ऐसा हम कर कहाँ रहे हैं? कौन है जो गौतम बुद्ध की तरह कहे कि पशु-पक्षियो को माता-की-मानिंद प्यार और वात्सल्य दो? है कोई जो गाँधी के स्वर मे स्वर मिला कर कहे कि पशु-पक्षियो के प्रति दुर्व्यवहार पशु-वध के समान है। ईसा मसीह/ पैगम्बर मुहम्मद कहाँ कौन है जो यह कह रहा हो कि पशु-पक्षियो पर जुल्म करो, उन्हे सताओ, उनकी जान लो, उन्हे मारो— या उन्हे अपना आहार बनाओ। इनमे-से कोई एक भी इस तरह का उपदेश नही दे रहा है
पर्यावरण-विज्ञानी भी अब कह रहे हैं कि दुनिया के समस्त प्राणियो का अस्तित्व एक-दूसरे पर निर्भर है। एक की हत्या का मतलब दूसरे की हत्या है न सही तत्काल, किन्तु पूरे लोक मे कहीं-न-कही/कभी-न-कभी।
तो सवाल उठता है कि क्या हम मनोरजन या विनोद के लिए तितली, चिडिया, भौंरा इत्यादि को मारे, उन्हे सताये, या उनका शिकार करे? एक फुदकती चिडिया को गुलेल का निशाना बनाने मे कौन-सी शूरवीरता है? एक तोते को पीजरे मे डाल कर और वह भी सकरे पीजरे मे डाल कर उसे पीडा पहुँचाना कौन-सी दिलेरी है— क्या हमे ऐसी सारी क्रूरताएँ करनी चाहिये? क्या कानून मे कही ऐसे दुष्ट लोगो के लिए कोई प्रावधान है? तो आइये हम ऐसे कुछ प्रसगो को सतोप जडिया की सरल रेखाओ मे देखे और अपनी जुल्म-ज्यादतियो पर रुक कर विचार करे।

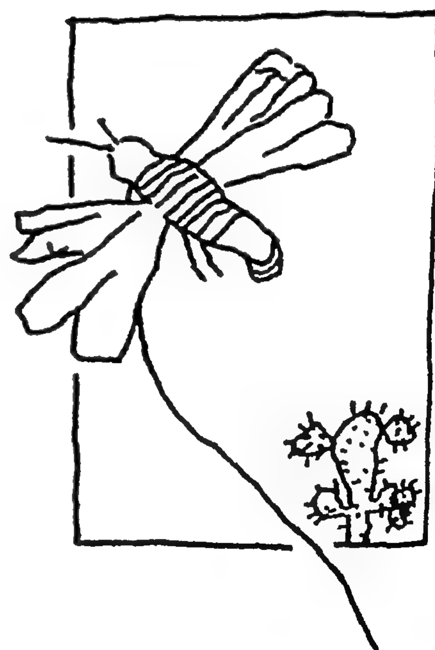
आप तितली पकड रहे हैं? न बाबा न, यह गजब न ढाये। इस रगविरगे अस्तित्व को अपने 'होने' का अहसास होने दे— आनन्द [illegible]



दे, ठीक उसी तरह जिस तरह आप अपने 'होने' का मजा ले रहे हैं। वह आपको पकड रही है क्या? इसके उपकार आप नही जानते। यह एक फूल से दूसरे पर जा कर एक-दूसरे को एक-दूसरे का सदेश देती है— उनके सवर्द्धन मे सहयोग करती है। उन्हें प्यार देती है। उन्हे चूमती है। उन्हे बढते रहने का आशीर्वाद देती है और हमारी ऑखो मे आनन्द की अद्भुत तरगे पैदा करती हैं तो फिर आप भला इसे क्यो सताये? आप इसे मारिये मत— इसे इसकी भरपूर आज़ादी मे जीने दीजिये और इसकी तरह सक्रिय और उपयोगी बनिये। कोई भी प्राणी एक पाठशाला है—

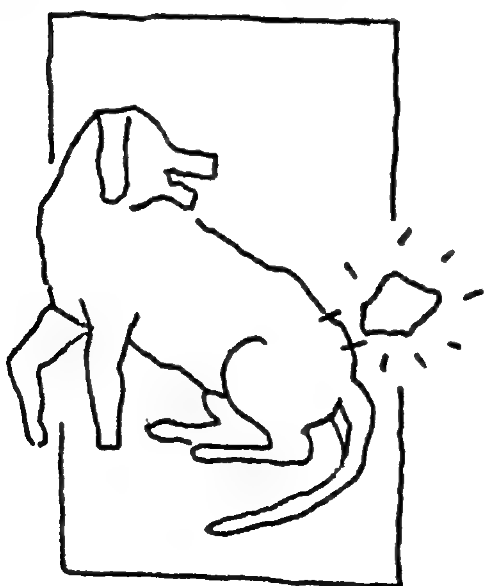
इन सारी पाठशालाओ को धराशायी क्यो किये जा रहे है?

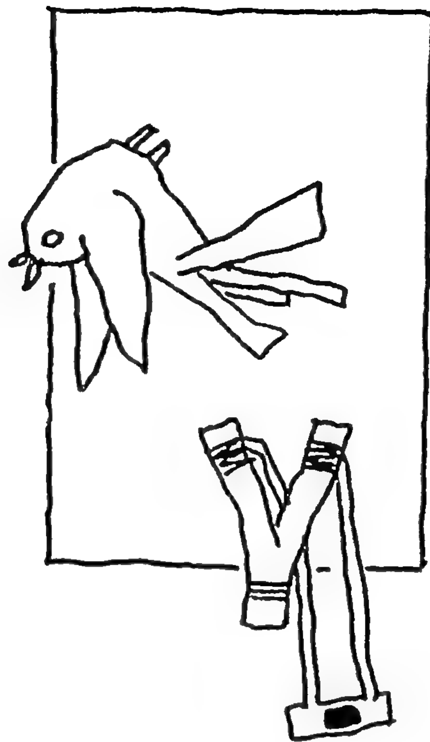
और यहाँ यह क्या कर रहे हैं? आपने तो उसे पतग के किन्नो की



तरह बाँध दिया है और उडा रहे हैं! उसे आपने अपना गुलाम बना लिया है और यदि कोई और आपके साथ इस तरह का सुलूक करे तो तब आप क्या करेंगे? न भाई न, ऐसा मत कीजिये और इस कहावत का ध्यान रखिये कि आप सबके साथ ऐसा ही बर्ताव करे जैसे-कि-आशा आप उनसे अपने लिए करते हैं। भला बबूल, या थूहर बो कर क्या बबूल अथवा थूहर के अलावा और किसी की आशा कर सकते हैं?

और इस स्वामिभक्त कुत्ते ने आपका क्या बिगाडा है कि आप इस पर यूँ ही चलते रास्ते पत्थर चला रहे हैं। यह अपनी डगर चल रहा है, आप अपनी, न कोई हस्तक्षेप, न कोई दखलदाजी— फिर ऐसा क्यो कर रहे हैं जनाब इस प्राणी के साथ, जो आपकी सावधान पहरेदारी करता है और समय आने पर आपके लिए जासूसी भी करता है? वह कब आप कर कोई ढेला फेंकता है?

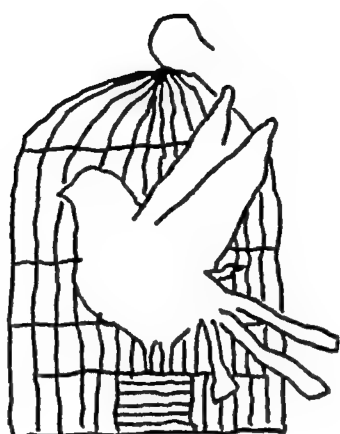




और यह लीजिये अब आपने अपने हाथ मे गुलेल थाम ली है। खुदा के लिए इसे फेक दीजिये। उडते, ा बैठे पछी की छाती मे आप इसे मत दागिये। क्या पता यह बेचारा अपने बच्चो के लिए चुग्गा ले जा रहा हो या इसकी प्रेयसि घोसले मे इसका इतजार करती हो? यदि आपके साथ ऐसा कुछ घटित हो कि आप अपने बाल-बच्चो के लिए नाश्ता ला रहे हो या आपकी प्रियतमा आपकी प्रतीक्षा करती हो और आप पर कोई गोली दाग दे तब आपके घर मे कैसा कोहराम मचेगा? क्या आपके घर और इसके घोसले मे कोई फर्क है?

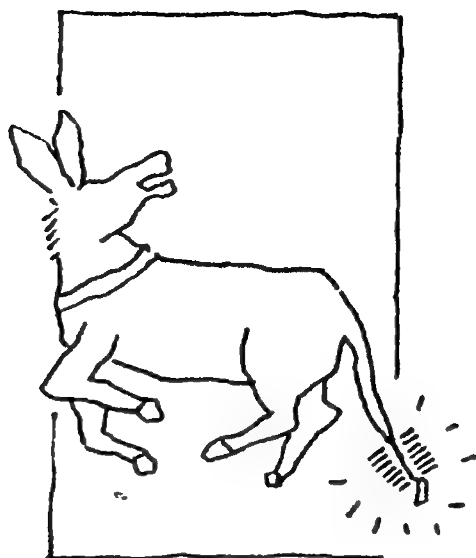
सुनें,

इस विश्व-नीड मे, दुनिया के घोसले मे आप और यह दोनों रह रहे है— इसे प्यार कीजिये, इसे प्यार दीजिये और पूरी दुनिया को प्रसन्नताओ से भर इसकी खुशियॉं बढाइये— इसकी खुशियॉं छीनिये मत। ध्यान रखिये. क्रूरता खुशियॉं छीनती है, करुणा खुशियॉं बरसाती है।



और यह क्या आप तो एक पीजरा ले आये हैं। यह तो काफी सँकडा है। वेहद छोटा। पखेरू/पछी वडा है। पीजरा छोटा है। एक तो पीजरे मे इस वेचारे को आप कैद किये दे रहे है और दूसरे इसकी तमाम आवासीय सुख-सुविधाएँ छीने ले रहे हैं। यह तो वेचारा अपने पर भी ठीक से फडफडा नही सकेगा। इसे दाना दीजिये। इसे पानी दीजिये। और वदले मे इससे मनोरजन लीजिये, या फिर इसे आजाद कर दीजिये। जव अग्रेजो के पीजरे मे आप, या आपकी चेतना गुलाम थी तव आपको कैसा लगता था?

कारावास मे हजारो हिन्दुस्तानियो ने सकट के दिन विताये है— फि हम इस नन्ही-सी जान को पीजरे मे डाल कर कुवेर का कौन-सा खजाना हासिल करने जा रहे हैं? मिहरवानी करके इसे आजाद कीजिये— खुद भी आजाद रहिये। यदि इसे कैद से रिहा नही करना चाहते हो तो कृपया इसका एक राजनैतिक कैदी की तरह ख्याल तो रखिये ही ताकि वदले मे वह अपनी लीलाओ मे, अपने चहकने से, आपका मनोरंजन कर सके— कम-से-कम [illegible] कर का [illegible] दीजिये।



और हाँ, यदि दीवाली ही आयी है तो इस गधे या कुत्ते ने आपका क्या बिगाडा है? इसकी पूँछ मे फटाका बाँध कर आप इसकी जान के पीछे हाथ धो कर क्यो पडे है? इसे मत सताइये। चैन से रहने दीजिये इसे। तनिक सोचिये कि यदि इस गधे की जगह आप होते (वहुत से हैं) और यह आपकी जगह, और यह चुप-चाप आपकी धोती, कुर्ते, या कमीज़ या कही भी फटाका बाँध देता तो आप क्या करते— इसकी जान वख्शते क्या? यदि नहीं, तो फिर आप इसकी लाचारी का फायदा क्यो उठा रहे हैं? क्या एक सुसभ्य नागरिक का यह फर्ज नही है कि वह खुद जिये और औरो को चैन की साँस लेने दे? क्या इन पशु-पक्षियो को जीने-का-हक नही है?

महापुरुषो के इस कथन पर विचार कीजिये— 'जियो, जीने दो'— और हिसाब लगाइये कि कही आपके द्वारा दुनिया की पगतलियो मे काँटे तो नही चुभोये जा रहे है?

हमारी धारणा है कि जो भी हम करते हैं वह न्यायोचित होता है, उसे कोई चुनौती नहीं दे सकता, वह कानूनन है, और फिर कानून बनाने वाला है कौन? मनुष्य ही न। इसलिए वह कहता है, कानून कानून की जगह है, मैं अपनी जगह। कानून मैदान या चरित्र के लिए भला कैसे हो सकता है? उसकी सही जगह या तो कचहरी है या किताब, जीवन उसकी जगह कतई नहीं है

कुछ लोग ऐसे हैं जो कानून के बारे मे कुछ जानते ही नही हैं, उन्हे नहीं ज्ञात कि कानून किस चिडिया का नाम है और ज़िन्दगी मे उसकी क्या उपयोगिता है? दो जून रोटी नसीब होने पर वे मान लेते हैं कि कानून है— यदि ऐसा न होता तो उन्हे रोटी कैसे मिलती?

इस तरह पूरी दुनिया मे ज्यादातर लोग या तो कानून जानते ही नहीं हैं, या जान कर भी उसकी इज्जत नहीं करते या फिर कानून विपदाओ मे उनकी मदद से चूक जाता है।

और उनके असम्मान का शिकार हो जाता है।

जहाँ तक कागजी कार्रवाई का सवाल है, आदमी काफी कुशल है। उसने कानून की बारीकियो से लायब्रेरियाँ भर दी हैं। वह कानून की कई पत्र-पत्रिकाएँ साया करता है।

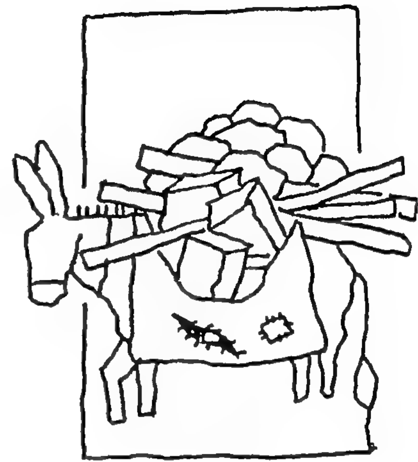
कानून बनाने के लिए उसने विधान-सभाएँ बना रखी हैं। लोग उसका मुस्तैद पालन करें, इसलिए उसने पुलिस-व्यवस्था की है।

अब यह बात अलग है कि कानून बनाने वाला खुद-ब-खुद क़ानून तोड रहा है और ऐसा करते हुए वडी शान बघार रहा है।

जहाँ तक कानून बनाने का सवाल है, मनुष्य ने न सिर्फ अपने हित मे बल्कि पशु-पक्षियो के हितो की रक्षा के लिए भी कानून बना दिये हैं। वह जहाँ एक ओर वेरहम, क्रूर, वेसब्र, बदहवास और वहशी किस्म का सामाजिक प्राणी है, वहीं दूसरी ओर वह दयालु, रहमदिल, शान्तिप्रिय, सावधान, और सभ्य भी है— यही कारण है कि उसने पशु-पक्षियो के साथ

दयापूर्ण व्यवहार हो, उनके साथ कोई क्रूर/बर्बर बर्ताव न कर सके इस दृष्टि से १९६० ई मे एक कानून बनाया —'पशु क्रूरता निवारण अधिनियम' जिसकी ग्यारहवी धारा मे उसने पशुओ के साथ आमतौर पर होने वाली क्रूरताओ को न सिर्फ चुनौती दी वरन् उन्हे निरूपित भी किया— उन पर कडा प्रतिबध लगाया।

कानून कहता है कि हम पशु-पक्षियो को पाले। यह हमारा हक या शौक हो सकता है, किन्तु हम उन पर जुल्म ढाये उनके साथ जगली बर्ताव करे, यह तर्क-सगत नही है। हम जिन पशुओ से खेती करवाते है, जिनसे अपनी आवश्यकता की वस्तुओ को ढो कर एक जगह से दूसरी जगह ले जाते है। जिन पर सवार हो कर हम दूर-दराज़ तक की यात्राएँ करते है, या जिन्हे रख कर अपना स्टेटस या अपना रौब बढाते है, उन्ही के साथ हम क्रूरता बरते, यह बिलकुल मुनासिब नही है। इस बारे मे हमे सोचना चाहिये और पास-पडौस ही नही, दुनिया के तमाम पशु-पक्षियो के साथ दयापूर्ण व्यवहार का सस्कार विकसित करना चाहिये। मसलन,



यदि किसी धोबी या कुम्हार के पास गधा है, तो उसे यह अधिकार तो है कि वह उस पर कपडो का गट्ठड लादे और उसे घर-से-घाट और घाट-से-घर लाये, ले जाए;कुम्हार ईटे या मटके-गमले उस पर लाये, ले जाए, और भी कोई भार या बोझ लादे, किन्तु यह हक उसे नही है कि वह उस पर जी चाहे उतना वजन लादे कई बार इतना कि उस बेचारे की उसे ढोते-ढोते ज़ान ही साँसत मे पड जाए।

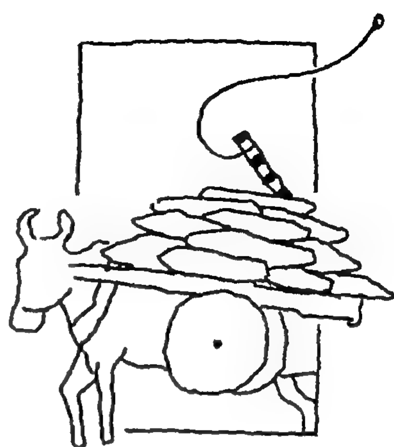
वीच-वीच मे वह रुके। मुँह से झाग का झरना फूट पडे। हाँफने लगे। काँपने/थर्राने लगे। चलने से इनकार कर दे।

हम यह जाने कि किसी भी पशु पर उसकी क्षमता से अधिक भार लादना कानूनन जुर्म है। ऊपर हमने जिस अधिनियम की चर्चा की है उसके अन्तर्गत १९६५ ई मे एक नियम वनाया गया था, जिसमे पशुओ पर लादे जाने वाले वज़न की सीमाएँ निर्धारित की गयी हैं।

मसलन

यदि छोटा बैल या पाडा जिसका वाहन-सहित वज़न २५० किलोग्राम हो तो वॉलवेअरिंग वाले दुपहिया वाहन पर १०००, टायर वाले वाहन पर ७५०, सामान्य वाहन पर ५०० और सीधे उस पर १०० कि.ग्रा वजन लादा जा सकता है।

यदि वैल या पाडा मध्यम श्रेणी का ३५० कि ग्राम वजन का है तो उस पर वॉलवेअरिंग वाले वाहन से १,४००, टायर वाले वाहन से १,०५०, सामान्य वाहन से ७००



और सीधे उससे १५० कि ग्रा वज़न की ढुलाई की जा सकती है। बडे बैल या पाडा जिसका वज़न यदि ३५० किग्रा से अधिक है तो वॉलवेअरिंग वाले वाहन पर उससे १,८००, टायर वाले वाहन पर १,३५० और सामान्य वाहन पर ९०० तथा सीधे १७५ किग्रा माल ढोया जा सकता है। घोड़े या खच्चर पर टायर वाले वाहन से ७५०, सामान्य गाडी से ५०० और सीधे उससे २०० किग्रा, टट्टू पर टायर वाले वाहन पर ६००, सामान्य पर ४०० और सीधे ७० किग्रा, ऊँट पर सामान्य

वाहन पर १,००० तथा सीधे उस पर २५० किग्रा, और गधे पर ५० कि ग्रा वज़न ढोना कानून की नज़र मे वैध है। इससे अधिक वजन लादने या ढोने पर सबधित व्यक्ति को दण्डित किया जा सकता है।

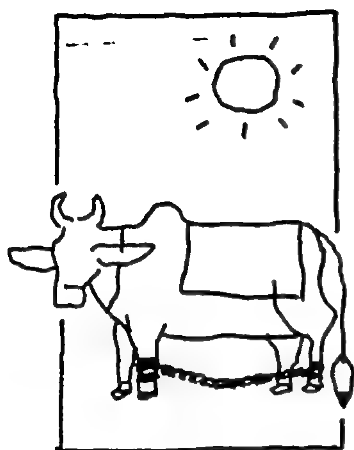
कानून मे स्पष्ट किया गया है कि पशुओ का जो वजन दिया गया है उसमे वाहन का वजन भी सम्मिलित है। यदि किसी वाहन को दो पशु ढोते है तो वज़न को दुगुना किया जा सकता है। कानून मे उतार-चढाव, काम के घटे, काम के समय का तापमान, लगातार काम लेने के बाद विश्राम, तथा बीमार पडने पर इलाज और परिचर्या की व्यवस्था भी है। किन्तु मुश्किल यह है कि मनुष्य एक स्वार्थी किस्म का प्राणी है जो किसी भी प्राणी से कम-से-कम खुराक दे कर अधिकतम काम लेना चाहता है। आज भी होटलो मे अमीर घर-घरानो से काम करने वाले मासूम बच्चो के साथ जो बर्ताव किया जाता है वह पशुओ के साथ किये जाने वाले दुर्व्यवहार-जैसा ही होता है।

ऐसे मे हमारा कर्तव्य है कि जब भी हम किसी पशु-पक्षी पर कोई अन्याय या अत्याचार होता देखे तो उसके मालिक के खिलाफ शिकायत दर्ज कराये और उसे समुचित दण्ड दिलवाये।

कोई पशु दुर्बल, मरियल, सीकिया या बीमार है, लादा हुआ वज़न ढो नही पा रहा है, किन्तु उसका मालिक उसे विवश कर रहा है कि जो माल उसकी पीठ पर है उसे वह ठिकाने तक हर हालत मे पहुँचाये— और ऐसा न कर पाने पर पशु को कोडे मार रहा है, उसके पुट्ठो पर नुकीली आर चुभो रहा है, उसकी पूँछ मरोड रहा है उसे तरह-तरह की यातनाएँ दे रहा है तो कानून की आँखो मे यह जुर्म है, जिसके लिए उसे दण्डित किया जाना चाहिये।

सवाल यह है कि क्या हम एक कर्तव्यनिष्ठ नागरिक की हैसियत से ऐसे क्रूर पशु-मालिको पर कानून लागू हुआ देखना चाहते हैं या नही? इसी तरह कुछ लोग इतने पत्थर-दिल के होते है कि

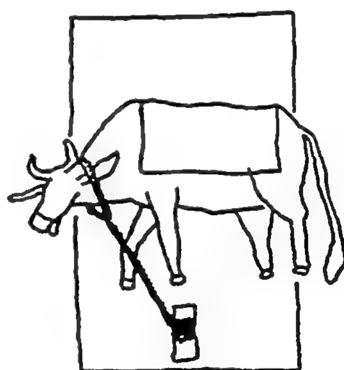
उनका क्रूर-कठोर बर्ताव देख कर ग्रेनाइट की चट्टाने भी आँसू बहाने लगती हैं।



वे किसी भी पशु से जीवन-भर मशक्कत तो लेते हैं; किन्तु उसके बीमार पडने या उसके बुढा जाने पर न तो उसका इलाज करवाते हैं और न ही उसकी कोई देख-भाल करते हैं।

बल्कि कही भाग न जाए— उस पर उनका स्वामित्व बना रहे इस नीयत से उसके पावो मे बेडियाँ डाल कर, या लकडी का खरप्पा बाँध कर उसे गलियो या सडको पर छोड देते हैं। कानून की नजर मे यह एक गभीर अपराध है। क़ानून की आँख चाहे जैसी हो, क्या मनुष्य की आँख को मनुष्य की आँख बनाये रखने की चिन्ता हमे नही करनी चाहिये, किन्तु दुर्भाग्यवश हुआ यह है कि मनुष्य ने अपनी आँख की जगह किसी रक्त-पिपासु भेडिये की आँख लगा ली है और वह उन पशुओ पर, जो आजीवन उसकी सेवा करते हैं, जुल्म ढाने लगा है।

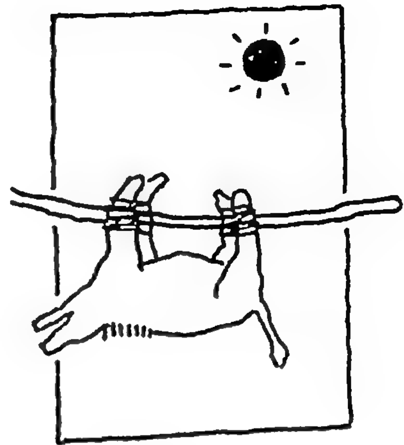
गाँवो मे, और शहर की बाहरी बस्तियो मे ऐसे बीभत्स दृश्य आपको आमतौर पर देखने को मिल जाएँगे, जहाँ क्रूरता की हद होती है। गाय, या अन्य किसी



जानवर की गर्दन को उसके अगले पाँवो से बाँध दिया जाता है और

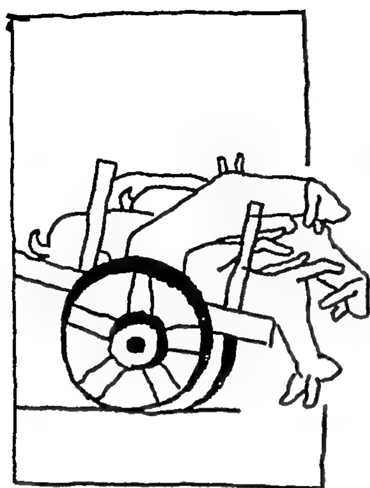
फिर उसे भगवान् के भरोसे छोड दिया जाता है। इस साँसत मे पशु विकलाग भी हो सकता है, या फिर उसकी मौत भी हो सकती है। ऐसे लोग उसी श्रेणी मे आते है, जिस श्रेणी मे वे लोग आते है जो गौओ को कम दूध देने या दूध न देने के कारण कसाई के क्रूर हाथो मे बेच देते है बगैर यह सोचे कि पशु चाहे जैसा हो वह सिर्फ दूध ही नही देता उसके अलावा भी बहुत कुछ देता है, और क्या हम अपने परिजनो को उनके अनुपयोगी, विकलाग या अनुत्पादक होने पर कसाई के हवाले कर देते हैं? अधिक दूध प्राप्त करने के लिए, 'फूँका' आदि करना भी कानूनन जुर्म है।

ऐसे नजारे आपको अब शहरो मे भी मिल जाएँगे जिनमे सुअरो/भड़ुरियो को बॉस या लाठी पर औधा लटका कर बडी बेरहमी से ले जाते है और उन्हे लाठियो से मूँतते है, या उनमे चर्बी हासिल करने के लिए उन्हे लपलपाती लपटो पर भून डालते है। सुअरो के बालो को ब्रश आदि के लिए

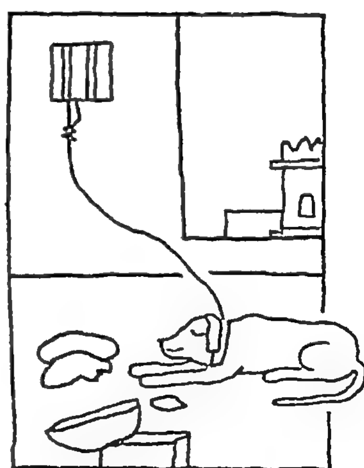


जिस तरह से नोचा जाता है, उसकी करुण कथा रोगटे खडी करने वाली है।

सुअरो की बढती आबादी के साथ उन पर जुल्म भी बढे हैं। इन अत्याचारो पर न तो आम नागरिको का कोई ध्यान है और न ही जीव-जन्तु-कल्याण बोर्ड ही कोई ध्यान दे रहा है। सुअरो को साइकिल-के-कैरियर पर भीड-भरी सडको पर ले जाते देखना अब बहुत सामान्य हो गया है। क्या हम मनुष्य की इन क्रूरताओ और बर्बरताओ पर कोई काबू पा सकेंगे?



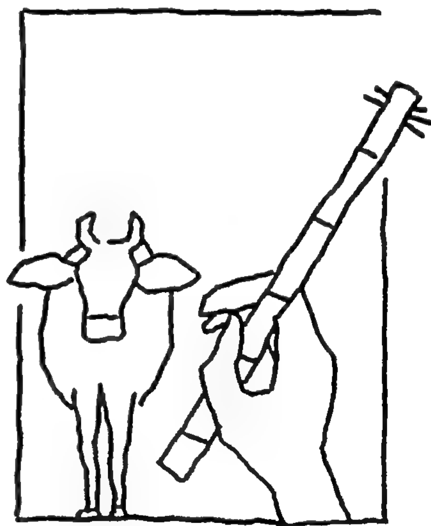
इसी तरह आमतौर पर हम पशुओ को ट्रको, बैलगाडियो, रिक्शो आदि मे ठूँस कर ले जाते देख सकते हैं इस तरह कुछ कि वे एक-दूसरे पर होते हैं। उन्हे वाहन मे न तो ठीक तरह से खडे रहने के लिए कोई जगह होती है और न ही साँस लेने को। मुर्गी-पालन केन्द्रो (पौल्ट्री फार्मो) की स्थिति भी ऐसी ही दयनीय है। वस्तुत इनका नाम 'मुर्गी-पालन केद्र' है, किन्तु असल मे ये 'मुर्गियो के कत्लघर' हैं। पशुओ को जब निर्जीव वस्तुओ की तरह ठूँस-ठूँस कर ले जाया जाता है कत्लघरो की ओर तब इनमे-से कई एक तो मार्ग मे ही दम तोड देते हैं। भेड-बकरियो को एक पल के लिए भी बैठने नही दिया जाता। उन्हे परी यात्रा मे खडा और भूखा-प्यासा रखा जाता है। सफर चाहे जितना लम्बा हो, क्रूरता की तीव्रता मे कोई फर्क नही पडता। क्रूरता की यह कथा इतनी पीडादायी है कि हम सामान्यत तो उसकी कल्पना भी नही कर सकते। आप शायद न जानते हो कि पशुओ के साथ क्रूर बर्ताव करना कानूनन जुर्म है, जिसके लिए किसी को भी पचास रुपये



आर्थिक दण्ड या तीन मास की सज़ा भुगतनी पड़ सकती है, किन्तु ये दोनो इतने कम है कि इससे क्रूरता के क्रूर और भयावह कदम रोकने मे अधिक मदद नही मिली है।

यदि किसी कुत्ते या किसी अन्य पशु को आपने छोटी रस्सी से बॉध कर उसकी स्वाधीनता को कम किया है या उसे पीडा-दायक स्थिति मे डाला है या उसे हानिकर औषधि दी है तो यह जुर्म है और इसके लिए आपको सज़ा दी जा सकती है। इस तरह भेड-बकरियो, मुर्गियो आदि को कस कर बॉध कर थैलो, टोकरियो, तग खोखो आदि मे भर कर साइकिलो या अन्य वाहनो पर ले जाने अथवा उन्हे साइकिल के हैंडिल पर या उसके केरियर पर औंधा लटका कर ले जाने को भी जुर्म माना गया है। कानून की दृष्टि मे यह एक गभीर किस्म का अपराध है, अत एक सुशिक्षित नागरिक का यह कर्तव्य है कि वह ऐसे मामलो की रपट लिखाये और अपनी जागरूकता का परिचय दे।





कुछ ऐसे लोग हैं जो पशुओ को पीट कर, उन्हें प्रताडित कर उनसे उनकी क्षमता से अधिक काम लेते

है। वे उन्हे न तो पेट-भर खाने को देते है और न ही उनकी ठीक से देख-भाल करते हैं, उलटे कँटीले कोटो या आर वाले डडो के बल पर उनसे अधिकतम काम लेते हैं। पशुओ के साथ इस तरह का क्रूर वर्ताव भी जुर्म माना गया है।

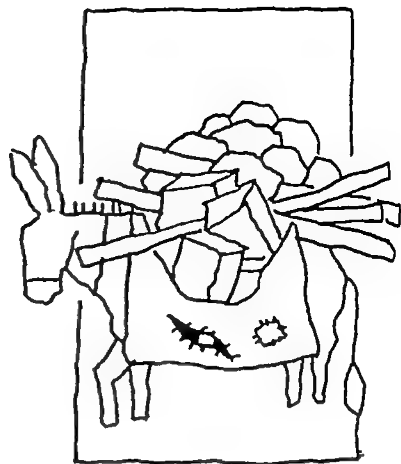


मुर्गे-मुर्गियो को हाथो मे या साइकिल पर औंधा लटका कर ले जाना जहाँ एक ओर क्रूरता है वही दूसरी ओर कानून की नजर मे जुर्म भी है।

आम आदमी यह नहीं जानता कि जो लोग पशु-पक्षियो के साथ इस तरह का सलूक करते हैं उन पर कोई कानून लागू होता है भी या नही। नतीजतन ऐसे दृश्य बढते जा रहे हैं और हम तथा कानून दोनो इस ओर से बेखबर है।

इस सिलसिले मे हमारा कर्तव्य बनता है कि हम आम आदमी तक कानून की जानकारी पहुँचाये ताकि पशु-पक्षियो को इस तरह की प्रताडना और त्रासदायी स्थितियो से कोई राहत मिल सके। वे लोग जो जीव-दया-मण्डलो का सचालन करते हैं, उनकी जवाबदारी है कि वे समय-समय पर जुलूस निकाले, जागरण-यात्राएँ आयोजित करे और लोगो को कानून की बारीकियाँ तथा गहराइयाँ बताये। कुछ ऐसी राज्य सरकारे है जिन्होंने कानून तो बना लिये हैं, किन्तु किन्ही कारणो से वे उन्हे अभी तक प्रभावशील नही कर पायी हैं। ऐसे राज्यो पर हमे सामाजिक दवाव लाना चाहिये ताकि वर्तमान सदी के अन्त तक पशु-पक्षियो पर होने वाले अत्याचारो का अन्त हो सके और उनके प्रति लोक-मैत्री जैसी कोई भावना उत्पन्न की जा सके।

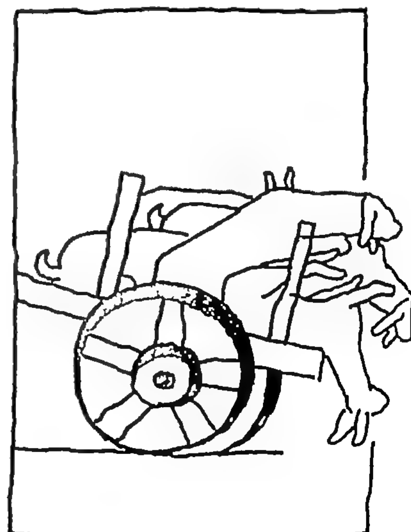
कौन है जो गौतम बुद्ध की तरह कहे कि पशु-पक्षियो को माता की मानिंद प्यार और वात्सल्य दो? है कोई जो गाँधी के स्वर मे स्वर मिला कर कहे कि पशु-पक्षियो के प्रति दुर्व्यवहार पशु-वध के समान है। ईसा मसीह/पैगंम्बर मुहम्मद कहाँ कौन है जो यह कह रहा हो कि पशु-पक्षियो पर जुल्म करो, उन्हे सताओ, उनकी जान लो, उन्हे मारो— या उन्हे अपना आहार बनाओ। इनमे-से कोई एक भी इस तरह का उपदेश नही दे रहा है।



पर्यावरण-विज्ञानी भी अब कह रहे हैं कि दुनिया के समस्त प्राणियो का अस्तित्व एक-दूसरे पर निर्भर है। एक की हत्या का मतलब दूसरे की हत्या है न सही तत्काल; किन्तु पूरे लोक मे कही-न-कही/कभी-न-कभी।

ना बाबा ना
डॉ नेमीचन्द

अन्तर्राष्ट्रीय मानक पुस्तक सख्या
८१-८५७६०-०५-५
'SBN 81-85760-05-5

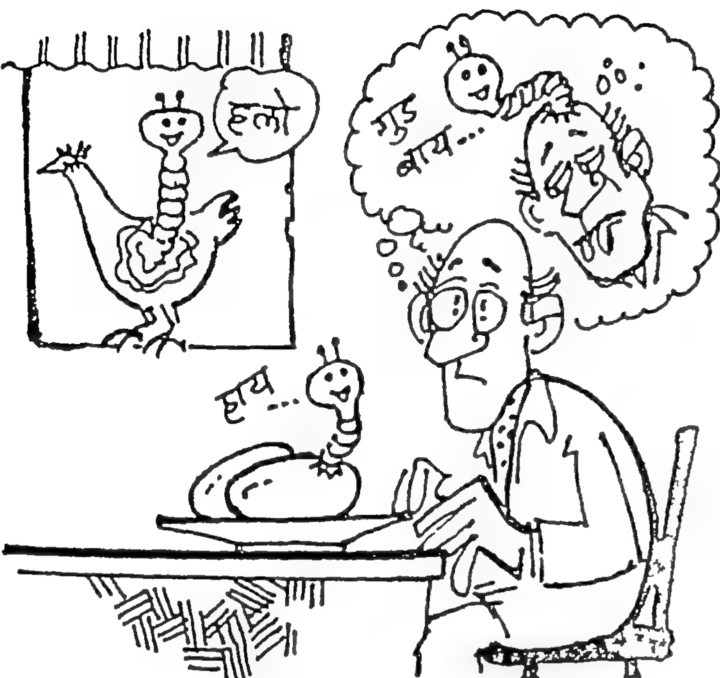


क्या
आप अण्डा खा रहे हैं?
नहीं,
बल्कि
असलियत यह है
कि



अण्डों में साल्मोनेला टाइफीम्यूरियम बैक्टीरिया होता है

'साल्मोनेला टाइफीम्यूरियम' भोजन को सदूषित करने वाला एक अति प्रचलित बैक्टीरिया है। इससे सदूषित भोजन खाने से टाइफाइड (मोतीझरा) हो जाता है, जिसमे बैक्टीरिया (जीवाणु) यकृत और गाल ब्लैडर को विशेष रूप से प्रभावित करता है। यह संक्रमण जल्दी ही हड्डी, मज्जा, गुर्दो, फेफड़ो, तिल्ली आदि मे फैल जाता है और ब्रोंकाइटिस तथा निमोनिया जैसे भयंकर रोग उत्पन्न कर देता है। इसी तरह 'स्टेफीलोकोकस एयरस' द्वारा संदूषित भोजन के इस्तेमाल से 'एंटराटाक्सीन' उत्पन्न होते हैं, जो हमारे शरीर मे पहुँच कर तीव्र जठरान्त्त अव्यवस्था उत्पन्न कर सकते हैं। बीमार जानवर का मॉस स्वाभाविक रूप से संदूषित होता है। ऐसे मॉस को पकाने से विषैले पदार्थ नष्ट नहीं हो पाते। - विज्ञान प्रगति, दिल्ली/जुलाई 1984



मुर्गियो की अंतडियो को एक खूबसूरत गेस्ट हाउस समझ कर उनमें 'सालमोनेला एनटेरिटाइडिस' नामक बैक्टीरिया फलता-फूलता रहता है, जो उनके अण्डाशयोको छुतहा बना कर सीधा एग येलो (पीतक) मे पहुॅच जाता है। परिणाम स्वरूप अण्डा खाने वाले को डायरिया (अतिसार), पेट मे ऐंठन, बुखार, मितली जैसे रोगो का शिकार होना पडता है। कई वार वह जानलेवा भी साबित होता है।

अण्डा यानी अड्डा कई असाध्य बीमारियों का



अण्डा-उत्पादन-गृह (हैचरियॉ), जो अण्डा देने वाली मुर्गियाँ तैयार करते है, नर-चूजो को बडी बेरहमी से प्लास्टिक की थैलियो मे दमघोट कर मार डालते हैं।

आप शायद नही जानते कि इन मरे हुए चूज़ो की खाद बनाई जाती है और जिस खाद्यान्न को रोएँदार पशु खाते है उसे इसके माध्यम से पैदा किया जाता है।

अण्डा देने वाली मुर्गी को रिकॉर्ड-अल्बम-कव्हर जितनी तग जगह मे रखा जाता है। अत्याचार इस सीमा तक होता है कि बेचारी मुर्गियो को दाना-पानी तक अपनी पहुँच बनाने के लिए या तो एक-दूसरो पर चढना या लाँघना होता है।

एक चूज़े की प्राकृतिक आयु लगभग १२ वर्ष होती है, किन्तु ब्रॉइलरो को आठ हफ्तो मे ही मार डाला जाता है। अण्डा देने वाली मुर्गी को अठारह से चौबीस महीनो की अवधि मे मौत के घाट उतार दिया जाता है।

दु:खद यह है कि इन्हे कृत्रिम वातावरण दे कर अकाल प्रौढ कर लिया जाता है ताकि उनसे कच्ची उम्र मे ही अधिक-से-अधिक अण्डे वसूल किये जा सके। उनके चयापचय (मेटाबॉलिज्म) को इतनी अधिक गति दी जाती है कि वे कम-से-कम समय मे अधिक-से-अधिक अण्डे देने लगे।

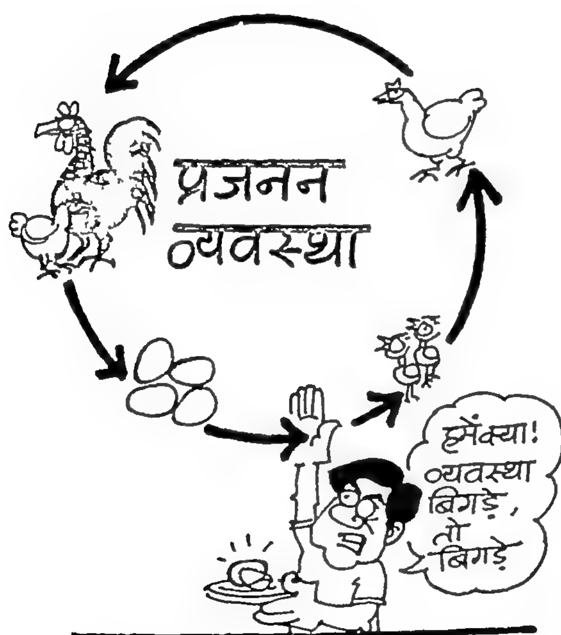
हैचरियो मे मुर्गियो की मृत्युदर सामान्यत २० प्रतिशत होती है। इनमे-से अधिकतम मुर्गियाँ कैंसर, दमा, ब्रोकाइटीज-जैसे असाध्य रोगो से मरती हैं।

जितनी देर मे आप यह पृष्ठ पढ रहे हैं, उतनी देरमे ५,००० चूज़ो की जाने ली जा चुकी हैं।

—पेटा, वाशिंगटन

इस पुस्तक को सही हाथों में पहुँचा कर अहिंसक जीवन-मूल्यों के प्रचार-प्रसार तथा भारतीय संस्कृति की रक्षा में हमारी मदद कीजिये।

डॉ. नेमीचन्द



तीर्थंकर शाकाहार प्रकोष्ठ प्रकाशन, इन्दौर

सावधान

अण्डा मुर्गी का रजोधर्म है

BHUBANESWAR, JULY 2 (PTI)

+IT CAN BE COMPARED TO THE OVULATION OF A WOMAN THOUGH IT WILL NOT LEAD TO PREGNANCY. WHILE THE WOMAN OVULATED ONCE EVERY THREE TO FOUR WEEKS, THE HEN OVULATED EVERY 22 TO 26 HOURS+, A SENIOR VETERINARIAN, MR.SAMAL SAID.

भुवनेश्वर २ जुलाई (प्रेट्र)। एक वरिष्ठ पशु-चिकित्सक श्री सामल ने कहा कि इसकी तुलना स्त्री के डिम्बोत्सर्ग(रजोधर्म)से सभव है, जिसका परिणाम गर्भ नही हो सकता, फर्क मात्र इतना है कि स्त्री ३ या ४ सप्ताह मे एक बार अण्डोत्सर्ग(रजोधर्म)करती है जबकि मुर्गी हर २२ से २६ घण्टे मे करती है।

—नेशनल एग कोऑर्डिनेशन कमेटी, गिरगाँव, पुणे से सबधित समाचार का एक अश।

ISBN 81-85760-00-4

अण्डे के बारे मे सौ तथ्य डॉ नेमीचन्द . © हीरा भैया प्रकाशन प्रकाशन- तीर्थंकर शाकाहार प्रकोष्ठ, द्वारा/हीरा भैया प्रकाशन, ६५ पत्रकार कॉलोनी, कनाडिया मार्ग, इन्दौर - ४५२ ००१, मध्यप्रदेश मुद्रण- नईदुनिया प्रिंटरी, बाबू लाभचन्द छजलानी मार्ग, इन्दौर - ४५२ ००९, मध्यप्रदेश चित्र— देवेन्द्र शर्मा मूल्य- पाँच रुपये।

हिन्दी, उर्दू, गुजराती, मराठी, असमिया, बगला, सिन्धी, कन्नड़, तमिल, मलयालम् और अंग्रेजी मे जुलाई १९९१ से फरवरी १९९७ तक तीन लाख



Eggs ill for the all-American breakfast?

Scrambled

Fear of salmonella is no yolk

Not too long ago, ersatz eggs—whether artificial, powdered or untimely ripped from their shells by food marketers—symbolized the culinary conflict between technology and taste. No fake food was more reviled than the powdered eggs of old-time Army K rations, while even the lowliest luncheonette could take pride in serving two real fried eggs sunny-side up with the yokes oozing into the hashbrowns.

Cherish the memory. The all American egg breakfast has become as strong a social taboo as smoking a fat stogie in a crowded elevator. Cholesterol fears initially scrambled the egg industry, but the real threat is the current panic over salmonella. This toxic raw-egg bacteria caused more than 2,000 cases of food poisoning in the U.S. last year. As Gourmet magazine declared: "Dishes made with raw or undercooked eggs—Caesar salad and eggs Benedict—are in danger of becoming extinct."

While the health risk is real, so too is the potential for eggsessive overreaction. Even though cooking kills salmonella bacteria, the hard boiled food industry has [illegible] with the safety and shelf life of pasteurized liquid eggs. Since last fall, Hyatt hotels have dished up fresh eggs only when a guest explicitly requests them [illegible]. Diners are not told of this shell [illegible] as a Hyatt spokeswoman insists: "To the average person's taste, I don't think [illegible]." Liquid eggs have become [illegible] food chains (Burger King) [illegible] (United and American).

There is something irredeemably sad [illegible] world so fearful of food and so [illegible] that the proverb will [illegible] read: "You can't make an omelet [illegible] some pasteurized eggs." ■

TIME [illegible]

असलियत यह है

जब आप इस किताब को ध्यान से पढेगे, तब जान पायेगे कि सचाई क्या है यानी 'आप अण्डा खा रहे हैं या अण्डा आपको, आपकी सस्कृति और सभ्यता को एक ही नेवाले मे निगल रहा है।'

जो तथ्य इस पुस्तक मे आकलित है उनमे से किसी एक को भी चुनौती देना सभव नही है। ये अकाट्य और अचूक है तथा हमारे इस निष्कर्ष को सिद्ध करते है कि न तो अण्डा शाकाहार ही है और न ही हमारी इस शस्यश्यामला भूमि के निवासियो के लिए **उपयुक्त आहार ही है।**

प्रकृति ने इसे आहार के रूप मे नही, बल्कि प्रजनन की एक महत्वपूर्ण कडी के रूप मे सिरजा है। ख्याल रहे कि हम जैसे-जैसे प्रकृति की स्वाभाविकता को दूषित, भग या नष्ट करते हैं, प्रकृति भी हमारे सहज-स्वाभाविक जीवन की सहजता और स्वाभाविकता को सदूषित, विनष्ट और ध्वस्त करती है। किस्म-किस्म की बीमारियाँ फैलती है और तरह-तरह के सामाजिक असतुलन जन्म लेते है। कत्ल और क्रूरता, हत्या और हिंसा को बढावा देने मे पौल्ट्रियो और हैचरियो का उतना ही हाथ है, जितना बूचडखानो का। मुश्किल यह है कि हम फिर भी हिंसा से बाज नही आ रहे है, नयी पौल्ट्रियां और बूचडखाने धडाधड खोल रहे है।

स्वाद और सचय, विज्ञान और तकनीकशास्त्र ने खानपान की समस्या को अधिक उलझा दिया है। व्यापारिक साजिशो ने जनता-जनार्दन के खाद्य-अखाद्य के विवेक को मूर्च्छित कर दिया है। सरकार और उसके प्रचार-माध्यम भी उनके साझे मे जनता के साथ छल-कपट पर आमादा है। मीडिया बिना किसी जाच-परख और छान-बीन के खाद्य वस्तुओ के विज्ञापन दे रहा है।

टी वी रेडियो और अखबारो मे खाद्य वस्तुओ के जो कपटपूर्ण और भड़कीले विज्ञापन आते है उनसे जनता के स्वास्थ्य को लम्बी-चौड़ी-जो हानियां

उठानी पड रही है, उनका किसी को कोई अन्दाज नही है। नेशनल एग कोऑडिनेशन कमेटी (पुणे) और अलकबीर (दिल्ली) जैसे हिंसक खाद्य-उद्योग इस देश की जनता-के-स्वास्थ्य और उनके परम्परित सिद्धान्तो के साथ जो खिलवाड कर रहे हैं, उसे हम दो टूक शब्दो मे **भारतीय जनता का सुनियोजित शोषण** ही कहेगे। चिन्ता का विषय है कि अण्डे के बारे मे इतनी चर्चा होने के बाद भी भारत सरकार ऐसा कोई आयोग नियुक्त नही कर सकी है जो अण्डे के समस्त पहलुओ के सबध मे जॉच-पडताल करे और इस बात का पता लगाये कि अब तक जिस तरह अण्डो की खपत हुई है उसका भारतीय जीवन-शैली पर क्या प्रभाव पडा है। इस दृष्टि से न तो सरकार के पास कोई कसौटी या मानक ही है, और न ही कोई ऐसा सस्थान जो इस क्षेत्र मे बरती जा रही लापरवाहियो का बेलौस सर्वेक्षण-परीक्षण करे।

पश्चिम मे इस दिशा मे महत्त्व का काम हुआ है। वहाँ अब यह दो टूक कहा जाने लगा है कि **अण्डा स्वास्थ्य के लिये घातक है,** अत उससे बचा जाना चाहिए। प्रस्तुत पुस्तक मे जो तथ्य आकलित हैं उनसे अण्डे से होने वाले नुकसान का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

टाइम (१३ मई, १९९१) के पृष्ठ ३ पर दिये उद्धरण से स्पष्ट है कि पश्चिम के देश अब अण्डे को एक सामाजिक वर्जना (सोशल टेबू) मानने लगे है। वे इसे धूम्रपान की तरह घातक मानते है। **सालमोनेला** से भयाक्रान्त हो कर **निर्जन्तुक तरल अण्डे** (पैश्चुराइज्ड लिक्विड एग्ज) मडी मे आ गये है। इन्हे भी पश्चिम मे स्वास्थ्य के लिए घातक निरूपित किया गया है। असल मे हमारे देश मे विदेशो से लौटे स्वदेशी अग्रेजो की संख्या इन दिनो काफी बढ गई है। वस्तुत अण्डा इन्ही लोगो का इन्द्रजाल है जिसने भारत-जैसे सुसमृद्ध देश को विदेशी कर्जदारी मे गले तक डुबो दिया है। विदेशो की साजिश और निकम्मा तकनीके ला-लगा कर ये लोग देशवासियो के साथ प्रोसेस्ड (संसाधित) खाद्य के रूप मे जो खिलवाड कर रहे है उसके कुछ दुष्परिणाम तो सामने आ गये है, और कुछ जल्दी ही सामने आने वाले है। इस पुस्तक से पहले 'तीर्थंकर शाकाहार प्रकोष्ठ' अण्डे से होने वाली हानियो पर दो पुस्तकें (अण्डा : जहर ही जहर तथा आप अण्डा खा रहे है? नही, बल्कि असलियत यह है कि अण्डा आपको खा रहा है) प्रकाशित कर चुका है, जिन्हे पढ कर जनता की आंखे खुली है और हजारो-हजार लोगो ने अण्डा खाना छोड दिया है। हमें विश्वास है कि प्रस्तुत पुस्तक भी उतनी ही पढी जाएगी और अण्डे के बारे मे जो कपटपूर्ण प्रचार किया जा रहा है, उसकी कलई खोलेगी।

१८ जुलाई १९९१

–नेमीचन्द जैन, सपादक 'शाकाहार क्रान्ति'

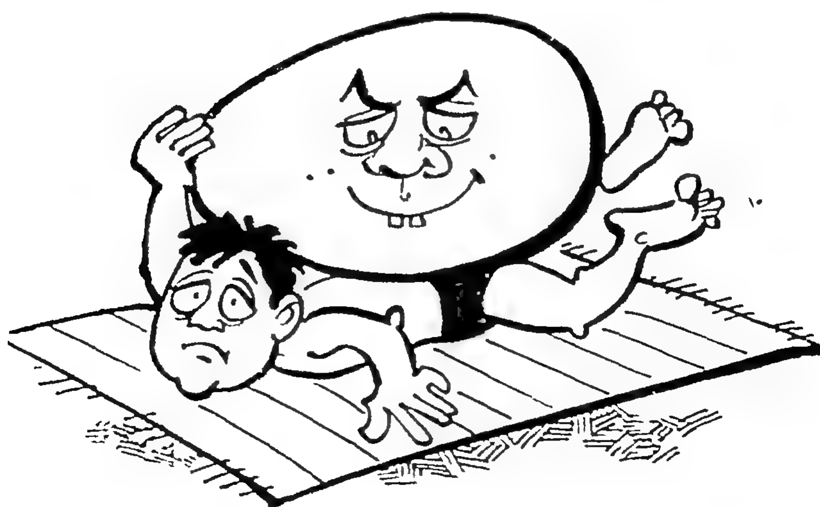
अण्डे के बारे में १०० तथ्य

१ अण्डो मे कोलेस्टेरोल की मात्रा अधिक होती है। अण्डे का पीतक (पीला भाग) कोलस्टेरोल का सबसे बडा स्रोत है। कोलेस्टेरोल धमनियो को सिकुडा देता है, जिससे लकवा या दिल का दौरा भी पड सकता है।

२ अतिरिक्त कोलेस्टेरोल चर्म की पर्तो और टेडनो (कडराओ/नसो) मे जमा हो जाता है, जिससे अण्डा खाने वाले को 'जेथोमा' नामक भयकर वीमारी हो सकती है।

३ अण्डे प्रजनन के लिए है। प्रकृति ने इन्हे खाने के लिए नही बनाया है। प्रकृति के विरुद्ध जाने के जो दुष्परिणाम मनुष्य भोग रहा है, वैसे ही अण्डे खाने के वाद सामने आयेगे।

४ शरीर मे कोलेस्टेरोल की मात्रा अधिक पहुँचने पर 'हायपर-कोलेस्टेरोलेमिया' हो सकता है, जो आगे चल कर रक्तचाप (ब्लडप्रेशर) का रूप धारण कर लेता है। वच्चो के लिए अण्डा कतई अनुकूल नही है।



५ अण्डे मे सोडियम साल्ट की मात्रा अधिक होती है, इसलिए एक अण्डा खाने का सीधा मतलब होता है आधा चम्मच नमक खाना। ब्लडप्रेशर के मरीजो के लिए तो अण्डा जहर ही है। ध्यान रखे, अण्डे के सफेद भाग (व्हाइट) मे नमक और पीले भाग (येलो) मे कोलेस्ट्रोल होता है। दोनो ही स्वास्थ्य के लिए घातक है।

६ अण्डे मे कार्बोहाइड्रेट्स बिल्कुल नही है, फलस्वरूप कब्ज/जोडो मे दर्द जैसी बीमारियाँ अनायास हो सकती है।



७ पोल्ट्री-फॉर्म की मुर्गियो को तरह-तरह की घातक दवाइयाँ दी जाती हैं, जिनका बहुत सारा अश अण्डे के माध्यम से उसे खाने वालो के पेट मे चला जाता है। अण्डो मे डी डी टी जैसा ज़हर भी पाया जाता है, ..के दुष्प्रभाव से अण्डा खाने वाला बच नही सकता।

८ अण्डे मे साल्मोनेला (बहुचर्चित बैक्टेरिया) के अलावा एक नया माइक्रोव (कैम्पीलोवैक्टर) भी पाया जाता है, जो ऑतो मे भयकर रोग उत्पन्न करता है।

९ अण्डा खाने से सिर्फ शरीर ही कमजोर नही होता, बल्कि बौद्धिक और भावनात्मक विकास को भी धक्का लगता है। बच्चो को दिये जाने वाले अण्डो के दुष्परिणाम उनकी युवावस्था और बुढापे मे प्रकट होते है।

१० अण्डा कफ पैदा करता है। वह शरीर के पोषक तत्त्वो को असतुलित कर देता है।



११ अण्डे मे १३ ३ प्रतिशत प्रोटीन होता है, जबकि हरे चने मे २४, मूँगफली मे ३१ ५ और सोयाबीन मे ४३ २ प्रतिशत प्रोटीन होता है।

१२ अण्ड-कवच (शेल) मे श्वासोच्छ्वास के लिए १५,००० सूक्ष्म छिद्र होते है।

१३ इथियोपिया के लोगो की मान्यता है कि यदि गर्भवती महिला अण्डे खाये तो उसके बालक के सिर पर बाल नही होंगे, अर्थात् वह गजा होगा और उसमे प्रजनन-शक्ति भी नही होगी।

१४ एक अण्डे (वजन ५० ग्राम) से ८६ ५ कैलोरियाँ मिलती है, जबकि गेहूँ के इतने ही आटे से १७६ ५ कैलोरियाँ (ऊर्जा) प्राप्त होती है।

१५ एक सर्वेक्षण से पता चला है कि आज पौल्ट्री-फॉर्मो द्वारा १,००० से अधिक दवाइयाँ और इतने ही केमिकल्स (रसायन) काम मे लाये जाते है, जो किसी-न-किसी रूप मे अण्डा खाने वाले के पेट मे प्रवेश कर जाते है और उसे कई असाध्य रोगो का अड्डा बना देते है।

१६ शैव (शिव उपासक) मुर्गी के अण्डे को 'ब्रह्माण्ड' का प्रतीक मानते है, इसलिए अण्डा खाना पाप समझते है। अण्डा सिर्फ शैवो के लिए नही, वैष्णवो के लिए भी अभक्ष्य है। तान्त्रिक पूजा मे 'अण्डे' को 'ब्रह्माण्ड' कहा जाता है।



१७ दाँत, हड्डी और पसलियो के लिए अपरिहार्य केल्शियम की अण्डे मे आश्चर्यजनक कमी है, इसलिए चिकित्सको ने अब अण्डे को दूध की तरह सपूर्ण, सुपाच्य और विकासवर्द्धक आहार कहना या तो बद कर दिया है या वैसा कहना मद हो गया है।



१८ अफ्रीका के कुछ देशो मे यह धारणा है कि यदि शिशुओ को दाँत निकलने से पहले अण्डा दिया जाए तो वे मूर्ख होते है।

१९ अण्डा ८ डिग्री सेल्सियस मे कम के तापमान पर सडने लगता है। जब वह सडना शुरू करता है तब पहली घटना यह होती है कि उसका जलीय भाग कवच (शेल) मे-से भाप बनकर उडने लगता है। तदुपरान्त उस पर रोगाणुओ का आक्रमण शुरू होता है, जो कवच मे अपनी पहुँच बनाकर उसे सडा देता है।

२० अण्डे कैल्शियम के विशिष्ट स्रोत नही है। एक अण्डे से ३० मि ग्रा कैल्शियम मिलता है, जबकि लगभग १५ पैसे मे उपलब्ध ७५ ग्राम सरसो की भाजी से ३० मि ग्रा कैल्शियम प्राप्त हो सकता है।

२१ अण्डे मे तुरत ऊर्जा देने वाले तत्व, यथा—शुगर, स्टार्च आदि नही है।

२२ दूध और अण्डे को एक-जैसा बताना बहुत बडी भूल है, क्योकि अण्डे मे बी–२ बी–१२ तथा कैल्शियम, जो किसी भी दूध मे पाये जाते है, यथेष्ट मात्रा मे नही होते।

२३ अण्डे को पकाने या तलने की प्रक्रिया मे विटामिन बी–१ (थायमि
नष्ट हो जाता है, विटामिन बी–२ (रिबोफ्लाविन) भी २५ प्रति
नष्ट हो जाता है तथा विटामिन बी–१२ भी अशत बर्बाद हो जात



२४ अण्डे की असतुलित तत्त्व-रचना के कारण हमारे पाचन-तत्र मे कभी/किसी भी तरह का सडाव (प्यूट्रीफैक्शन) हो सकता है। यह आशका कदम-दर-कदम बनी रहती है।

२५ चूजो (कहे, लाशो) और अण्डो (कहे, कच्चे भ्रूण) के व्यापार के पीछे धन की राक्षसी लिप्सा काम करती है--वस्तुत चूज़ो और अण्डो का उत्पादन मानवीय स्वास्थ्य के लिए नही, बल्कि उसके शोषण, क्रूरता और रुग्णता के लिए होता है। चूज़े और अण्डे हिंसा और क्रूरता के माध्यम बनते है।

६ आम शिकायत है कि भारतीय शाकाहार मे लोहा (आयर्न), आयोडिन और विटामिन–ए की भारी कमी होती है, किंतु ध्यान रहे अण्डा इनमे से किसी एक का भी समृद्ध स्रोत नही है। एक अण्डे की अपेक्षा, पालक विटामिन–ए का अधिक समृद्ध स्रोन है। यह अण्डे से २५ गुना सस्ता पडता है।



७ अण्डे मे साल्मोनेला एटराइडीम फेज टाइप–४ (पीटी–४) नामक वैक्टेरियम होता है। पीटी–४ का सबध वैटरी, फैक्टरी या पोल्ट्री अण्डे मे है। १९८८ मे इग्लैड और वेल्स मे इसी वैक्टीरियम के कारण १६०० से अधिक लोगो को अपनी जान से हाथ धोना पडा था। ब्रिटिश सरकार को ४० करोड अण्डे तथा ४० लाख मुर्गियो को नष्ट करना पडा था। इन अण्डो और मुर्गियो की लागत तब एक करोड नब्बे लाख पौंड आंकी गयी थी।

१८ भारतीय धर्म और संस्कृति अण्डाहार के पक्ष मे नही है। अथर्ववेद (८ ६ १२) मे साफ-साफ कहा गया है कि 'मै उन दुष्टो को नष्ट कर देता हूँ, जो अण्डे और मांस खाते है।

२९ 'शाकाहारी अण्डा' एक प्रथम श्रेणी का भ्रामक नामकरण है, जैसा कि सेये हुए अण्डे का कोई प्राणिक उद्देश्य होता है, अनिषेचित अण्डे का कोई प्राणिक उद्देश्य नही होता, अत इसे पूरी तरह अखाद्य मानना चाहिये। बैटरी अथवा फैक्टरी अण्डे स्वास्थ्य के लिए घातक हैं, इनके उपयोग से बचना चाहिये।



३० पौल्ट्री-फार्म की मुर्गियो को न तो ताजा हवा मिलती है और न खुली धूप, न स्वतत्रता और न प्रसन्नता, अत वे बुरी तरह त्रस्त और कुण्ठित हो जाती है। यह कुण्ठा अण्डे खाने वालो मे पहुँच कर तरह-तरह के मानसिक विकार उत्पन्न करती है।

३१ हम धनिया और अण्डे की तुलना करे और देखे कि इन दोनो मे-से श्रेष्ठ कौन है (वजन १०० ग्राम)। दो अण्डो मे १३ ३ ग्राम प्रोटीन, १३ ३ ग्राम फैट/वसा, १ ०० ग्राम खनिज लवण, ० ०६ ग्राम कैल्शियम, ० ०० कार्वोहाइड्रेट्स, ० २२ फॉस्फोरस, २ १ ग्राम लोहा होता है तथा उससे १७३ कैलोरियाँ मिलती है, जबकि १०० ग्राम धनिया मे १४ १ ग्राम प्रोटीन, १६ १ ग्राम वसा, ४४ ग्राम खनिज लवण, ० ६३ ग्राम कैल्शियम, २१ ६ ग्राम कार्वोहाइड्रेट्स, ० ३७ ग्राम फॉस्फोरस, १७ ९ ग्राम लोहा प्राप्त होता है तथा २८८ कैलोरियाँ मिलती हैं।

३२ भारतीय विज्ञापन मानक परिषद् (एडवर्टीजमेंट स्टैंडर्ड्स कौंसिल ऑफ इंडिया) के २६ मई १९९० के निर्णय के अनुसार 'अण्डा सब्जी नही है।' उसे इस नाम से बेचना राष्ट्रीय और सामाजिक अपराध है। 'भाविमाप' ने राष्ट्रीय अण्डा समन्वय समिति को अपने अतिरंजित विज्ञापनो की भाषा बदलने पर विवश किया है।



३३ अण्डे खाने से बडी ऑत-का-कैंसर हो सकता है। ख्याल रहे, अण्डे मे रे (डायटरी फायबर्स) नही होते। यह स्वास्थ्य के लिए घातक है।



३४ वबई स्थित हाफकिन्स इस्टीट्यूट का निष्कर्ष है कि आहार के रूप मे अण्डे हानिकारक है। ये शरीर मे अतिअम्लता (हायपर एसिडिटी) पनपाते है। कुछ वर्षो तक अण्डो को सुपाच्य माना जाता रहा, किंतु नई खोजो के अनुसार अब इन्हे सुपाच्य नही माना जा रहा है, अत. इन्हे शिशुओ को दिया जाना खतरे से खाली नही है।

३५ अण्डे खाने मे गठिया (रूमोटॉइड), गाउट (जोडो मे थक्के जमना) जैमी वातजनित वीमारियॉ हो जाती है। वुढापे मे तो ये खतरनाक और पीडादायी मोड ले लेती है।

मूलत मनुष्य 'मस्तिष्क' है, 'पेट' नही है। विभिन्न अध्ययनो से पता चला है कि अण्डा खाने वालो का मस्तिष्क तानाशाही, गुण्डागिरी और अशालीनता की ओर सहज ही झुक जाता है। अण्डो से दिमाग को कोई खुराक नही मिलती। दगे, कत्ल, हगामे इत्यादि अण्डे-जैसे गैर शाकाहार खाद्यो के दुष्परिणाम है।




३७ अण्डे कई वार एनीमल हायपर सेंजीटिविटी (पाशविक अतिसवेदनशीलता) उत्पन्न कर देते हैं, नतीजतन अण्डे खाने वाला बर्बर आदतो का शिकार हो जाता है और समाजविरोधी गतिविधियो मे फँस/ उलझ जाता है।

३८ अण्डा अप्राकृतिक वस्तु है (आहार के रूप मे)। असल मे वह खाने के लिए है ही नही, अत वह खाने वाले के व्यक्तित्व को बेमेल और अप्राकृतिक बनाता है। पश्चिम मे अब इसे पौष्टिक आहार की श्रेणी मे नही रखा जा रहा है। पाश्चात्य आहार-शास्त्रियो की नजर मे अण्डा अब न तो स्वास्थ्यवर्द्धक है और न ही स्वास्थ्यरक्षक।

३९ सभी पक्षियो के अण्डे एक-जैसे होते है। उनकी सरचना मे कोई विशेष फर्क नही है (देखे—द मेकडोनाल्ड एन्सायक्लोपीडिया ऑफ बर्ड्स ऑफ द वर्ल्ड बाय जियानफ्रेको बोलोग्ना, पृ ३०,३१)। इनकी आतरिक बनावट प्रजनन के लिए है, ये खाने के लिए नही, बल्कि सतानवृद्धि के लिए बने है। मनुष्य इन्हे खा कर शिकारी जीवन की ओर लौट रहा है—वह प्रकृति को और उसकी प्रजनन-व्यवस्था को बिगाड रहा है।

४० मुर्गे के सयोग के बगैर जो अण्डा पैदा होता है, वह भी सजीव होता है, चूँकि वह मुर्गी के शरीर मे उत्पन्न होता है, अत शत-प्रतिशत मासाहार होता है।

४१ सुप्रसिद्ध अमेरिकी वैज्ञानिक श्री फिलिप जे स्केम्बल के अनुसार को अण्डा निर्जीव नही है। मिशीगन विश्वविद्यालय (अमेरिका) वैज्ञानिको ने तो दिन-के-उजाले की तरह सिद्ध कर दिया है कि ससा का कोई अण्डा, फिर चाहे वह निषेचित हो या अनिषेचित—निर्जीव नह है।

४२ अण्डा फलीकरण से पैदा होता हो अथवा उसके बगैर, उसमे जी अनिवार्य रूप से है और जीव के सारे लक्षण, यथा श्वासोच्छ्वास, बुद्धि खुराक लेना आदि भी उसमे पाये जाते है।

४३ मुर्गे की अनुपस्थिति मे तो मुर्गी अफलित अण्डे देती ही है, ऐसा भी प्राय देखा गया है कि वह मुर्गे के सयोग से पहले दिन अफलित अण्डा देती है, उसके बाद मुर्गे का सयोग न होने पर भी दूसरे दिन फलनशील और पाँचवे दिन फलने वाला अण्डा देती है। इसका अर्थ यह हुआ कि मुर्गे के शुक्राणु मुर्गी के शरीर मे एक लम्बी अवधि तक पडे रहते हैं और कही-कही तो यह अवधि छह माह तक भी देखने मे आई है।

४४ जब हम अण्डे की तुलना मैथी से करते है, तब जान पाते है कि अण्डे मे १३ ३ तथा मैथी मे २६ २ ग्राम प्रोटीन होता है (वजन १०० ग्राम)। इसी तरह दोनो के समान वजन मे उपयोग से अण्डे से १७३ और मैथी से ३३३ कैलोरियाँ प्राप्त होती है। मैथी कोलेस्टेरोल की सफाई भी करती है, जबकि अण्डा कोलेस्टेरोल का समृद्ध स्रोत है।

४५ जब हम अण्डे और मूँगफली की तुलना करते है, तब हमे पता चलता है कि अण्डे मे १३ ३ और मूँगफली मे ३१ ५ प्रति १०० ग्राम प्रोटीन होता है। स्पष्ट है कि अण्डे से हमे कम प्रोटीन मिलता है। इसी तरह अण्डे से सिर्फ १७३ कैलोरियाँ मिलती है, जबकि मूँगफली से ४५९ कैलोरियाँ प्राप्त होती है।



४६ अण्डा यदि स्त्री-बीज के रूप मे ही बना रहे तो भी उसमे प्राण होते है, क्योकि स्त्री-बीज की उत्पत्ति मुर्गी के शरीर की जीवित कोशिकाओ से होती है।

४७ यदि हम नीम के पेड के किसी पत्ते का बारीक-से-बारीक हिस्सा ले तो इस कोशिका के समुचित सवर्द्धन से नीम का पेड बनाया जा सकता है। ठीक उसी तरह सैद्धातिक दृष्टि से मुर्गी के शरीर की किसी भी जीवित कोशिका मे-से एक सपूर्ण मुर्गी को पैदा किया जा सकता है।

४८ चूजो को जिन तग और तकलीफदेह पिंजरो मे रखा जाता है, उन्हे 'चिकन हेवन्स' नाम दिया गया है। इस स्वर्ग मे उन्हे इतनी कम जगह नसीब होती है कि वे सहज ही हिंसक, हमलावर, कुण्ठित और कलही हो जाते हैं। वे एक-दूसरे पर बर्बर आक्रमण करते है, अत उनकी चोचे काट दी जाती हैं (डीबीकिंग), फलस्वरूप उनका पानी पीना तक हराम हो जाता है। क्या आज की व्यापक कुण्ठा, आक्रामकता और सत्रास का कारण हमे इन 'चूज़ा-स्वर्गों' मे नही दिखाई पड रहा

४९ मसूर की दाल और अण्डे की तुलना करें। अण्डे में १३.३ प्रोटीन है तो मसूर में २५.१, अण्डे में कार्बोहाइड्रेट्स बिल्कुल नहीं है। मसूर में ५९.७ ग्राम है, अण्डे में १७३ कैलोरियाँ मिलती हैं, मसूर में ३४६ कैलोरियाँ प्राप्त होती हैं।

५० 'जिस अण्डे में से चूजा बाहर आये, वही अण्डा सजीव है' यह मान्यता सत्य से परे है। असल में जिनमें जीव के लक्षण हों, जीव उसे ही कहा जा सकता है, इसलिए अफलनशील अण्डों को मृत नहीं कहा जा सकता।



५१ लदन की विख्यात आहार-शास्त्री श्रीमती के केलेनी का कथन है कि अण्डे खाना मास खाने से भी बदतर है, क्योंकि इनमे मास की अपेक्षा अधिक चिकने पदार्थ होते है जो कब्ज पैदा करते हैं।



५२ यह धारणा गलत सिद्ध हुई है कि अण्डे को ५ मिनट तक उबालने पर सालमोनेला बैक्टीरिया नष्ट हो जाते हैं। अमेरिका मे इधर हुए प्रयोगो मे पाया जाता है कि अण्डे को ८ मिनट तक उबाले जाने पर भी उसमे सालमोनेला जीवित रहता है। *(दे तथ्य क्र १९,२७)*

५३ जिन्हे वशानुगत (हिरेडिटरी) हृदय-रोग हो, उन्हे स्वप्न मे भी अण्डे नही खाने चाहिये। ऐसे लोगो के लिए अण्डा जहर है।

मुर्गी-पालन केंद्र मे एक मुर्गी को सिर्फ १५" × १९" अर्थात् लगभग २ वर्गफुट जगह उपलब्ध कराया जाता है। इतनी सकरी जगह मे रहने के कारण मुर्गियाँ अपने अस्तित्व-सघर्ष मे एक-दूसरे को चोचे मार-मारकर लहूलुहान कर देती है, अत गुजरात सरकार ने 'मरघाँ पालन' नामक गुजराती पुस्तिका मे मुर्गी-पालको को सलाह दी है कि वे मुर्गियो की चोचे काट दे और उनके पख कतर दे ताकि कम जगह मे अधिक मुर्गियो को रखा जा सके। क्या मुर्गियो मे उत्पन्न तनाव, प्रतिहिसा, लाचारी, झुँझलाहट अण्डा खाने वाले को विरासत मे नही मिलेगे?

मुर्गियो को पाँच प्रकार का हिसक आहार दिया जाता है—बोन-मील (अस्थि - आहार), ब्लड-मील (रक्त-आहार), फीस-मील (विष्टा-आहार), मीट-मील (मासाहार) और फिश-मील (मत्स्य-आहार)। क्या इतने पर भी हम अण्डे को शाकाहार कहने का दुस्साहस करेगे?

केंद्रीय एवियन (पक्षी) अनुसधान सस्थान इजातनगर के वैज्ञानिको सर्वश्री श्यामसुदरे, सद्गोपन एव पडा के अनुसार सोया-खली का उपयोग करने से मुर्गियो मे आयोडीन की कमी से होने वाली बीमारियाँ (घेघा आदि) हो जाती है। सोया-खली के खिलाने से चूज़ो की बढवार पर भी बुरा असर पडता है। क्या ये तमाम बीमारियाँ और कमियाँ अण्डा खाने वाले व्यक्तियो के चयापचय (मेटोबॉलिज्म) का भाग नही बनती?

9 मुर्गियाँ एक-दूसरे से गुत्थमगुत्था हो कर लहूलुहान न हो, इसलिए पौल्ट्री-फॉर्मो मे उनकी चोचे काट दी जाती है। चोचे काटने के लिए रात का वक्त ही चुना जाता है, जब मुर्गे-मुर्गियाँ भूरे प्रकाश मे लगभग अधे हो पडते है। नीचे की चोच ही काटी जाती है। यदि इसमे कोई चूक होती है तो मुर्गा या मुर्गी जीवन-भर के लिए आहार से वचित हो जाती है। तीनेक दिन तो उसे चोच काटे जाने के घाव के कारण भूखा रहना ही पडता है। क्या यह क्रूरता अण्डे मे हो कर उसे खाने वाले के खून मे नही उतरेगी?

एसी कैम्पवेल रोजर्स ने अपनी पुस्तक 'प्रोफिटेबिल पौल्ट्री कीपिंग इन इडिया' के पृष्ठ ११० पर लिखा है कि "अण्डा देने वाली मुर्गी को जब तक प्राणिजन्य प्रोटीन नही दिया जाता, तब तक वे अण्डे नही दे पाती, अत उन्हे खून, हड्डी, मास और मछली देना ज़रूरी होता है। ये सूँडी, केचुए, घोघा, कृमि आदि कीडो का स्थान ले लेते है। मुर्गियाँ इल्लियाँ और टिड्डो को भी खा सकती है, किंतु ये उपलब्ध नही होते। पूरे भारत के मुर्गी-पालन केद्र मुर्गा-मुर्गियो को यही हिंसक खुराक देते है। इतना होने पर भी क्या आप अण्डे को शाकाहार कहेगे?" रोजर्स के शब्द हैं--"यू मे से रफली, नो एनीमल प्रोटीन, नो एग्ज द पॉइंट अवाउट ब्लड, बोन, मीट एड फिश मील्स इस देट दे आर एनीमल प्रोटीन्स एड टेक द प्लेस ऑफ ग्रब्ज, वॉर्म्स, स्लग्ज एड अदर इसेक्ट्स मच एज ग्रासहॉपर्स एड केटरपिलर्स, व्हिच आर नॉट फाउड इन द अर्थ द प्रोटीन कटेड इन दाल, पीज एड बीन्स इज नॉट एन एनीमल प्रोटीन एड इज नॉट टेक द प्लेस ऑफ इसेक्ट्स।"

आठ सप्ताह के चूजे को 'स्टार्टर मेश' (आरभिक आहार) दिया जाता है, जिसमे लायसीन नामक प्रोटीन का होना ज़रूरी माना गया है। लायसीन के लिए सवधित आहार मे १० प्रतिशत मछलियाँ और ६ से ७ प्रतिशत मास-चूर्ण आवश्यक है। जब यह सब हो रहा है, तव क्या इतने पर भी हम 'अण्डा-कृषि' (एक ऐसा नाम, जो भारतीय सस्कृति से किसी भी तरह की कोई सगति नही रखता) को अहिंसक और अण्डे को शाकाहार कह सकेगे?

६० निषेचित (सेये गये) अण्डे जन्म-पूर्व चूज़े हैं और अनिषेचित (वगैर-सेये) अण्डे जो मुर्गी के यौन चक्र के उत्पाद है, अत्यत अप्राकृतिक है। दोनो मासाहार है। 'कम्पाशन, द अल्टीमेट एथिक' की विदुषी लेखिका विक्टोरिया मोरान ने लिखा है–'टू ईट फर्टिलाइज्ड एग इज एन इफेक्ट टू कज्यूम ए चिकन बिफोर इट इज बॉर्न (द इथिक्स आर बॉर्डर लाइन) आय वाज टोल्ड एड अनफर्टिलाइज्ड एग्ज द प्रोडक्ट्स ऑफ ए बर्ड्स सैक्स्युअल साइकिल, केन हार्डली वी रिगार्डेड एज नेचुरल फूड फॉर मेन'–पृष्ठ ४३)।

६१ जो लोग अहिंसा मे आस्था रखते है उनके लिए अण्डा पूरी तरह अभक्ष्य और वर्ज्य है। मुर्गी-पालन से ले कर अण्डा-प्रजनन तक हिंसा ही हिसा होती है। किसी भी मुर्गी-पालन केद्र को देख कर उक्त तथ्य को पुष्ट किया जा सकता है। पौल्ट्री-खेतो मे मुर्गी जैसे जीते-जागते प्राणी को 'अण्डा पैदा करने वाली मशीन' से अधिक कभी नही माना जाता। उसे १५"×१९" जगह मे नाना सत्रासो और तनावो के बीच क़ैद रखा जाता है। ये तनाव/ये सत्रास आप क्या सोचते है अण्डा या मुर्गी-मुर्गा खाने वाले लोगो के खून मे पहुँच कर उनके व्यक्तित्व को असतुलित नही करते?



६२ जब तक मुर्गियो, सूअरो या बछडो को कसाईघर तक नही ले जाया जाता, तब तक वे दिन की रोशनी नही देख पाते ग्याभन सूअरनी को लगातार तीन महीनो तक उसके शरीर से बमुश्किल बडे दडबे मे रखा है। यही हाल मुर्गियो का है। वस्तुत इनकी तेजी और तनाव कम

करने के लिए ही इन्हे अँधेरे मे रखा जाता है। इसके विपरीत चूजो को दिन-रात तेज रोशनी मे रखा जाता है, ताकि वे अकाल वयस्क हो सके। नर-चूजे प्राय मार डाले जाते है।

६३ चूज़ो को अकाल वयस्क वनाने के लिए डेस (डायथितलबोस्ट्रॉल) जैसे कृत्रिम सश्लिष्ट हार्मोन दिये जाते है। जिन महिलाओ को 'डेस' दिया गया, उनकी सतानो को कैसर या अन्य गभीर बीमारियाँ हुई। 'डेस' को एक चमत्कारी दवा निरूपित किया गया है। माना गया है कि यह एक ऐसा वाढ-उत्साहक (ग्रोथ-प्रमोटर) है, जो पशुओ की मासवृद्धि करता है और व्यापारिक दृष्टि से उनका वजन बढाता है। योरपीय देशो मे इस पर कानूनी वदिश लगाने का प्रयत्न हुआ है, किंतु इसकी कालाबाजारी होती है और इसे अवैध प्रयोगशालाएँ भी तैयार करती हैं। 'डेस' जिन पशु-पक्षियो को दिया जाता है, उनके मास-भक्षण से कैसर होने की आशका बनी रहती है।

६४ ऐसी मुर्गियो को (चूजो को भी), जिन्हे कैसर की गाँठे हुई होती हैं, बिना किसी परीक्षण के बेच दिया जाता है। खरीददार मुर्गी या चूज़ो की शक्ल मे तब कैसर-जैसी जानलेवा बीमारियाँ भी खरीदता है।

६५ मरेक रोग (चूजो की महामारी) हर्पेस वायरस से उत्पन्न होता है। एक ताजा वैज्ञानिक विवरण के अनुसार 'हर्पेस सिम्प्लेक्स वायरस (एच एस वी) टाइप–२' और स्त्रियो को होने वाले सर्विकल कार्सिनोमा (कैसर) के बीच सुदृढ सबध है।

६६ इन दिनो मुर्गियो के पख नोचने का क्रूर कर्म आदमी नही करता, बल्कि वह इसे रबर की अँगुलियो वाली तेज मशीनो से कराता है। मशीने चूजे या मुर्गी/मुर्गे को पकडे रहती हैं और रबर की अँगुलियाँ पख नोच डालती हैं। वे इसे निचोडती भी है, ताकि उनके भीतर का मल बाहर आ सके। ऐसे मे कई सूक्ष्म रोगाणुओ का कोहरा–जैसा चारो ओर छा जाता है। ये रोगाणु पास पडे चूजो और उपकरणो पर फैल जाते है। पख नोचने वाली रबर-अँगुलियो के एक वर्ग सेटीमीटर मे १० लाख सूक्ष्म रोगाणु (माइक्रोब्ज) पाये जाते हैं।

६७ पशुओ का मास और फैक्टरी-फॉर्म-अण्डे, ऐसी गभीर विकृतियाँ हैं जिनके अभिशाप से मनुष्य-समाज की रक्षा करना कठिन हो गया है।

६८ ब्रिटेन मे 'प्रोटेक्शन ऑफ बर्ड्स एक्ट १९५४' नामक एक कानून बनाय गया, जिसके अतर्गत किसी भी पक्षी को ऐसे पिंजरे या दडबे मे नहं रखा जाना चाहिये, जिसमे उसे पख पसारने की पूरी आजादी न हो ऐसा करने वाले को कानून अपराधी और दडनीय घोषित करता है किंतु विडम्बना यह है कि इसी की एक उपधारा मे सकेत है कि 'य मुर्गी-पालन केद्रो पर प्रभावशील नही होगा'। यह प्रावधान मानवीयता नहीं, राजनीतिक कारणो से किया गया है। भारत मे भी राजनीतिक दबाव के कारण 'पौल्ट्री-कृषि' को 'कृषि का दर्जा' दिये जाने की आशका है।



गायो, बैलो, भैसो, सुअरो आदि को तो मासवृद्धि के लिए मासवर्द्धक दवाएँ दी ही जाती है, पौल्ट्री-फार्मो मे भी इनका धडल्ले से उपयोग होता है। चूज़े और तुर्की (गिद्ध) को एटीबायोटिक्स की हल्की मात्राएँ दी जाती हैं, ताकि उनका वज़न बढे और उनका व्यापारिक शोषण किया जा सके। ऐसा करते हुए इन दवाओ का समग्र मनुष्य-जाति पर क्या दुष्प्रभाव पडेगा, इसका जरा भी ध्यान नही रखा जा रहा है।

आहार-विज्ञानी फ्रे एलिस और प्रो जे डब्ल्यू टी डिकरसन ने स्पष्ट शब्दो मे कहा है कि शाकाहार की पोषक क्षमता को अब तक काफी अवमूल्यित और गौण करके सोचा गया है, किंतु यदि इसे मनुष्य को, पशुओ मे ससाधित (प्रोसेस) किये बिना, सीधे ही दिया जाए तो पोषकता मे प्रति एकड दस गुना बढत हो सकती है। उदाहरण के लिए सोयाबीन मे दूध की अपेक्षा प्रति एकड सात गुना और अण्डो की तुलना मे प्रति एकड आठ गुना अमीनो एसिड उपलब्ध है। ध्यान रहे मनुष्य को एक कैलोरी प्राप्त करने के लिए किसी पशु को सात वनस्पतिजनित कैलोरियाँ खिलानी होती है।

कई दशको तक प्रोटीन को परपरित ढग से 'प्रथम श्रेणी' या 'द्वितीय श्रेणी' मे वर्गीकृत किया जाता रहा और तदनुसार कहा गया कि पशु-उत्पाद (मास, अण्डा, दुग्ध-उत्पाद) मे 'प्रथम श्रेणी' और वनस्पति उत्पाद मे 'द्वितीय श्रेणी' का प्रोटीन पाया जाता है। अधिक स्वाभाविक और स्वास्थ्यप्रद आहार-पद्धति पर दोषारोपण की इस दलील को अतत छोडना पडा। इसके स्थान पर अब प्रोटीन की अनुशसा (सिफारिश) व्यक्तिगत उपयोगिता के आधार पर आकिक मापन स्केल के अनुसार की जाने लगी है। यह मात्र भ्रान्ति है कि अण्डो मे 'प्रथम श्रेणी' का प्रोटीन होता है।

२ बर्कले-स्थित केलीफोर्निया यूनिवर्सिटी के डॉ मार्मोट ने विश्व के विभिन्न भागो मे रह रहे जापानियो के अध्ययन से हृदय-रोग दरो का पता लगाया है। प्राप्त परिणामो के अनुसार सतृप्त चर्बी (सेचुरेटेड फैट), कोलेस्टेरोल और मृत्यु तथा हृदय रोग मे घातक अत सबध

७८ मनुष्य मे धन कमाने की वासना इतनी तीव्र हुई है कि वह पशु-पक्षियो के शरीर के साथ खिलवाड करने लगा है। उसने आनुवशिकी (जीनेटिक्स) की मदद से शरीर को तरह-तरह मे डिज़ाइन करना शुरू किया है। कनाडा की 'एनीमल रिसर्च इस्टीट्यूट ऑफ एग्रीकल्चर' के डायरेक्टर आर एस गोवे का कथन है कि उत्पादन की ऐसी सघन (इटेसिव्ह) पद्धतियाँ आविष्कृत की जा रही है, जिनके फलस्वरूप बिना टॉगो के मुर्गे-मुर्गियाँ और बिना पर के चूज़े उत्पन्न करना सभव हो सकेगा। अमेरिका और कनाडा के कम-से-कम छह विश्वविद्यालय इस तरह के प्रयोगो मे व्यस्त है।

७९ चूज़ो के पर एक बहुत बडी समस्या है। पौल्ट्री के चौकीदारो के सामने कई उलझने खडी करते है। 'पौल्ट्री डायजेस्ट' के अनुसार मुर्गे-मुर्गिया लबी चीख दे कर आकाश मे कूद पडते है और धराशायी हो कर अपने प्राण छोड देते है। चिकित्सा विशेषज्ञो ने उनकी इस रोगीली वृद्धि को 'फ्लिप-ओव्हर सिड्रोम' कहा है। पोस्टमार्टम से पता चला है कि इस तरह मृत मुर्गे-मुर्गियो के दिल पर खून के थक्के होते है, जो उनके रख-रखाव मे होने वाले जुल्म और ज़ोर-ज़बर्दस्ती के प्रतीक है। क्या मासाहारियो और अण्डाहारियो के खून मे यह सब नही पहुँचता है?

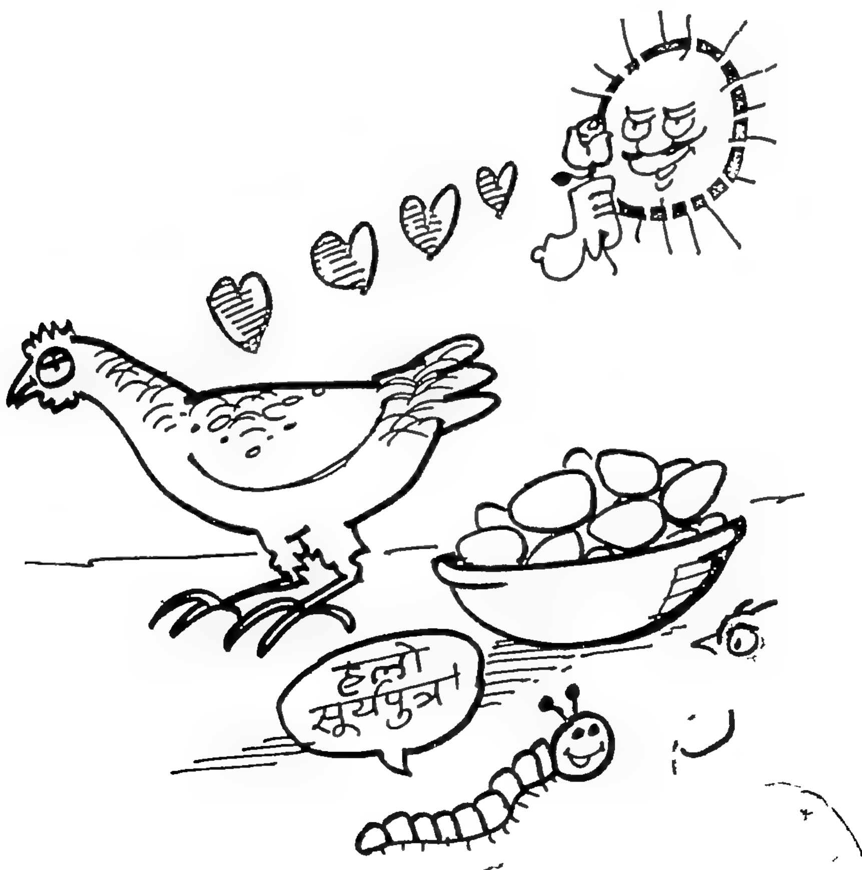
८० आज के मुर्गे-मुर्गियो को (चूज़ो को भी) जो खुराक मिलती है, वह प्राकृतिक खुराक नही है। उनकी यह खुराक प्रयोगशालाओ मे पैदा होती है। पौल्ट्री-उद्योग बिना एटीबायोटिक्स के एक पल भी ज़िदा नही रह सकता। अमेरिकी चूज़े (अब भारतीय भी) पहले दिन से अतिम दिन तक एटीबायोटिक्स के बल पर ही ज़िदा रखे जाते है।

८१ नव्वे प्रतिशत से अधिक चूजो को सखिया-मिश्रण (आर्सेनिक कपाउड) दिये जाते है। उन्हे सल्फा-औषधियाँ और नाइट्रोफूरास (एटीबेक्टीरियल एजेट्स) भी दिये जाते है। आप क्या सोचते है, इन का मासाहारी या अण्डाहारी पर कोई दुष्प्रभाव नही पडता है?

देश मे पशु-कारखाने (एनीमल फैक्टरीज़) खुल रहे है, जहाँ मुर्गियाँ मशीन है और अण्डे उनसे उत्पन्न पदार्थ। इस प्रक्रिया मे

प्राकृतिक कुछ भी नही है, बल्कि ससाधित (प्रोसेस्ड) पदार्थो की तमाम बुराइयों है। ध्यान रहे, ससाधित उत्पादन स्वास्थ्य के लिए घातक सिद्ध हुए है।

वास्तव मे अण्डे देने का आधार मुर्गे की अपेक्षा प्रकाश अधिक है। मुर्गी को यदि आवश्यक सूर्य-प्रकाश मिले तो उसकी पिच्युटरी ग्लैंड (ग्रथि) उत्तेजित होती है और उसमे-से एक खास किस्म के हार्मोन का स्राव होता है, जिसका असर अण्डाशय पर होने के कारण उसके हजारो स्त्री-बीजो मे से एक बीज अलग निकलता है और विभिन्न प्रक्रियाओ मे से गुजर कर अण्डे के रूप मे बाहर आता है।



८४ चूज़े स्वभाव से अत्यत सामाजिक होते है, किंतु उन्हे हज़ारो-लाखो की सख्या मे एक-पर-एक ठूँस दिया जाता है, जिससे वे सत्रस्त, आक्रामक, कुण्ठित और लगभग पागल हो पडते है। इस तरह उत्पन्न उत्तेजित और असतोष को शान्त करने के लिए नाना प्रकार की शामक औषधियो (ट्रेंक्वेलाइजरो) का प्रयोग होता है। आप क्या सोचते है ये शामक पदार्थ मास/अण्डे मे हो कर आपके पेट और खून मे नही पहुँचते हैं?

८५ चूजे रोशनी के प्रति अति सवेदनशील होते है। रोशनी उनकी शारीरिक बाढ को नियत्रित करती है। 'चिकन हैवन्स' (खिडकी-विहीन वेअरहाउसेज) मे पहले दो हफ्तो मे २४ घटो तक चूज़ो को खूब तेज रोशनी मे रखा जाता है, प्रकाश इतना तीखा और तेज होता है कि चूज़े लगभग पागल हो उठते है। ऐसे मे उन्हे शान्त करना काफी कठिन हो जाता है। कोई रोशनदान या खिडकी न होने के कारण वे एक ऐसे समाज के सदस्य होकर रह जाते है, जिसमे लडाई, बैर, कुण्ठा, असतोष, कलह, आक्रमण, अँधेरा और अशान्ति मुख्य होते है। क्या आज के मानव-समाज का चेहरा हम 'चिकन हैवन्स' मे नही ढूँढ़ पाएँगे?

८६ क्या पौल्ट्री-उत्पादन के बिना हम अपनी प्रोटीन-जरूरते पूरी नही कर सकेगे? कर सकेगे। जो सघन वैज्ञानिक खोजे हुई है, उनसे अब यह स्पष्ट हो गया है कि पौल्ट्री-उत्पादन मानव-आहार के अतिम सहारे नही हैं। वास्तव मे पौल्ट्री उद्योग ने तो हृदयाघात, कैसर, लकवा और इस तरह के कई असाध्य रोगो को जन्म दिया है।

८७ अण्डा-कृषि को लेकर जो सस्कृति तैयार हुई है, उसके दुष्परिणाम अब सामने आने लगे है। क्या पौल्ट्रियो की बीमार, आतकपूर्ण, भयभीत, क्रूर और बर्बर जीवन-पद्धति को हम अनजाने मे अपनी जीवन-पद्धति की तरह स्वीकार नही कर रहे है? भारतीय जीवन-शैली की गुणवत्ता के ह्रास का एक बहुत बडा कारण हमारे देश मे पौल्ट्रियो का बढना और अण्डाहार को बिना सोचे-समझे बढावा देना है।

खाते समय कोई यह नही जानता कि वह अण्डे की शक्ल मे अपने मे क्या डाल रहा है? वस्तुत वह उन सतायी हुई, आतकित,

शोषित, विकल, अस्वस्थ और वात्सल्य से वचित, विवश, मूक मुर्गियो के अण्डे खाता है, जिनका उत्पादन 'पेट' के लिए नही सिर्फ 'जीभ' के लिए किया जाता है। इन दिनो अमेरिकी पौल्ट्री-उद्योग 'फ्लेवर-रहित' चूज़ो की समस्या से जूझ रहा है। अव एक खास 'फ्लेवर' जोडने के लिए मुर्गियो को इजेक्शन लगाये जाते हैं। भारत की एग्रीटेक हैचरियाँ भी इसी पगडडी पर पाँव रखे हुए है।

पौल्ट्रियो का एक सामाजिक पक्ष भी है। इनमे जिस बर्बर असामाजिकता को पोषण मिलता है, उसकी तो हम कल्पना भी नहीं कर सकते। मुर्गियो को उनके प्राकृतिक जीवन से काट कर एक क्रूर, एकाकी, अमानवीय, असामाजिक, आतकपूर्ण, अस्वस्थ, व्यावसायिक वातावरण मे रखा जाता है। इन्हे देख ऐसा लगता है कि पौल्ट्रियो के रूप मे धरती पर मनुष्य ने 'पागलखाने' स्थापित किये है। ये पागलखाने लगातार पागलखानो को ही जन्म दे रहे है। हम अपने देश मे भी पौल्ट्रियाँ खोल कर अहिंसा और करुणा की जगह हिंसा और क्रूरता को जबरन रोपने-थोपने वाले पागलखाने स्थापित कर रहे है।

आहार-विज्ञानियो का स्पष्ट मत है कि परिवार के बजट मे अण्डो की जगह दूध को ही प्राथमिकता दी जानी चाहिये। एक तो दूध अण्डो की अपेक्षा सस्ता पडता है, दूसरे इसमे कैल्शियम अधिक होता है।

अण्डा, मास, मछली आदि मे प्रोटीन जितना होता है उसे मनुष्य का शरीर पचा नही सकता, वस्तुत प्रोटीन-सबधी निष्कर्ष चूहे को कसौटी बना कर लिये गये है। यह अतिरिक्त प्रोटीन अतत मनुष्य के शरीर की मास-पेशियो मे जमा हो जाता है, नतीजतन पेशियो के लचीलेपन तथा उनकी स्थिति-स्थापकता मे कमी आ जाती है और वे एक तरह से जड हो जाती है। इसी कारण से कई बार प्रसव सीजेरियन क्रिया से कराना होता है। ध्यान रहे अण्डे खाने से नसे कमजोर पड जाती है, रक्त-सचार मद होने लगता है तथा हृदय की स्वाभाविक गति मे अवरोध उत्पन्न होने लगता है।

१२ डॉ रॉबर्ट ग्रॉस (ब्रिटेन) ने चेतावनी दी है कि अण्डे के श्वेतक (एगह्वाइट) मे 'एविडिन' होता है, जिससे कोढ, एक्ज़ीमा,

(पक्षाघात), चर्मरोग, चर्म-कैसर तथा अन्य एलर्जियाँ (अति सवेदनशीलताएँ) जैसी बीमारियाँ हो सकती है।

९३ विश्व-विख्यात पहलवान प्रो राममूर्ति पूर्णत शाकाहारी थे, जिन्होंने अण्डा, मास, मछली खाने वाले कई प्रचण्ड शक्ति-सपन्न पहलवानो को घडी-भर मे पछाडा था। उनमे यह शक्ति कहाँ से आयी, हममे कितनी शक्ति है, इत्यादि की वास्तविक कसौटी हमारी पाचन-शक्ति, आहार की पौष्टिकता/गुणवत्ता और व्यायाम आदि पर निर्भर करती है। प्रो राममूर्ति के जीवन से यह भ्रान्ति तो निश्चय ही दूर हो जाती है कि 'शाकाहार शक्तिवर्द्धक नही है, सिर्फ मासाहारी ही बलिष्ठ होते हैं'।

९४ तुवर, चना, चौला, उडद, मसूर आदि दालो मे अण्डो की तुलना मे प्रोटीन की मात्रा डेढ गुना होती है। मूँगफली मे तो इसकी अपेक्षा दुगना प्रोटीन होता है। यदि प्रतिदिन १०० ग्राम मूँगफली खायी जाए तो शरीर को ढेर-सारा प्रोटीन मिल सकता है। छोटे बालको के विकास मे मूँगफली के नियमित उपयोग की एक अद्भुत, निर्दोष और अत्यत लाभप्रद भूमिका हो सकती है।

९५ शायद आप नही जानते कि पौल्ट्री-फार्मो मे जो चूज़े मर जाते है, उन्हे मरने के आधा घटे बाद काफी गर्मी देकर सुखा लिया जाता है और उनके शवो (मुर्दा शरीर) का पाउडर बनाकर मुर्गियो को 'पौल्ट्री फीड' के रूप मे खिलाया जाता है।

९६ खुद का विष्टा खाने वाली, अपने मृत बच्चो का पाउडर खाने वाली गदा/सडा-गला खाद्य खाने वाली मुर्गी आप ही बताये किस तरह पौष्टिक अण्डा दे सकती है?

९७ अमेरिका के श्री एस्टेल ग्रे और श्री चेरिल मेरेक, जिन्होंने साइकल चलाने मे विश्व कीर्तिमान स्थापित किया है, पूर्णत शाकाहारी हैं। वे अण्डे नही खाते।

अमेरिका का फेडरल स्लाटर अधिनियम (एक्ट) पढने-सुनने मे बहुत ... है, किंतु अमल मे उसमे इतनी कमियाँ है कि वह लगभग

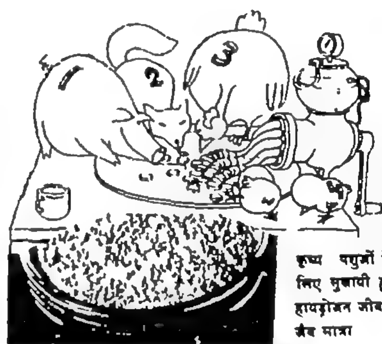
निरर्थक ही हो गया है। चूजो, अमेरिकी गीधो (टर्की), बतखो और हसो को इस अधिनियम मे जीव-जन्तु नही माना गया है।

११ बम्बई की हाफकिन इस्टीट्यूट का निष्कर्ष है कि अण्डे से बच्चो को बीसियो रोग हो सकते हैं। उसका कहना है कि अण्डे हायपर-एसिडिटी के सवेदनशील स्रोत है। इसके अलावा बच्चो का पाचन-तत्र इतना कोमल होता है कि वे अण्डा ठीक से पचा नही सकते, अत उन्हे किसी भी स्थिति मे अण्डा अथवा अण्डा-मिश्रित पदार्थ (केक, ऑमलेट, आइस्क्रीम, बिस्किट्स आदि) नही देने चाहिये।

०० शायद आप यह नही जानते कि श्री रिजली एबेल, जिन्होने यूनाइटेड स्टेट्स कराते एसोसिएशन की वर्ल्ड चैम्पियनशिप जीती है, पूरी तरह शाकाहारी हैं। वे अण्डे नही खाते। श्री एबेल ने ८ राष्ट्रीय कीर्तिमान स्थापित किये हैं, अत यह मानना कि "अण्डा शक्तिदायक है, सिर्फ भ्रान्ति है"। ■



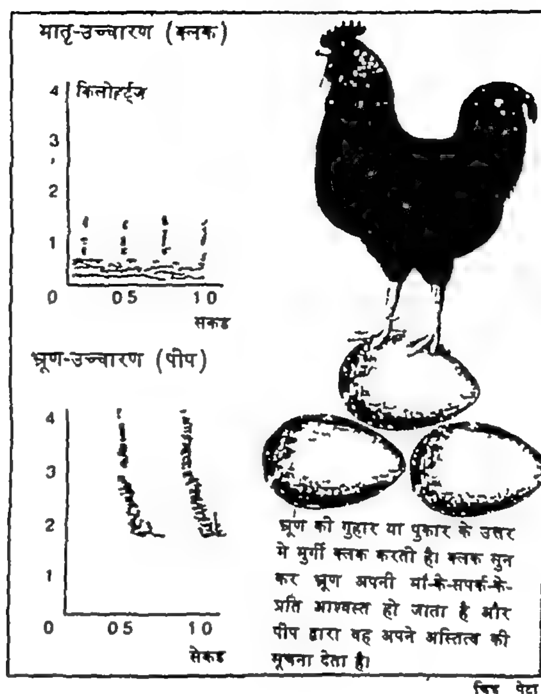
अण्डो मे सालमोनेला, क्लोस्ट्रिडिअयम पेराफिजीन्स, क्लोस्ट्रिड्यिम बोटिलिनम, बैसिल्लस सेर्यूस, वाइबियो पेराहेमोलिक्टस, एस्केरिशिया कोली तथा कैम्पीलोवैक्टर जैसे जीवाणु (बैक्टीरिया) होते है जो तरह-तरह की बीमारियाँ पैदा करते हैं।



कृष्य पशुओं के लिए सुखायी हुई हायड्रोजन जीवाणु जैव मात्रा

मास-वृद्धि के लिए सुअरो (१) पोलर लोमड़ियो (२), अण्डा देने वाली मुर्गियो (३), तथा ब्रॉइलरो (४) को हाइड्रोजन जीवाणु जैव मात्रा (हाइड्रोजन बैक्टीरिया बायोमास) वाली खुराक दी जाती है, जिसका अनुपात क्रमश ५० प्रतिशत से कम नही, २० प्रतिशत तक, २० प्रतिशत से कम नही, और ५० प्रतिशत रखा जाता है। इन्ही कृष्य पशुओ (फार्म एनीमल्स) को सुखायी हुई जैव मात्रा भी दी जाती है- फिर भी आप कहेगे कि सब कुछ मानवीय और अहिसक है? -साइस इन यूएसएसआर, १९८ अक ५, पृष्ठ १९।

अण्डे बात करते है मुर्गियों से



भ्रूण की गुहार या पुकार के उत्तर मे मुर्गी क्लक करती है। क्लक सुन कर भ्रूण अपनी माँ-के-सपर्क-के-प्रति आश्वस्त हो जाता है और पीप द्वारा वह अपने अस्तित्व की सूचना देता है।

चित्र पेटा

यह कोई शगल या गप नही है बल्कि वैज्ञानिक सचाई है कि अण्डा देने के बाद मुर्गियो और अण्डो के बीच ४८ घटो तक बातचीत का जीवन्त सिलसिला बना रहता है।

पौल्ट्री-उद्योग मानता है कि अण्डा शाकाहार है और अण्डा देने के बाद मुर्गी और अण्डे के बीच कोई सबन्ध नही रहता, किन्तु उसकी यह धारणा न सिर्फ एक सफेद झूठ है वरन् अवैज्ञानिक भी है।

सिटी यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयॉर्क के वैज्ञानिको के एक समूह ने पता लगाया है कि अण्डा देने के बाद मुर्गी और अण्डे के बीच पूरे दो दिन तक बातचीत और क्रिया-प्रतिक्रिया का सिलसिला लगातार बना रहता है। इस बातचीत के ११ श्रव्य सकेत है, जिनमे-से मातृ-सकेत को क्लक और भ्रूण-सकेत को पीप कहा जाता है।

इन तथ्यो और निष्कर्षों ने अण्डा-उत्पादन की कृत्रिम आधुनिक पद्धति के सामने कई जटिल प्रश्न-चिह्न खडे कर दिये है।

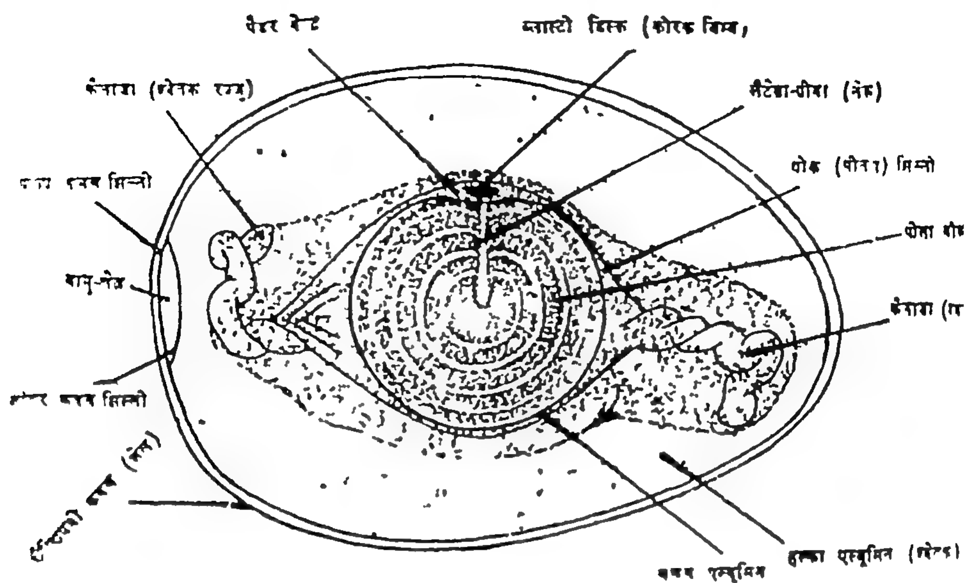
—पेटा न्यूज, वाशिंगटन के सौजन्य से।



अण्डा : ज़हर ही ज़हर

डॉ नेमीचन्द जैन

अण्डे को शाकाहार कहना बहुत बड़ा धोखा



अण्डा शाकाहार नहीं है

ऊपर आप एक चित्र देख रहे है, जिसमे अण्डे की बनावट को स्पष्ट किया गया है, बताया गया है कि वह काफी जटिल है और मनुष्य कोशिश करने पर भी उसकी रचना नही कर सकता । प्रकृति आज भी मनुष्य के लिए एक बहुत बडी चुनौती है ।

इस पूरे अण्डे मे पीतक (योक) का बहुत बडा भाग होता है । इसे अति-पीतक (पार्लोलेसिथल/मेगालेसिथल) कहते है । साइटोप्लाज्म (कोशिका-द्रव्य), जो ब्लास्टोडिस्क/जर्मिनल डिस्क (जनन-बिम्ब) मे पाया जाता है, जीव-युक्त होता है । अण्डा फिर चाहे वह निषेचित (फर्टिलाइज्ड) हो या अनिषेचित (इन्फर्टाइल) उसमे जीवांश होता है, यह बात अब कोई कल्पना नही है, बल्कि विज्ञान द्वारा साबित एक ठोस सत्य है ।

यह प्रचार कि अनिषेचित (इन्फर्टाइल या मुर्गी के द्वारा न सेये गये) अण्डे मे जीव नहीं होता है पूरी तरह गलत है । पार्थेनोजेटिक्स (अनिषेक-जनन-विज्ञान) मे सिर्फ अनिषेचित अण्डों पर ही विचार किया गया है । पार्थेनॉकार्पी का अध्ययन जिन्होंने किया है वे जान सकते है कि अनिषेक-जनन होता है, अत अण्डे को शाकाहार कहना एक अवैज्ञानिक तथ्य है । 'शाकाहारी अण्डा' एक मिथ्यानाम (मिसनॉमर) है ।

सन् 19[illegible] मे '[illegible]' ने एक पुस्तिका प्रकाशित की – 'ईट्स आर [illegible]' [illegible], जिसमे उसने अण्डो को लोकप्रिय बनाने के लिए अनिषेचित

अण्डा : ज़हर ही ज़हर

डॉ. नेमीचन्द जैन

अण्डा ज़हर ही जहर
डॉ. नेमीचन्द जैन

प्रकाशन · हीरा भैया प्रकाशन
६५, पत्रकार कॉलोनी
कनाडिया मार्ग,
इन्दौर-४५२००१ मध्यप्रदेश

मुद्रण नईदुनिया प्रिंटरी
बाबू लाभचन्द छजलानी मार्ग
इन्दौर-४५२००९ मध्यप्रदेश

अक्षरांकन आर पांचाल
चित्रांकन देवेन्द्र शर्मा
छायांकन विश्वास जैन

पहली बार जून १९८८
बारहवी बार दिस १९९७
कुल प्रतियाँ ३५,०००

ISBN 81/85760/23/3

मूल्य : पाँच रुपये



दूसरे देशों की नकल और होड मे हमारे देश ने अण्डों के निरर्थक प्रपोगण्डा का जो परचम हाथ मे थामा है, उसके बुरे नतीजे अब सामने आने लगे हैं। हमारी सरकार और उसकी एजेन्सियाँ भारतीय सस्कृति की गरिमा और उसकी स्वस्थ परम्पराओं को बाला-ए-ताक रख कर लोक-स्वास्थ्य की चिन्ता किये बगैर अण्डों-के-उत्पादन को न सिर्फ बढावा दे रही हैं वरन् कपटपूर्ण भाषा मे उसका अतिरजित प्रचार भी कर रही हैं। चूँकि सरकार के पास दूरदर्शन, आकाशवाणी, डाक-टिकिट, अखबार जैसे सशक्त प्रचार-माध्यम हैं और शाकाहारियों से वसूला गया टैक्स है अत वह ऐसा कोई प्रयत्न नहीं छोड रही है, जिससे आम हिन्दुस्तानी मे क्रूर, हिंसक और सवेदनशून्य सस्कार पनपें और देश की जो एक सांस्कृतिक बुनावट है वह नष्ट हो। यह जो खतरनाक बदलाव जाने-अनजाने आ रहा है या लाया जा रहा है वह आगे चल कर कितना महँगा पडेगा इसका ध्यान उन राजनीतिज्ञों को नहीं है जो तात्कालिकताओं को अन्तिम मान कर चल रहे हैं और जिनके मन मे भारतीय जीवन-मूल्यों के लिए कोई इज्जत का भाव नहीं है।

कोलेस्टेरोल को ले कर जो ताज़ा खोजे हुई हैं और आहार-शास्त्रियों ने जो तथ्य उजागर किये हैं, उनकी अनदेखी करना अब सभव नहीं है। दुनिया-भर के आहार-विशेषज्ञों और पोषण-विज्ञानियों ने साफ-साफ बता दिया है कि अण्डा सेहत के लिए घातक है अत उसके उत्पादन और उपभोग को घटाना चाहिये।

वस्तुत यह पश्चिम से आया जहर है, जो हमारे विवेक पर लगातार हमला कर रहा है। यह विष भूसी-की-मदी-आँच-की-तरह हमारे खान-पान और हमारे रहन-सहन मे भिद कर हमारे जीवन का एक अनिवार्य हिस्सा बनना चाह रहा है।

अंग्रेज जानते थे कि हिन्दुस्तान को राजनैतिक गुलाम बनाने के साथ-साथ सांस्कृतिक और साभ्यतिक गुलामी की जजीरों मे भी बाँधना चाहिये, अत उन्होंने अंग्रेजी और अंग्रेजियत दोनों को जीवन के हर क्षेत्र मे पाताल-तक-नींव दे कर चुप-चुप रोप दिया। आज हम हज़ार कोशिशों के बावजूद उस ज़हर को निकाल पाने मे असमर्थ है। अण्डे ने पश्चिम से आ कर हमारी तमाम स्वस्थ परम्पराओं पर प्रहार किया है। भारतीय जीवन मे अहिंसा, करुणा, प्रीति, वात्सल्य, पर्यावरण-की-रक्षा, प्रकृति-से-भरपूर-प्यार, पशु-पक्षियों, पेड-पौधों के लिए गहरी सहानुभूति का जो तत्त्व था, वह बिल्कुल चौपट हो गया है। प्रकृति के लिए हमारे मन मे जो घरोपा और आत्मीयता थी वह अब लगभग खत्म हो चली है। धर्म, जो हमारे रचनात्मक सस्कार को प्रतिक्षण जागरूक रखता था, भी आज अनास्था और उपेक्षा का शिकार हो गया है। धर्म ने हमारी कोमल भावनाओं की जो परवरिश की उसे हम कला, शिल्प और साहित्य के क्षेत्र मे सहज ही देख सकते है। धर्म-की-गैरहाजिरी मे अब हमे हिंसक कामों मे रस आने लगा है और हमे अब ऐसा कतई नहीं लगता कि हम कोई गलत काम कर रहे हैं या कोई सास्कृतिक अपराध हमारे द्वारा हो रहा है। यह परिवर्तन भारतीय जन-जीवन के लिए बहुत खतरनाक है।

मूलत हमारा देश शाकाहारी है, अहिंसक है, प्रकृति-प्रेमी है, कृषि-प्रधान है। धरती हमारी माँ है। भारत हमारी माँ है, किन्तु अब उपहासास्पद यह है कि उसी की छाती पर मुर्गी-पालन केन्द्रों (पोल्ट्रियों/फैक्टरियों) का एक अन्तहीन जाल बिछा दिया गया है। जो एजेन्सियां भारतीय रीति-रिवाजों की अनदेखी करते हुए अण्डे का प्रचार-प्रसार कर रही है, उन्होंने इसे ले कर एक विशिष्ट लुभावनी शब्दावली का विकास कर लिया है। शुरू मे धर्म पर हमला हुआ और अण्डे को 'रामलड्डू' कहा गया। भोपाल और बम्बई मे तब इस शब्द का विरोध हुआ और धन्धेबाजों ने इस शब्द के इस्तेमाल को जैसे-तैसे बन्द किया।

असल मे व्यापारियों को चाहिये धन। धन उनका माईबाप है। उन्हे न तो मुल्क मे कोई वास्ता है, न उसकी गौरवशालिनी परम्पराओं से, और न ही उसकी नैतिक उज्ज्वलताओं से — उन्हे तो चाहिये पैसा, फिर साधन चाहे जो हो, जैसा हो। इस दूषित दृष्टि के कारण ही बडे टेढे चल कर अण्डे के प्रचार को अंग्रेजी में-से भारतीय जन-जीवन मे घोला गया (घोला जा रहा है)। जहाँ एक ओर अंग्रेजी-

अरब अण्डे पैदा करने की कसम खा चुका है। हैदराबाद के एक वरिष्ठ पोल्ट्री अधिकारी का कथन है कि अण्डों का उत्पादन अधिक है और खपत कम इसलिए सरकार उनकी खपत बढ़ाने के लिए अच्छे-बुरे सभी तरीके अपना रही है।

जो संस्थान अण्डे के प्रचार-प्रसार मे जी-जान से लगे हुए है और जिन्होंने झूठ बोल कर भारतीय उपभोक्ता को लुभाने की चालबाजियाँ सीख ली हैं उनमे-से एक है पूना-स्थित 'नेशनल एग कोऑर्डिनेशन कमेटी', जिसने एक ही दिन मे बम्बई, पूना, सांगली, मिरज, जयपुर, इलाहाबाद, और हैदराबाद मे जुलूस निकाल कर 'अण्डे खाने की आदत डालो' 'अण्डा वेजीटेरियन फूड है' के नारे लगा कर मुफ्त मे अण्डे बाँटे। जो आंकड़े हमे प्राप्त हुए हैं उनके अनुसार नेएकोक ने बम्बई मे ४०,०००, पूना मे ३०,०००, और हैदराबाद मे ६०,००० अण्डे रास्ते-चलते आदमी को मुफ्त मे बाँटे। कमेटी ने बेरोजगार नौजवानों की लाचारी का शोषण कर उन्हें आमलेट, उबले अण्डे, तथा अण्डे-के-सेंडविच बेचने के काम मे लगाया।

'नेएकोक' ने अण्डों को लोकभोग्य बनाने की दृष्टि से पूना मे ५० हथठेलों के लिए बैंक से कर्ज दिलवाये। उसकी भावी योजना है कि अगले चार वर्षों मे अण्डों के प्रचार-प्रसार के लिए पूरे देश मे १०,००० लारियाँ चलाये। हास्यास्पद है कि शाकाहारी समाज शाकाहार के प्रचार-प्रसार के लिए एक भी लारी उपलब्ध नहीं करा सका (सकेगा), किन्तु 'नेएकोक' दस हज़ार लारियाँ चला कर हमारे देश की संस्कृति का चेहरा बदल देगी। ध्यान रहे, कि यदि बर्बादी के इन क्षणों मे भी हम गाफिल रहे तो यह उपयोगी क्षण फिर हमारे द्वार पर दस्तक देने नहीं आयेगा।

आश्चर्य है कि जहाँ अमरीकी और यूरोपीय देशों के आहार-शास्त्रियों ने रोजमर्रा की खुराक मे अण्डों की बढ़ती हुई खपत पर गहरी चिन्ता व्यक्त की है, वहाँ हमारे देश मे 'नेएकोक' यह कह रही है कि 'संडे हो या मंडे रोज खाये अंडे' या 'सप्ताहना सातेय वार, लो इंडाना आहार' या 'हेव वन एग एव्हरी डे'। अमरीकी मेडिकल एसोसिएशन ने तो हाल ही अपने एक वक्तव्य मे यहाँ तक कहा है कि फूड पॉइज़निंग की ज्यादातर घटनाओं के लिए अण्डों मे रहने वाला 'सालमोनेल्ला बैक्टीरिया' जिम्मेदार है। यह बैक्टीरिया उल्टी, दस्त, पेचिश तथा आंतों की अनेक बीमारियों को जन्म देता है। इन सारी परिस्थितियों मे यह सोचना ज़रूरी है कि अण्डा, जिसे ले कर इतना धुआँधार प्रचार किया जा रहा है, स्वास्थ्य के लिए कितना नुकसानदेह है?

इस पुस्तिका मे अण्डे के बारे मे तर्कसंगत और व्यापक जानकारी दी गयी है और लगभग उन तमाम तथ्यों को पाठकों/उपभोक्ताओं के सामने रख दिया है, जो

हमें विभिन्न स्रोतों (पुस्तकों, मैगजीनों आदि) से प्राप्त हुए हैं। हमें विश्वास है सामान्य भारतीय इन तथ्यों पर निष्पक्षता और गहराई से विचार करेगा और हमारे इस कथन पर कि 'विज्ञापन उस वस्तु का किया जाता है, जो प्राय कमजोर होती है' ठण्डे मन-मस्तिष्क से विचार करेगा। आप ही बतायें भला कि क्या किसी प्रामाणिक लोकोपयोगी वस्तु के विज्ञापन की आवश्यकता होती है ? उसे तो लोग खुद-ब-खुद ढूंढ लाते हैं और लाभप्रद होने पर किसी भी कीमत पर हर हालत में हांसिल करते हैं।

'नेएकोक' जिस तरह से भारतीय उपभोक्ताओं के साथ एगचाट, एगकरी, एगसलाद जैसे चटखारों का लालच दे कर धोखाधडी कर रही है उसे हमें एक व्यापक आन्दोलन द्वारा रोकना चाहिये और अण्डे-से-उत्पन्न बीमारियों से खुद को और अपनी समकालीन पीढ़ी को बचाना चाहिये। शुरू-शुरू में जिस अण्डे को हम मुफ्त में, या देखादेखी खा कर एक नकली और अन्यायी तुष्टी का अनुभव करते हैं, वही आगे चल कर हार्टअटैक, लकवा, टीबी, पथरी, एक्ज़ीमा आदि में बदल जाती है और फिर एक लम्बे समय तक हमें उनके दुष्परिणाम भोगने पडते हैं। बच्चों को तो अण्डों से (डॉक्टरों के हजार कहने पर भी) कोसों दूर रखना चाहिये, क्योंकि अण्डे आंतों को उत्तेजित करते हैं, उन पर पाचन का अतिरिक्त बोझ डालते हैं, और कम उम्र में ही उन्हें या तो सडांद की ओर ले जाते हैं, या निकम्मा और मद कर देते हैं।

—डॉ नेमीचन्द जैन,
सपादक 'शाकाहार क्रान्ति'

इन्दौर १ जून १९८८

अण्डा : जहर ही जहर

डॉ धनजय गुण्डे

प्रत्येक जीवित प्राणी के लिए कम-से-कम तीन बातो की आवश्यकता होती है, ये हैं शुद्ध हवा, शुद्ध जल और शुद्ध आहार या अन्न। हमारी अपेक्षा रहती है कि जो हम लेते हैं वह अन्न, हवा और पानी – स्वास्थ्य उत्तम रखने के लिए स्वास्थ्य-संवर्द्धक, शरीर के होने वाले क्षरण की क्षतिपूर्ति के लिए पुष्टिकारक तथा दिन-प्रतिदिन के मन और तन के कार्य-कलाप के लिए ऊर्जादायी हो। यह अपेक्षा भी रहती ही है कि जो अन्न हम खाते हैं उससे विभिन्न रोग न हो। उपर्युक्त कसौटी यदि 'अण्डा एक खाद्य पदार्थ' पर लगाये, तो हम पायेंगे कि मनुष्य के लिए अण्डे कभी एक उत्तम आहार हो ही नही सकते। उनसे लाभ की अपेक्षा हानि ही अधिक है। बावजूद इसके, अपने व्यक्तिगत हित के लिए अण्डे तैयार करने वाली कुछ व्यापारिक सस्थाएँ इस बारे मे एकागी और धोखादायी प्रचार कर रही है महज इसलिए कि उनके अण्डो की खपत हो और धन्धा मुनाफे मे चले। इस बारे मे हमे जागरूक होना चाहिये। उनके विज्ञापनो के शिकार होने से बचना चाहिये।

अण्डों के तत्त्व

अण्डे का जो भाग खाया जाता है (सफेद और पीला बल्क), उसके तत्त्वो में हमारी ऊर्जा-प्राप्ति के लिए आवश्यक कार्बोहाइड्रेट तत्त्व नही हैं। उसी प्रकार उसमें विटामिन 'के' नही है और क्षारो की मात्रा भी अन्य खाद्य पदार्थों की तुलना मे बहुत कम है। अधिकाश लोगो को इसकी जानकारी नही है।

१०० ग्राम पदार्थ के खाद्य तत्त्व

पदार्थ का नाम	प्रोटीन	कार्बो	चर्बी	क्षार	ऊर्जा	कीमत
अण्डे	१३ ३	—	१३ ३	१ ००	१७३	१–२०
गहूँ	१३ २	७९ २	१ ७	१ ८	३५३	०–३०
मूँग	२४ ००	५६ ६	१ ३	३ ६	३३४	०–८०
सोयाबीन	४३ २	२२ ९	१९ ५	४ ६	४३२	०–५०

उपर्युक्त तालिका से आप समझ जाएँगे कि १०० ग्राम (लगभग दो) अण्डो मे जितना प्रोटीन मिलता है, उतना ही गेहूँ से भी। मूँग, चना जैसी दालो से तिगुनी-चौगुनी मात्रा मे प्रोटीन मिलता है। यदि एक ग्राम प्रोटीन की कीमत निकाले तो इस प्रकार खर्च आयेगा–

पर कोलेस्टेरोल की तहो का जमना। यह कोलेस्टेरोल आहार से ही ग्रहण किया जाता है और उसका मुख्य भडारण अण्डे, माँस, मलाई, मक्खन, दही का चक्का और घी मे होता है। यदि नियमित रूप से आहार मे २०० से २२० मिलीग्राम अधिक कोलेस्टेरोल लिया गया, तो हृदय-विकार, रक्तचाप जैसी बीमारियाँ होने की आशका कई गुना बढ जाती है। १०० ग्राम अण्डो मे सामान्यत ५०० से ५५० मिलीग्राम तक कोलेस्टेरोल होता है। अण्डे का पीला हिस्सा पूर्णत ससक्त-स्निग्ध यानी चर्बी या कोलेस्टेरोल होता है, इसलिए रोज १०० ग्राम अण्डे लेने का मतलब है ज़रूरत से ढाई गुना कोलेस्टेरोल अधिक लेना। यह सहज ही समझा जा सकता है कि इसका अर्थ है हृदय-विकार और रक्तचाप को सीधा बुलावा। उसी प्रकार अण्डे के सफेद भाग–'अलब्यूमिन' मे सोडियम साल्ट की मात्रा बहुत होती है। सफेद भाग खाना याने नामक खाने जैसा है और नमक रक्तचाप का एक कारण है।

अण्डे में 'एवीडिन'

अण्डे मे 'एवीडिन' नामक एक तत्त्व है। इससे शरीर मे खुजली, एलर्जी और दमे के रोग होते हैं।

अण्डे में डी. डी. टी.

अण्डे अधिकतर पोल्ट्री से मिलते हैं। पोल्ट्री (मुर्गी-पालन केन्द्र) की मुर्गियो को बहुत-सी बीमारियाँ होती रहती हैं। वे बीमार न पड़ें इसलिए उनके आस-पास अनेक जहरीली दवाएँ छिडकी जाती हैं। ये दवाएँ उनके खाद्य के जरिये अण्डे मे आती हैं। उसी प्रकार कुक्कुट-आहार सड़े अनाज से भी बनाया जाता है। मुर्गी जल्दी अण्डे दे इसलिए उसमें हार्मोन और एन्टीबायॉटिक जैसी औषधियाँ भी डाली जाती हैं। ये सब अण्डो मे उतर आती हैं, इसलिए अण्डे खाने का मतलब है–अनावश्यक हार्मोन, एन्टीबायॉटिक, डी डी टी आदि खाना।

१० प्रतिशत अण्डे सड़े होते हैं

भारत उष्ण कटिबन्ध का देश है। यहाँ का तापमान सदैव ३० से ४० डिग्री सेंटिग्रेड रहता है। अण्डे यदि ८ सेंटिग्रेड से अधिक तापमान मे १२ घण्टे से अधिक समय तक रहे, तो उनके भीतर सडने की क्रिया शुरू हो जाती है। पोल्ट्री फार्म पर अण्डे तैयार होने से बिक्री होने तक २४ से २८ घण्टो का समय बीत जाता है। अण्डे को गर्म तापमान मे रखा जाता है, इस कारण १० से १५ प्रतिशत अण्डे भीतर से सडे हुए होते हैं। सूक्ष्म स्तर पर सडे हुए अण्डो के पहचाने न जाने के कारण वे उसी तरह काम मे ले लिये जाते हैं। विशेषकर भोजनालयो और होटलो मे तो वे वैसे ही काम मे लाये जाते हैं। ऐसे सडे अण्डे खाने पर उदर-विकार होते

१ ग्राम प्रोटीन

अण्डे मे	१४ पैसे मे
गेहूँ से	४ पैसे मे
दालो से	३ पैसे मे
सोयाबीन से	१ पैसे से कुछ अधिक मे

अर्थात् केवल प्रोटीन का ही विचार करे, तो अण्डे से मिलने वाला प्रोटीन सोयाबीन से ७ गुना, दालो से ४ गुना, तथा गेहूँ से ३ गुना महँगा पडता है।

केलोरी (ऊर्जांक) के व्यय का ब्यौरा इस प्रकार रहेगा—

१०० कैलोरी

अण्डे से	९० पैसे
गेहूँ से	९ ,,
दालो से	८ ,,
सोयाबीन से	५ ,,

इस तरह यह स्पष्ट हो जाता है कि अण्डे से प्राप्त केलोरी सबसे महँगी पडती है। ध्यान रहे **केलोरी अण्डे से मिले या अनाज से उसकी श्रेणी मे कोई अन्तर नहीं होता।।**

वनस्पति-जन्य जो एक-दल या द्वि-दल पदार्थ हैं उनमे लौह, कैल्सियम और अन्य क्षारो की मात्रा अण्डो या माँस-जैसे प्राणिज पदार्थों की अपेक्षा कई गुना अधिक होती है यानी अण्डो या प्राणिज पदार्थों से खनिज और जीवन-सत्त्व का प्रदाय ठीक से और पर्याप्त नही होता है।

इसीलिए अण्डो या माँस-जैसे प्राणिज पदार्थों को अपूर्ण आहार कहा जाता है। उनमे कार्बोहाइड्रेट नामक महत्त्वपूर्ण तत्त्व नही है और विटामिन तथा खनिज पदार्थ भी कम मात्रा मे मिलते है, इतना ही नही, वे आर्थिक दृष्टि से भी महँगे होते हैं, इसीलिए मानव-प्राणी केवल अण्डे, माँस आदि प्राणिज पदार्थ खा कर जीवित नही रह सकता, प्राणिज पदार्थों के साथ-साथ वह भरपूर मात्रा मे शाकाहारी पदार्थ भी लेता है, यही कारण है कि अण्डे आदि से होने वाले खतरे ध्यान मे नही आते, लेकिन मनुष्य केवल शाकाहारी पदार्थो पर जीवित रह सकता है।

अण्डे खाने से नुकसान

नियमित अण्डा-सेवन यानी हृदयरोग, रक्तचाप, गुर्दे की बीमारी एव उदर-विकारो को आमन्त्रण। इसमे आश्चर्य की कोई बात नही है। हृदय-रोग एव रक्तचाप (ब्लड-प्रैसर) होने के प्रमुख कारणो मे एक है रक्त-वाहिनियो की भीतरी दीवारो

पर कोलेस्टेरोल की तहो का जमना। यह कोलेस्टेरोल आहार से ही ग्रहण किया जाता है और उसका मुख्य अडारण अण्डे, मांस, मलाई, मक्खन, दही का चक्का और घी मे होता है। यदि नियमित रूप से आहार मे २०० से २२० मिलीग्राम अधिक कोलेस्टेरोल लिया गया, तो हृदय-विकार, रक्तचाप जैसी बीमारियाँ होने की आशका कई गुना बढ जाती है। १०० ग्राम अण्डो मे सामान्यत ५०० से ५५० मिलीग्राम तक कोलेस्टेरोल होता है। अण्डे का पीला हिस्सा पूर्णत ससक्त-स्निग्ध यानी चर्बी या कोलेस्टेरोल होता है, इसलिए रोज १०० ग्राम अण्डे लेने का मतलब है जरूरत से ढाई गुना कोलेस्टेरोल अधिक लेना। यह सहज ही समझा जा सकता है कि इसका अर्थ है हृदय-विकार और रक्तचाप को सीधा बुलावा। उसी प्रकार अण्डे के सफेद भाग–'अलब्यूमिन' मे सोडियम साल्ट की मात्रा बहुत होती है। सफेद भाग खाना याने नामक खाने जैसा है और नमक रक्तचाप का एक कारण है।

अण्डे में 'एवीडिन'

अण्डे मे 'एवीडिन' नामक एक तत्त्व है। इससे शरीर मे खुजली, एलर्जी और दमे के रोग होते हैं।

अण्डे में डी. डी. टी.

अण्डे अधिकतर पौल्ट्री से मिलते हैं। पौल्ट्री (मुर्गी-पालन केन्द्र) की मुर्गियो को वहुत-सी बीमारियाँ होती रहती हैं। वे बीमार न पडें इसलिए उनके आस-पास अनेक ज़हरीली दवाएँ छिडकी जाती हैं। ये दवाएँ उनके खाद्य के ज़रिये अण्डे मे आती हैं। उसी प्रकार कुक्कुट-आहार सडे अनाज से भी बनाया जाता है। मुर्गी जल्दी अण्डे दे इसलिए उसमे हार्मोन और एन्टीबायॉटिक जैसी औषधियाँ भी डाली जाती हैं। ये सब अण्डो मे उतर आती है, इसलिए अण्डे खाने का मतलब है–अनावश्यक हार्मोन, एन्टीबायॉटिक, डी डी टी आदि खाना।

१० प्रतिशत अण्डे सड़े होते है

भारत उष्ण कटिबन्ध का देश है। यहाँ का तापमान सदैव ३० से ४० डिग्री सेंटिग्रेड रहता है। अण्डे यदि ८ सेंटिग्रेड से अधिक तापमान मे १२ घण्टे से अधिक समय तक रहें, तो उनके भीतर सडने की क्रिया शुरू हो जाती है। पौल्ट्री फार्म पर अण्डे तैयार होने से बिक्री होने तक २४ से २८ घण्टो का समय बीत जाता है। अण्डे को गर्म तापमान मे रखा जाता है, इस कारण १० से १५ प्रतिशत अण्डे भीतर से सडे हुए होते हैं। सूक्ष्म स्तर पर सडे हुए अण्डो के पहचाने न जाने के कारण वे उसी तरह काम मे ले लिये जाते हैं। विशेषकर भोजनालयो और होटलो मे तो वे वैसे ही काम मे लाये जाते हैं। ऐसे सडे अण्डे खाने पर उदर-विकार होते

है और विष-बाधा (फूडपॉयज़निंग) होती है। उसी प्रकार अण्डे-का-कवच छिद्रयुक्त होने से ऐसे सडे अण्डो मे विभिन्न रोग पैदा करने वाले जन्तु भी उत्पन्न होते है।

अण्डे पित्त वर्द्धक

अण्डे खाने से गर्मी वढती है। यह एसिडिटी निर्मित करने वाला खाद्य है और पचने मे भारी होता है। हाफकिन इस्टिट्यूट, बम्बई ने अपने निष्कर्ष मे स्पष्ट किया है कि बच्चे की पाचन-शक्ति कमजोर होती है, इसलिए छोटे बच्चो को अण्डे नही देने चाहिये। उसी प्रकार **जिनके घर मे चर्म या दमे का विकार है, उन्हें भी अण्डे नहीं खाने चाहिये।**

अण्डे के विशिष्ट प्रोटीन और फॉस्फेरिक एसिड एसिडिटी की मात्रा बढाते है। एसिडिटी बढने पर मानवी रक्त के पीटीटी कम हो जाते हैं, इस कारण गुर्दे की बीमारी, गठिया और गाउट-जैसी बीमारियाँ होती हैं। यदि पीटीटी कम हो तो मब बीमारियाँ अधिक प्रभावी हो जाती हैं ।

अण्डे और कब्जियत

अण्डो या अन्य प्राणिज पदार्थों (सुअर का मांस) मे मानवीय आहार के लिए आवश्यक रेशे (फाइबर) बिल्कुल नही होते, इस कारण अण्डा या मांस खाने वालो को कब्ज की बीमारी हो जाती है। कब्जियत से ही बवासीर, भगदर और आँत का कैंसर होता है।

अण्डे से सावधान

इन तमाम खतरो को जानबूझ कर अनदेखा करते हुए, केवल अपने धन्धे मे पैसा प्राप्त करने के लिए, पौल्ट्री-व्यवसाय करने वाली कुछ व्यापारिक सस्थाएँ एकागी प्रचार कर रही हैं। इससे सावधान रहना है।

यह ध्यान रखने-जैसी बात हे कि आज पाश्चात्य देशो मे ऐसे पदार्थों के सेवन का परिमाण वढने से क्या स्थिति हो गयी है, वहाँ ५४ प्रतिशत मृत्यु हृदय-विकार और रक्तचाप से और ३० प्रतिशत कैंसर से होती हैं। इन रोगो के जो अनेक कारण हैं उनमे प्रमुख है गलत आहार और बढते हुए व्यसन। गलत आहार मे शकर, मैदा, अण्डे, मांस, डिब्बा-बन्द और तले हुए खाद्य पदार्थों का परिमाण अत्यन्त बढ रहा है। बढते व्यसनो मे शराब, तबाकू, नशीली वस्तुओ का सेवन बढ रहा है, इसीलिए अगर अपना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण खजाना जीवन और उसके लिए आवश्यक स्वास्थ्य को सुरक्षित रखना हो, तो हमे सावधान होना होगा।

खुद अण्डे मत खाइये, दूसरो को खाने के लिए उत्साहित मत कीजिये, इसके विपरीत शुद्ध, सादा शाकाहार (सब्जियो, ताजे फलो एव दालो का उपयोग) करने तथा इसके साथ-साथ शराब, तबाकू या नशीले पदार्थों से दूर रहने पर आपका स्वास्थ्य उत्तम रहेगा। □

अण्डों से 'जेंथोमा' और 'हायपरकोलेस्टेरोलेमिया' रोगों का खतरा

योगेश अरोरा

कोलेस्टेरोल जिगर (लीव्हर), आँतो तथा ऊनको (टिसूज़) द्वारा सश्लेपित चर्बी मे घुल सकने वाला (विलयशील) पदार्थ है।

मनुष्य का शरीर प्रतिदिन ५०० से १००० मिलीग्राम कोलेस्टेरोल उत्पन्न करता है। इतनी मात्रा से सामान्यतया हमारी जरूरतें पूरी हो जाती हैं, किन्तु यदि आहार वहुत गरिष्ठ है तो इसका मतलब हुआ प्रतिदिन ५०० से १००० मिलीग्राम कोलेस्टेरोल का अतिरिक्त उत्पादन। कोलेस्टेरोल का करीव-करीव आधा भाग शरीर द्वारा अवशोषित हो जाता है, यानी सोख लिया जाता है। एक अण्डे मे लगभग ३०० मिग्रा कोलेस्टेरोल होता है।

कोलेस्टेरोल की रासायनिक सरचना शरीर मे होने वाली किसी भी गडबडी की प्रतिरोधक होती है। जो हो, कोलेस्टेरोल, जिसे हम ग्रहण करते हैं, का कुछ भाग शरीर से विलोपित हो जाता है। बाकी मे-से कुछ जिगर (यकृत) द्वारा उत्सर्जित होता है, कुछ पित्ताशय (गॉलब्लडर) द्वारा कुछ समय के लिए सचित कर लिया जाता है, और कुछ आंतो से गुज़र कर मल के साथ वाहर आ जाता है।

यदि पित्ताशय-के-तरलो मे इसकी मिकदार अधिक होती है तो पथरी बनने के खतरे को किसी तरह टाला नही जा सकता, उसकी आशका निरन्तर मुंह वाये रहती है।

पित्ताशय के रोगो से सबधित पीडा को, जो सबन्धित रोगो का सकेत देती है, यथासमय कम-चर्बी वाले भोजन से दूर किया जा सकता है। इस तरह हम चाहें तो ऑपरेशनो से वच सकते हैं।

अतिरिक्त कोलेस्टेरोल चर्म (स्किन) और कडराओ (टेडनो) मे जमा हो कर छोटे, सपाट लवाक (प्लाको) तथा पिंडो की शक्ल ले सकता है—इन्हें 'जैन्थोमा' कहा जाता है।

सन् १९८५ का नोबल पुरस्कार जिन दो अमरीकी डॉक्टरो को मिला है उन्होने अतिरिक्त कोलेस्टेरोल से होने वाले हृदय-रोगो की विस्तार मे चर्चा की है और वताया है कि इन खतरो को कैसे टाला जा सकता है।

१४ अक्टूबर १९८६ को स्टॉकहोम की कारोलिस्का इस्टीट्यूट मे नोवल कमेटी ने दो चिकित्सको श्री माइकेल एस व्राउन/श्री जोसेफ एल गोल्डस्टीन (दोनो टेक्सास यूनिवर्सिटी) को यह कहते हुए पुरस्कृत किया कि उनकी खोजो ने कोले-

स्टेरोल के उपापचय (मेटॉबॉलिज्म) तथा खून-मे-कोलेस्टेरोल-के-बढे-हुए-स्तर-से-उत्पन्न बीमारियो से सबन्धित ज्ञान-मे-क्रान्ति उपस्थित की है।

इन चिकित्सको का निष्कर्ष है कि उद्योग-प्रधान देशो मे मृत्यु के बडे कारणो मे दिल-की-बीमारियो के चारो ओर जिनमे अतिसंतृप्त चर्बी (हाईली सेचुरेटेड फैट) तथा कोलेस्टेरोल-से-युक्त आहार भी है, खोजा जा सकता हे। ये आनुवशिक कारको (फैक्टरो) से, जो शरीर मे उत्पादित कोलेस्टेरोल के सामान्य परिचालन को बाधित करते हैं, भी हो सकती है।

नोबल समिति ने कहा है कि इन चिकित्सको ने कोलेस्टेरोल-शोध के क्षेत्र मे अपनी खोज़ो (१९७३) मे कोशिका (सेल) की सतहो पर स्थित उन स्थलो को, जिन्हें ग्राही (रिसेप्टर्स) कहा जाता है और जो शरीर के रक्त-प्रवाह के अवशोषक होते हैं, सुनिश्चित किया है।

कोलेस्टेरोल, जो शरीर मे उत्पादित है और जो वहाँ आहार मे हो कर पहुँचता है, जीवन के लिए लाज़िमी है। इसकी, कोशिका-झिल्लियो की बनावट मे, तथा कुछ हार्मोन्स के उत्पादन मे निर्माण-सामग्री के रूप मे आवश्यकता होती है। कोलेस्टेरोल खून मे-से एलडीएल (लो डेंसिटी लिपोप्रोटीन्स) कणो द्वारा संचरित है।

एलडीएल यकृत (लीव्हर) की कोशिकाओ द्वारा भी अवशोषित होता है वहाँ, जहाँ कोलेस्टेरोल का शरीर से विलोपन होता है ताकि वह रक्त-प्रवाह मे न जमे और धमनियो को अवरुद्ध न करे।

डॉ. ब्राउन और डॉ. गोल्डस्टीन ने पता लगाया है कि एक कोशिका कोलेस्टेरोल की कितनी मात्रा ग्रहण कर सकती है इसकी सीमा है, और यह कि रक्त मे चर्बी और कोलेस्टेरोल की अधिकता मनुष्य की धमनियो को रुद्ध करती है, जिससे लकवा हो सकता है और दिल-का-दौरा भी पड़ सकता है।

उन्होने इस तथ्य को भी ढूंढ निकाला कि कुछ लोग आनुवशिक दोष के कारण पहले से ही उच्च रक्त-कोलेस्टेरोल से ग्रस्त रहते हैं—उनकी कोशिकाओ मे एलडीएल की कमी के कारण कोलेस्टेरोल पहले से ही अधिक जमा होता है।

वे इस नतीजे पर पहुँचे कि जो व्यक्ति रेडमीट (गाय/सुअर आदि-का मांस) और डेरी-उत्पादनो (अंडो) आदि का अधिक परिमाण मे उपयोग करते हैं, वे कोशिकाओ की सतह पर स्थित एलडीएल ग्राही कणो की सख्या को घटा लेते हैं। इस तरह ग्राही कणो की कमी का सीधा अर्थ हुआ रक्त-प्रवाह मे कोलेस्टेरोल-युक्त पदार्थों का होना तथा धमनियो की भित्तियो पर कोलेस्टेरोल का जमना।

डॉ गोल्डस्टीन ने कहा है कि हमारी खोज ने रक्त-कोलेस्टेरोल के नियन्त्रण ग्राही कणो (रिसेप्टर्स) की भूमिका को रेखाकित किया है और प्रतिपादित किया कि ग्राही कणो को औषधियो से और कम-चर्बी-युक्त तथा कम-कोलेस्टेरोल-वाले भोजन द्वारा उन्नत किया जा सकता है।

क्या अण्डे खाने और मनुष्य के शरीर मे कोलेस्टेरोल की मात्रा बढने के बीच कोई सबन्ध है?

सक्रामक रोगो तथा पौल्ट्री-परजीवो (पेरेसाइट्स) से बचाव के लिए भारतीय कुक्कुट-पालक डीडीटी तथा ऐसे ही अन्य रसायनो का प्रचुर मात्रा मे उपयोग करता है, जो मुर्गियो के शरीर मे तथा उनके अण्डो मे प्रवेश कर जाते हैं। अण्डो और चूज़ो के खाने से डीडीटी तथा अन्य कीटनाशी अवशेष मनुष्य के शरीर मे पहुँच जाते हैं।

भारतीय कृषि अनुसधान परिषद् के एक सर्वे से पता चलता है कि अण्डे, इन दिनो डीडीटी तथा अन्य ऐसी ही रसायनो से सदूषित हो जाते हैं इस हद तक कि माँ के दूध मे भी वे आ जाते हैं।

विकसित देशो मे कुक्कुट-पालन-उद्योग पर नियन्त्रण रखने के लिए स्वच्छता, वातावरणगत स्वास्थ्य तथा कीटनाशी दवाओ आदि के उपयोग के लिए कई स्पष्ट कायदे-क़ानून बने हुए हैं। ये अधिनियम पौल्ट्रीफार्मों को कुप्रबन्ध का शिकार होने तथा उन्हें कोलाहल, बदबू, और पीडक जन्तुओ के अड्डे बनने से बचाते हैं। हास्यास्पद यह है कि जहाँ दुनिया के अधिकाश मुल्को ने डीडीटी का उपयोग बन्द कर दिया है, भारत मे आज भी इसका खुला उपयोग होता है।

अण्ड-कवच (शेल), जिसमे श्वासोच्छ्वास के लिए १५००० सूक्ष्म छिद्र होते हैं, प्राकृतिक सवेष्टन (पैकेजिग) का एक अपूर्व चमत्कार है। यह खोल, जिसे अण्ड-कवच कहा जाता है-एक विकसनशील चूजे के लिए सारी आवश्यक सामग्री से लैस होती है। योक (पीतक) मे प्रोटीन, चर्वी, विटामिन, और अन्य सूक्ष्मातिसूक्ष्म तत्त्व विद्यमान होते हैं, श्वेतक (सफेद) भाग मे एक अतरग जलसचय होता है (बिल्ट-इन रिज़र्वोयर), किन्तु ध्यान रहे कि प्रोटीन की पौष्टिक महत्ता उसमे स्थित एमिनोएसिड तथा उसकी सुपाच्यता से होती है।

सब जानते हैं कि हमे प्रोटीन अवश्य चाहिये, और यह कि माँस और अण्डे प्रोटीन के सान्द्रित (कन्सेन्ट्रेटेड) स्रोत हैं; किन्तु यह बहुत कम लोग जानते हैं कि इन प्रोटीन-स्रोतो को खाने की सिफ़ारिश चूहों की पोषण-आवश्यकताओं से सबन्धित

खोजों की बुनियाद पर खड़ी हुई है। चूहो को जन्मोपरान्त मानव-शिशु की अपेक्षा दस गुना अधिक प्रोटीन की जरूरत होती है।

'बायोटीन' विटामिन-बी समुदाय का एक विटामिन है, जो अण्डे के योक (पीतक) मे काफी बडी मात्रा मे प्राप्त है, किन्तु अण्डे के श्वेतक (व्हाइट) मे जो 'एवीडीन' नामक पदार्थ होता है वह बायोटीन को निष्क्रिय/निष्प्रभावी कर देने के लिए काफी है। जब अण्डा पकाया जाता है तब सिर्फ 'बायोटीन' ही शरीर को मिल पाता है।

अण्डे को तलने (फ्राइ करने) से उसमे कोलेस्टेरोल की मात्रा बढ जाती है और उसका माध्यम तैलाक्त हो जाता है। इसका मतलब यह हुआ कि शरीर के उपादान पदार्थ हमे तेल या चर्बी के माध्यम से लेने होते है। यह स्थिति जल-मे-घुलनशील विटामिनो (यथा–विटामिन बी समुदाय) के लिए सर्वाधिक अप्राकृतिक है। इस तरह तेल या चर्बी के साथ शरीर मे-से विटामिन अपचित निकल जाते है, क्योकि उन्हे सनोषजनक रूप मे प्राकृतिक पायसीकरण (इमल्सीकरण) नही मिलता है।

अण्डे का ऊष्मीय मूल्य अधिक है (१७३ केल), किन्तु एक उबले हुए अण्डे को पचाने के लिए हमारे शरीर को बहुत बडी सख्या मे कैलोरियो (ऊष्माको) का उपयोग करना होता है, अत नतीजा उतना लाभप्रद नही होता जितना एक अण्डा खाने वाला सोचता है। जैसा कि ज्यादातर अण्डे उबाल, या तल कर ही खाये जाते है, अत पकाने या तलने की प्रक्रिया मे विटामिन-१ (थायमिन) नष्ट हो जाता है, विटामिन बी-२ (रिबोफ्लाविन) भी २५% तक नष्ट हो जाता है, तथा विटामिन बी-१२ भी अशत बर्बाद हो जाता है।

प्रयोगो से पता चलता है कि अण्डे ८ डिग्री सेल्सियस के तापमान पर सडने लगते है। उक्त स्थिति भारत के अधिकाश भागो मे बिना किसी रेफ्रीजरेशन के सभव नही है। जब अण्डे सडने लगते है तब पहली घटना यह होती है कि उसका जलीय भाग कवच (शेल) मे-से भाफ बन कर उडने लगता है–फिर रोगाणुओ का आक्रमण शुरु होता है जो कवच मे अपनी पहुँच बना कर उसे पूरी तरह सडा देते है। □

अण्डे : स्वास्थ्य के लिए बेहद खतरनाक

आमतौर पर जो तथ्य सामने आये हैं, उनसे यह सिद्ध हुआ है कि अण्डे स्वास्थ्य के लिए बेहद खतरनाक हैं। इधर जो ताजा खोजें हुई हैं, उनसे मिले नतीजे इस प्रकार हैं –

कफ पैदा करते हैं

१ जर्मनी के प्रोफेसर एग्नरबर्ग का निष्कर्ष है 'अण्डा ५१ ८३ प्रतिशत कफ पैदा करता है। वह शरीर के पोषक तत्त्वो को असतुलित कर देता है।'

विषावरोधी शक्ति का क्षय

२ बाल्यावस्था मे अण्डे खाने से शरीर की विषावरोधी शक्ति पूरी तरह क्षीण या नष्ट हो जाती है। ऐसे बालक आगे चल कर साधारण-से-साधारण बीमारी का मुकाबला नही कर पाते। उनकी स्मरण-शक्ति कमजोर पड जाती है। उनके शरीर का स्वाभाविक विकास मद पड जाता है। उन्हें पीलिया, वात, पथरी, रक्तचाप (ब्लड-प्रेशर), आँतो-मे-मवाद जैसे भयकर रोगो का शिकार होना पडता है। यूरिक एसिड-जैसे मारक जहर के पेट मे जाने से पाचन-तन्त्र काफी शिथिल हो जाता है। उसमे सडांध आ जाती है।

आँतें सड जाती हैं

३ अण्डे खाने से पेचिश तथा मदाग्नि-जैसी बीमारियाँ घर कर जाती हैं तथा बाद को आमाशय कमजोर पड जाता है और आँतें सड जाती हैं। यह कोरी कल्पना नही है वरन् इग्लैंड के मशहूर चिकित्सक डॉ रॉबर्ट ग्रास तथा प्रो ओकाडा डेविडसन इरविग का पुख्ता मत है।

मनुष्यों के लिए जहर

४ अमेरिका के डा ई वी एमारी तथा इग्लैंड के डॉ इन्हा ने अपनी विश्व-विख्यात पुस्तको 'पोषण का नवीनतम ज्ञान' और 'रोगियो की प्रकृति' मे साफ-साफ माना है कि 'अण्डा मनुष्य के लिए जहर है'। बम्बई-स्थित हाफकिन इस्टीट्यूट ने 'पोषण और तन्दुरुस्ती' नामक किताब मे अण्डे खाने से होने वाले नुकसानो को प्रमाणित किया है।

हृदय-रोग, एक्झीमा, लकवा आदि

५ इग्लैंड के डॉ आर जे विलियम का निष्कर्ष है 'सभव है अण्डा खाने वाले शुरू मे अधिक स्वस्थता और चुस्ती का अनुभव करें, किन्तु बाद मे उन्हें हृदय-रोग, एक्झीमा, लकवा-जैसे भयानक रोगो का शिकार हो जाना पडता है'।

बौद्धिक और भावनात्मक क्षति

६ बहुत कम लोग इस तथ्य को जानते है कि अण्डे खाने से न सिर्फ शरीर की शक्ति क्षीण होती है वरन् गहन बौद्धिक और भावनात्मक क्षति भी होती है।

कैंसर की आशका

७ मासाहार, जिसमे अण्डा भी शरीक है, से लाखो लोगो को कैंसर की असह्य पीडा सहनी होती है। स्पष्टत अण्डा एक विज्ञापनी और व्यापारिक षड्यन्त्र है, उसे किसी भी हालत मे बर्दाश्त नही किया जाना चाहिये।

अण्डा जहर ही जहर/सबह

३० % अण्डों में डी.डी.टी.

८ तीस प्रतिशत अण्डो मे डी डी टी होता है। पौल्ट्रीज़ को जिस तरह रखा जाता है उसमे-से/उस प्रक्रिया मे-से हो कर डी डी टी मुर्गी के पाचन-तन्त्र मे घुल-मिल जाता है। फ्लोरिडा (अमेरिका) के कृषि-विभाग की हेल्थ वुलेटिन ने इस तथ्य को प्रकट किया है। 'वर्ल्ड-हेल्थ' (अग -सित १९८३) के पृ ५ पर कहा गया है कि एटार्कटिका मे पैंग्विनो की चर्वी मे डी डी टी पाया गया है। जव पैंग्विनो मे यह प्रदूषण के जरिये पहुँच सकता है तव मुर्गियो मे तो पहुँच ही सकता है। यह भी अण्डा खाने वालो की सेहत पर वुरा असर डालता है।

कोलेस्टेरोल से नुक़सान

९ एक अण्डे मे तकरीबन ४ ग्रेन कोलेस्टेरोल होता है, जिससे हाइ-ब्लड प्रेसर, किडनी की बीमारियाँ जैसे रोग पैदा हो जाते हैं। यह निष्कर्ष डॉ रॉवर्ट ग्रास का है।

पेट सड़ जाता है

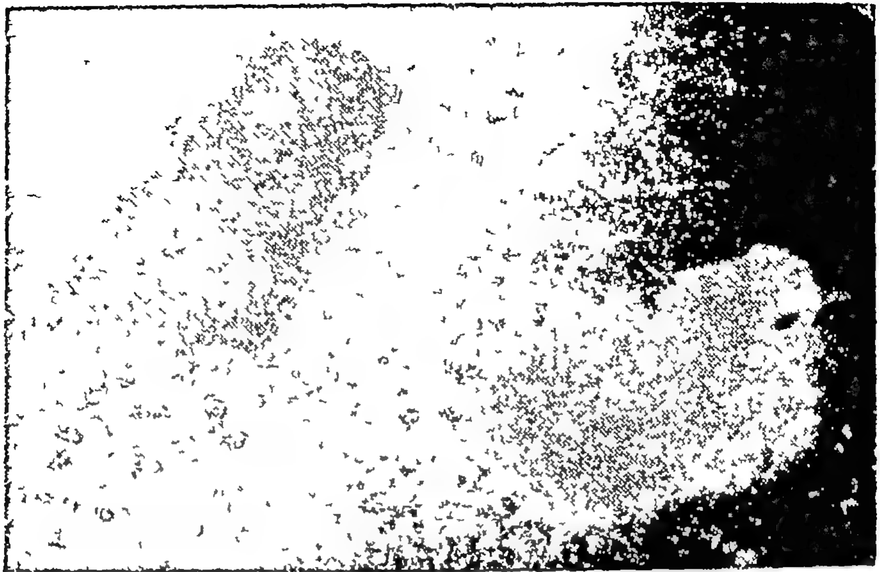
१० अण्डे मे कार्वोहाइड्रेट्स विल्कुल नही होते, कैल्शियम की मात्रा भी न्यूनतम होती है फलस्वरूप पेट मे सडाँध पैदा हो जाती है। यह निष्कर्ष डॉ ई वी. मेक्कालम का है।

मनुष्य चूहा नहीं है

११ सब जानते है कि हमे प्रोटीन चाहिये, और यह कि माँस और अण्डे प्रोटीन के सान्द्रित (कसेंट्रेटेड) स्रोत हैं, किन्तु यह बहुत कम लोग जानते हैं कि प्रोटीन-स्रोतो को खाने की तमाम सिफारिशे चूहो की पोषण-ज़रूरतो से सबन्धित खोज़ो की बुनियाद पर खडी हुई हैं। चूहो को जन्म-के-वाद मानव-शिशु की अपेक्षा दस गुना अधिक प्रोटीन की ज़रूरत होती है।

इसके अलावा मुर्गियाँ खुद कई असाध्य रोगो की शिकार होती हैं, जिनके इलाज पर पौल्ट्रीफार्मों को अनाप-सनाप धनराशि खर्च करनी होती है। ये बीमारियाँ या तो मुर्गियो को थोक मे मौत के घाट उतार देती है या फिर खाने वाले के पेट मे दाखिल हो जाती हैं और उसके जीवन को जीवित नर्क बना देती है।

क्षय, सग्रहणी, पीलिया, कैंसर, दमा ऐसी बीमारियाँ हैं, जो अण्डे खाने से होती हैं। इन बीमारियो की एक बृहत् सूची ए सी कैम्पबेल रोजर्स ने अपनी किताब 'प्रोफिटेबल पौल्ट्री कीपिंग इन इडिया' के अध्याय २२, पृ २१४-२३४ मे विस्तार से दी है। इस पुस्तक के पृ २१५ पर साफ-साफ लिखा है कि मुर्गियो को खाने मे ताज़ा कीडे, केंचुए, ताज़ा मास और ग्रीन बोन देना ज़रूरी होता है ताकि वे अच्छे अण्डे दें (*The most important item in their diet is a sufficiency of protein food either in the forms of fresh worm and insects or fresh lean meat and green bone, for without this important item of food your hens will neither lay nor keep in sound health*)। इतने पर भी माना जाए कि अण्डे फलाहार या शाकाहार है? □



कितने जुल्म ढाये जाते हैं इन मासूम चूज़ों पर

हम
या तो नकल करते है या फिर जो कुछ
विदेशो मे खारिज हो जाता है
उसे तत्परता से अपना लेते है। मांसाहार
को ले कर भी वही हो रहा है।
विदेशो मे इस पर तरह-तरह
की खोज़ें हो रही है, और लोग इसकी
व्यर्थताओ और खराबियो को जान कर
इसे छोड रहे है, और हम हैं कि सदियो
से इस तथ्य को जान कर भी कि यह
तामसिक है, इसे अपना रहे हैं।
न्यूयॉर्क (अमेरिका) सिटी यूनिवर्सिटी के
वैज्ञानिको के एक दल ने मुर्गी और अण्डे मे
विकासोन्मुख चूजे की सवेदनशीलता का
गहरा अध्ययन किया है।
इस दल ने पता लगाया है कि चूज़े के अण्डे
से बाहर आने के अडतालीस घंटो तक
उसका और मुर्गी का जीवन्त सपर्क
रहता है। मुर्गी की कुकडूं-कूं (क्लक्स)
और अडे के भीतर
पनप रहे चूज़े की चीं-चीं (पीप) के बीच
एक सवाद-प्रणाली बनी रहती है।

वैज्ञानिको ने ऐसे ११ सकेतो की पहचान
की है जिनके द्वारा मुर्गी का भ्रूणस्थ
चूज़े से
सवाद बना रहता है और दोनो एक-
दूसरे को प्रभावित करते हैं।
इन खोज़ो मे यन्त्र द्वारा कृत्रिम रूप मे
सेये जाने वाच अडो, तथा मुर्गी द्वारा
सेये जाने वाले अडो—दोनो का गहन
अध्ययन किया गया है।

प्राप्त निष्कर्षों ने कृत्रिम साधनो से
सवर्द्धित, तथा मुर्गी द्वारा सहज रूप मे
सेये जाने वाले चूज़ो को ले कर कई
जटिल सवाल खडे कर दिये हैं।
किन्तु इससे क्या ? मनुष्य को विज्ञान ने
हिंसक साधनो से इस तरह लैस
कर दिया है कि वह अपने इर्दगिर्द के
वातावरण को तो उजाडने ही लगा है,
साथ ही वह अपने साथ रहने-बसने
वाले जीव-जन्तुओ पर भी भारी/
दुस्सह/लोमहर्षक अत्याचार भी करने
लगा है।

तीम/अण्डा जहर ही जहर

'ब्रॉइल' अंग्रेजी का शब्द है, जिसके
मायने हैं आँच पर सीधे किसी वस्तु को
भूनना/उसका भुरता बनाना ।
'ब्रॉइलर' उन नर-चूजों के लिए प्रयुक्त
शब्द है जो ६ से ८ हफ्तों के होते हैं
और जिनका भुर्ता बना कर बेचा
जाता है।
ब्रॉइलर उद्योग
(इंडस्ट्री) विदेशों में तो काफी पनपा है,
किन्तु अब बदकिस्मती से यह वहां से
चल कर हमारे यहां भी जमने लगा है
ख्याल रहे कि इस उद्योग में
सिर्फ नर-चूजे ही काम में आते हैं।
मादा चूज़े या तो फेंक दिये जाते हैं,
या कुचल दिये जाते हैं, या बेहोश कर
दिये जाते हैं, या फिर उन्हें गला घोट
कर मार डाला जाता है।
एक ब्रॉइलर शेड में ९०,०००
तक चूज़े एक साथ रखे जाते हैं।
पूरा कर्म बेहद लोमहर्षक और क्रूर
होता है।
शेड में चूज़ों की जो दुर्दशा होती है
उसकी आप/हम कल्पना भी नहीं
कर सकते।

इन शेड्स/छप्परों में काम करने वाले
लोग दिन में एक बार सिर्फ इसलिए
दाखिल होते हैं ताकि वे मुर्दा पक्षियों/
चूजों को बाहर फेंक सकें।
शेड में चूजे इस कदर ठसाठस भरे
होते हैं कि वे हिल-डुल भी नहीं सकते।
उन्हें घनघोर अँधेरे में रखा जाता है।
उनकी जान पर इतना भारी जवाब
रहता है कि ८-६ हफ्ते के कई चूजे
दिन-के-दारे में सांस तोड़ देते हैं।
जो इंस्पेक्टर्स इन शेड्स का निरीक्षण
करने आते हैं
वे वर्ष में लगभग १ लाख ८० हज़ार
टन पोल्ट्री मांस खारिज कर जाते हैं।
सर्वेक्षण से पता चला है कि आज
२००० से अधिक दवाइयाँ और इतने
ही रसायन (केमिकल्स) पोल्ट्री फार्मों
और पशु-उत्पादकों द्वारा काम में
लाये जाते हैं।
(हमारे देश में भी अब यह दौर शुरू हो
गया है)
इन दवाइयों और रसायनों के जो
खतरनाक अवशेष पशु-उत्पाद अंडे/
मांस आदि में



प्रवेश करते है अन्तत व एक मॉसा-
हारी को तरह-तरह की असाध्य
बीमारियो का शिकार बना देते है।
अंडज-उत्पत्तिशालाओ (हैचरीज) मे
जहाँ अडजो (एग-ब्रर्ड्स) का बडे
पैमाने पर उत्पादन होता है,
नर-चूजो को प्लास्टिक की थैलियो मे
दम घोट कर मार डाला जाता है
और उनके
मुर्दा शरीरो को रोओ (फर) के लिए
पाले जाने वाले पशुओ के लिए जो
खुराक बनायी जाती है उसकी खाद के
रूप मे काम मे लाया जाता है।
अडे सेने वाली मुर्गी जितनी जगह मे
रहती है,

वह बेहद तग होती है, कहे, वहाँ वह
रहती नही है वरन् उसे ज़बरन ठूँस
दिया जाता है।
उसे पानी और खुराक तक पहुँचने
के लिए ज़िन्दगी और मौत के हडकम्प
से गुज़रना पडता है।
वह वहाँ तक कई मुर्गियो से जूझ कर
उन्हें लाँघ कर ही अपनी पहुँच बना
पाती है।

वैसे एक चूज़े की स्वाभाविक उम्र
बारह साल होती है। 'ब्रॉइलर' को
आठ हफ्तो का होते, न होते मार डाला
जाता है।

अण्डे सेने वाली मुर्गियाँ १८ से २४
महीनो मे मार डाली जाती है।
तब तक वे वैसे भी अकाल-वृद्ध हो
जाती हैं, क्योकि उनके
चयापचय तन्त्र (मेटाबॉलिज्म) को
अधिक अण्डे पाने की लोभ-लिप्सा मे
कृत्रिम उत्तेजनो द्वारा कमज़ोर कर
दिया जाता है।

इस अनावश्यक/अप्रत्याशित तनाव के
कारण उसका शरीर टूट जाता है।
वह असमय बुढा जाती है।
इन हैचरियो मे २० प्रतिशत मृत्यु-दर
सामान्य समझिये। अधिकाश मौतें
कैंसर और पुराने दमे के कारण ही
होती हैं।

ध्यान रहे जितनी देर मे आप यह
पृष्ठ पढ रहे है, उतनी देर मे
५,००० चूज़ो के प्राण लिये जा चुके हैं।
मनुष्य ने व्यापार और जायके के लिए
जिस तरह अपनी इस धरती को
उजाडना शुरू किया है,
उसके क्या नतीजे होगे, हम नही
जानते, किन्तु यह निश्चित है कि
इस धरती पर ऐसा कोई जीव-जन्तु या
पेड-पौधा नही है

जिसकी अपनी कोई स्वाभाविक भूमिका
अथवा महत्ता न हो,
किन्तु यह मनुष्य है, जिसके दांतो की
बनावट शाकाहार के लिए है और जो
अण्डो की खेती, केंचुओ की खेती, और
मछलियो की खेती द्वारा प्रकृति के सहज
सतुलन को चुनौती दे रहा है।

आज दुनिया मे जो भी भौतिक या
भावनात्मक असतुलन और सन्त्रास हैं
वह सब मनुष्य की बेरहमी, नृशसता,
और सवेदन-शून्यता का कुफल है,
दुष्परिणाम है।

—'पेटान्यूज' वाशिंगटन, वॉ. १ अक ८,
पृष्ठ ४-८ पर आधारित।

अण्डा : कितना ज़हर ?

प्रणवेन्द्र शर्मन

अण्डा-उत्पादन मे भारत का विश्व मे छठवाँ स्थान है। देश मे प्रतिवर्ष चौदह अरब अण्डो का उत्पादन होता है। अण्डा-उत्पादन मे देश की इस 'पिछडी हुई स्थिति' से सरकार अत्यधिक चिन्तित है। सरकार की योजनानुसार एक वर्ष मे प्रति व्यक्ति सौ अण्डे प्राप्त होने का लक्ष्य है, किन्तु अभी प्रतिवर्ष प्रतिव्यक्ति उत्पादन १७ अण्डे है।

उपर्युक्त जानकारी उस पुस्तिका से प्राप्त होती है, जिसका विमोचन २३ अप्रैल, १९८६ को केन्द्रीय कृषि राज्य मत्री श्री योगेन्द्र मकवाना ने नयी दिल्ली मे किया। श्री मकवाना ने अण्डो के उत्पादन मे देश की पिछडी हुई स्थिति पर चिन्ता व्यक्त करते हुए प्रसन्नता भी व्यक्त की कि पिछले दशक मे इस व्यवसाय मे 'अभूतपूर्व प्रगति' हुई है।

सरकार की दृष्टि मे यह नीति देशवासियो को सस्ता और पौष्टिक आहार पहुँचाने के उद्देश्य से प्रेरित है, क्योकि सरकार अण्डो को पौष्टिक समझने के साथ-साथ सस्ता भी समझती है। इसी समारोह मे दिल्ली मुर्गीपालन एसोसिएशन के अध्यक्ष श्री अमरनाथ जुनेजा यह कह रहे थे कि मुर्गी के दाने की कीमतो मे गत एक वर्ष मे ही एक हज़ार रुपए प्रति टन की वृद्धि हो गयी है। उनका कहना था कि दानो का भारी मात्रा मे आयात किया जाना चाहिये, तभी मुर्गी-पालन व्यवसाय को स्थायित्व प्राप्त होगा।

इस प्रकार पूरी स्थिति सामने होने पर यह विचार करना आवश्यक हो जाता है कि पौष्टिक अण्डा है या वह दाना, जो कि मुर्गियाँ आहार-स्वरूप ग्रहण करती है? जितना पौष्टिक अण्डा प्राप्त करना हो, उतना ही पौष्टिक और सतुलित मात्रा मे मुर्गियो को दाना देना होगा। इसके विपरीत खाद्यो के साथ ऐसा नही है। शाकाहारी खाद्य उत्पादन करने मे प्रकृति-सुलभ साधनो की ही आवश्यकता होती है। उसके लिए किसी प्रकार के आयात की आवश्यकता नही है। अण्डा प्राप्त करने के लिए मुर्गियो को जो दाना दिया जाता है, वह अन्न से तैयार किया जाता है। अन्न स्वय अपने-आपमे एक सम्पूर्ण आहार ही नही, अपितु मनुष्य के जन्म-से-मृत्यु-तक मुख्य आहार के रूप मे प्रयुक्त होता है। वे शाकाहारी खाद्य जो कि मनुष्य सरलता से प्राप्त कर रहा है और जो दैनिक जीवन मे भोजन के रूप मे सर्वत्र प्रयुक्त होते है, हर प्रकार से तुलना करने पर पौष्टिकता मे अण्डे से अत्यधिक श्रेष्ठ तो है ही, उनके मूल्य भी अण्डे की तुलना मे आधा या उससे भी कम है। यह निष्कर्ष भी भारत सरकार द्वारा प्रकाशित 'हेल्थ बुलेटिन न २३' से प्राप्त होता है कि अण्डे और शाकाहारी खाद्यों की पौष्टिकता एव मूल्य मे कितना अन्तर है।

तथ्यो से यह स्पष्ट है कि अण्डो की तुलना मे शाकाहारी पदार्थ बहुत सस्ते है, इस प्रामाणिक जानकारी के सरकार के पास होने पर भी सरकार अपनी अकल पर पर्दा डाले हुए है। आज जब हम अण्डो के भक्त बने जा रहे हैं, तब पश्चिमी देशो मे अण्डो के हानिकारक परिणामो पर नये-नये अनुसधान हो रहे हैं। अण्डे खाने वाले नहीं जानते कि उन्हें इनके सेवन के क्या परिणाम भोगना पड सकते हैं।

डॉ· कैथेराइन निम्मो (कैलीफोर्निया) के अनुसार, यदि बढिया अण्डे भी मिलें तो भी उनके बिना ही हम स्वस्थ रहेंगे, क्योंकि उन अण्डो मे भी कोलेस्टेरोल की मात्रा इतनी अधिक होती है कि जिसके कारण दिल की बीमारी, हाईब्लड प्रेशर, गुरदे की बीमारी, पित्ताशय मे पथरी आदि रोग हो जाते है, जबकि फलो, सब्जियो और वनस्पति तेलो मे कोलेस्टेरोल नही होता। डॉ जे एम विल्कन्ज (इग्लैण्ड) के अनुसार अण्डे की जरदी मे प्रचुर कोलेस्टेरोल तत्त्व होता है, जो एक चिकना अल्कोहल है। यह जिगर मे जा कर जमा होता है और फिर धमनियो मे ज़ख्म और कडापन पैदा करता है।

डॉ रावर्ट ग्रास (इग्लैण्ड) के अनुसार अण्डे की सफेदी अण्डे का सर्वाधिक खतरनाक भाग है। जिन जानवरो को अण्डे की सफेदी खिलायी गयी उन्हे लकवा मार गया और उनकी चमडी सूख गयी।

डॉ. आर विलियम्स (इग्लैण्ड) के अनुसार अण्डे की सफेदी मे एवीडिन नामक तत्त्व होता है, जो एग्जिमा उत्पन्न करता है।

डॉ रॉबर्ट ग्रास (इग्लैण्ड) के अनुसार मुर्गी के बच्चो मे बहुत-सी बीमारियाँ होती है। अण्डे उन बीमारियो को, विशेषतया पेचिश के कीटाणुओ को, अपने साथ लाते हैं और इन्हे खाने वालो मे पैदा करते है।

इस प्रकार प्रसिद्ध वैज्ञानिको एव चिकित्सको के परीक्षणो से यही निष्कर्ष निकलता है कि अण्डे खाना स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त हानिकारक है। **अण्डो से शरीर को पौष्टिक तत्त्व जिस मात्रा मे प्राप्त होते हैं, उसकी तुलना मे रोग अधिक मिलते हैं, जिनका परिणाम दुःखद और भयकर होता है।**

शाकाहारी खाद्य शरीर को निरोग और स्वस्थ बनाते है। सोयाबीन, मूंग, उडद, चने आदि अकुरित करके खाने पर जितनी कैलोरियाँ शरीर को मिलती हैं, वे अण्डो की तुलना मे कम-से-कम दस गुना अधिक हैं।

आज रेडियो-टेलीविजन आदि प्रचार के सभी सशक्त माध्यम अण्डो का धुआँधार विज्ञापन कर रहे हैं। क्या कभी प्रकृति द्वारा प्रदत्त किसी शाकाहारी खाद्य का विज्ञापन भी सरकारी माध्यमो द्वारा हुआ है? प्रकृति ने जो भोजन मनुष्य के लिए निर्धारित किया है, वह मनुष्य स्वत ही खायेगा, उसके लिए किसी विज्ञापन की आवश्यकता नही है।

सरकार भारत को गरीब मुल्क मानती है। जिस देश की निर्धन जनता को दो समय की दाल-रोटी नही मिलती, उस जनता को कामुकता और विकारपूर्ण महँगे अण्डे खिलाने की योजना कितनी मूर्खतापूर्ण है! अत हमे अण्डा उत्पादक देशो की होड मे शामिल न हो कर दूध, मक्खन, पनीर, दाल, शाक, फल और मेवो के प्रचुर उत्पादन की योजनाएँ बनानी चाहिये। □

क्या अण्डा अहिंसक है ?

[illegible]

अहमदाबाद से प्रकाशित गुजराती मासिक 'जन-कल्याण' के अक्टूबर १९८३ अंक में श्री मनोज मेहता का 'सौन्दर्य नहीं बनो क्रूरता' शीर्षक लेख बहुत मूल्य का है। इसमें उन्होंने रोजमर्रा के जीवन में काम आने वाले उन बहुत से सौन्दर्य-प्रसाधनों के बारे में लिखा है, जिनसे बहुत से जीवों (पंचेन्द्रिय जीव) की हिंसा होती है। यदि कोई व्यक्ति अपने जीवन को विभिन्न (कृत, कारित, अनुमोदित) हिंसक कार्यों से मुक्त करना चाहता है तो उसे सादा-से-सादा जीवन-यापन करना चाहिये। इसी लेख में फार्म-से-प्राप्त अण्डों का भी प्रामाणिक लेखा-जोखा प्रस्तुत किया गया है।

अण्डे दो प्रकार के होते है एक वे, जिनसे बच्चे निकल सकते हैं, तथा दूसरे वे, जिनसे बच्चे नहीं निकलते। दूसरे प्रकार के अण्डो को 'कुक्कट-अण्डा' भी कहते हैं। मुर्गी यदि मुर्गे के सम्पर्क मे न आये तो भी वह जवानी मे अण्डे दे सकती है। इन अण्डो की स्त्री के रज स्राव से तुलना की जा सकती है। जिस प्रकार स्त्री का रजोधर्म (मासिक धर्म) होता है, उसी तरह मुर्गी के भी यह धर्म अण्डो के रूप में होता है, अत यह अण्डा मुर्गी की आन्तरिक गन्दगी (मैल) का ही परिणाम है। आजकल इन्हीं अण्डो को अहिंसक, शाकाहारी, वेज आदि कई भ्रामक नामो से पुकारा जाता है। इस प्रकार के अण्डे पाने के लिए देश मे हजारो-हजार 'उत्पादन-केन्द्र' स्थापित किये गये हैं। सरकार भी इस कार्य को प्रोत्साहित करती है तथा इसके लिए धन उपलब्ध कराती है। विभिन्न उत्पादन-केन्द्रो (फार्मो) मे इन अण्डो के उत्पादन की जो प्रक्रिया है, यहां उसी का वर्णन हम कर रहे है।

प्रथम मुर्गी का बच्चा जैसे ही अण्डे से बाहर निकलता है, नर तथा मादा बच्चो को अलग-अलग कर लिया जाता है। इस प्रकार अलग किये गये मादा बच्चो को एक खास प्रकार की खुराक दी जाती है, ताकि ये शीघ्र जवान हो जाएँ। इन्हे बल्ब के प्रकाश मे चौबीसो घण्टे रखा जाता है, जिससे ये सो न पायें तथा रात-दिन खाते ही रहें। इस तरह इन्हें बहुत कम आराम मिल पाता है। जैसे ही मुर्गी अण्डा देने लायक हो जाती है, या यूं कहें कि जैसे ही वह रज स्राव करने लगती है, उसे जमीन के बदले तग पिंजरो मे रख दिया जाता है। एक पिंजरे मे कई-कई मुर्गियां रखी जाती हैं। यहां इन्हें इतनी कम जगह मिलती है कि ये पख भी नही

फडफडा सकती। तग जगह मे रहने से वे गुस्सा करती रहती हैं तथा आपस मे हं चोचे मारती रहती हैं। कभी-कभी इन्हे गहरे घाव भी हो जाते हैं और वे मर भी जाती हैं। इनकी चोचो मे छेद पड जाते हैं। जब मुर्गियां अपनी चोचे पिंजरे की जाली से बाहर निकालती हैं, तब चोचे उसमे फँस जाती है। इससे उन्हें बहुत कष्ट होता है।

ज़मीन के बदले मुर्गी को जाली (पिंजरे) मे रखने का मुख्य कारण यह है कि अण्डा जाली मे-से किनारे पड कर अलग हो जाता है। मुर्गी की प्राकृतिक भावना इन अण्डो को सेने की होती है। ऐसा करने देने से उन्हें अगला धर्म-स्राव देर से होता है, यानी अण्डा देर से पैदा होता है, किन्तु यदि वह अण्डा नही सेती हैं तो वह अगला अण्डा जल्दी देती हैं, अत अधिक अण्डे पाने-की-लालसा से मुर्गी को अण्डे सेने का मौका नही दिया जाता। इस प्रकार मुर्गी जिंदगी-भर पिंजरे मे कैद रहती है। वह उस तग पिंजरे मे जरा भी चल-फिर नही सकती है, परिणाम-स्वरूप उसकी टाँगो मे दर्द बना रहता है तथा कई बार वे बेकार हो जाती है। प्राकृतिक रूप से मुर्गी जितने अण्डे (धर्म-स्राव) देती है, उससे अधिक अण्डे पाने के उद्देश्य से उसे खास किस्म का आहार दिया जाता है, जिसमे सामान्यत पिसी हुई सूखी मछलियां, सगमरमर/खडिया के छोटे-छोटे टुकडे तथा खराब किस्म की घुन वाली मकई (मक्का) आदि होती हैं। जब मुर्गी कम अण्डे देने लगती है, तब उसकी उपयोगिता भी घट जाती है तथा उसे कत्लखाने मे भेज दिया जाता है। इस प्रकार क्रूरतापूर्ण तरीके से मुर्गियो को विभिन्न यन्त्रणाएँ देने के बाद जो अण्डे प्राप्त होते हैं, उन्हें भला अहिंसक कैसे कहा जा सकता है? जिन्हें पाने के लिए मुर्गियो को ज़बरन मछलियां खिलायी जाती हैं, वे अण्डे शाकाहार कैसे हो सकते है? जो लोग इन अण्डो को अहिंसक, या शाकाहारी कहते हैं वे आम जनता को तो भ्रमित करते ही है, स्वय को भी धोखा देते है। □

सावधान !

पिछले दस वर्षो मे देखते-ही-देखते उत्तर-पूर्वी अमरीका मे अतिसार (डायरिया) पेट-की-ऐंठन, बुखार, जी मिचलना, और उल्टियो-से-ग्रस्त रोगियों की संख्यां में सात गुना वृद्धि हुई है। समझा जाता है कि इस आकस्मिक वृद्धि का कारण 'सेलमोनेला एनटेरिटाइडिस' नामक जीवाणु है, जो मुर्गियो की अतड़ियों को एक खूबसूरत गेस्ट हाउस समझ कर फलता-फूलता रहता है। यह जीवाणु मुर्गियों के अण्डाशय को छुतहा बना कर, संक्रमित करके सीधा 'एग येलो' (योक) मे पहुँच जाता है। □

शाकाहारी पदार्थों की पौष्टिकता अण्डे से अधिक

रवीन्द्र कुमार जैन

हमारा देश खाद्यान्न के मामले में पूरी तरह आत्मनिर्भर है, अतः अण्डा के उत्पादन और खपत की कोई जरूरत नहीं है। वैज्ञानिकों ने यह साबित किया है कि अण्डे मांसाहार हैं, क्योंकि मुर्गियों को भोजन में ताजा कीड़े, केंचुए तथा ग्रीनबोन दिया जाता है। निषेचित और अनिषेचित दोनों प्रकार के अण्डे जीवयुक्त होते हैं। क्या इतने पर भी न माना जाए कि अण्डे मांसाहार हैं? स्पष्ट तथ्यात्मक जानकारी के अभाव में यह भ्रान्ति फैलायी जा रही है कि अण्डा सतुलित आहार है, वास्तव में अण्डे स्वास्थ्य के लिए बहुत घातक हैं; यह तथ्य निम्नलिखित वैज्ञानिक निष्कर्षों से स्पष्ट है—

(१) अण्डे में २६० से ३०० मिलीग्राम कोलेस्टेरोल की मात्रा रहती है, जिससे उच्च रक्तचाप, किडनी की बीमारी होती है। यदि इसे 'फ्राइ' कर लिया जाए तो कोलेस्टेरोल की मात्रा बढ़ जाती है, जिससे अतितनाव, हृदयाघात, पथरी, काठिन्य जैसे रोगों की आशंका बढ़ जाती है।

(२) बच्चों में अण्डों के अधिक सेवन से शरीर में रोग प्रतिरोधक क्षमता का ह्रास होता है। उनका स्वाभाविक विकास रुक-सा जाता है। उनकी स्मरण और भावात्मक शक्ति क्षीण हो जाती है। उन्हें पीलिया, वात, पथरी, रक्तचाप, आँतों में मवाद जैसे रोग हो सकते हैं।

(३) अण्डा कफ पैदा करता है, जो शरीर के पोषक तत्त्वों को असतुलित कर देता है।

(४) अण्डा खाने से कैंसर, हृदयरोग, एक्जीमा, लकवा, पेचिश, मदाग्नि, क्षय, संग्रहणी जैसे भयानक रोगों का शिकार हो जाना पड़ता है। ये निष्कर्ष प्रो एगनरबर्ग, डॉ विलियम, और डॉ मेथकालाम के हैं।

प्रोफिटेबल पोल्ट्री कीपिंग इन इंडिया (ए सी केम्पबेल), पोषण और तंदुरुस्ती (हैफकिन इंस्टीट्यूट), पोषण का नवीनतम ज्ञान (डॉ एमारी तथा डॉ इन्हा) नामक किताबों में अण्डे खाने से होने वाले नुकसानों को प्रमाणित किया गया है।

संलग्न तालिका से अण्डे की पौष्टिकता कितनी है, यह स्पष्ट है।

अण्डे, हरा चना, सोयाबीन, मूंगफली के पौष्टिक तत्त्वों की तुलना

पौष्टिक तत्त्व प्रतिशत	अण्डा	हरा चना	सोयाबीन	मूंगफली
प्रोटीन	१३ ३	२४	४३ २	३१ ५
वसा	१३ ३	१ ३	१९ ५	३९ ८
कार्बोहाइड्रेट	० ०	५६ ६	२२ ९	१९ ३
खनिज	१ ०	३ ६	४ ६	२ ०३
ऊर्जा (कैलोरी)	१७३	३३४	४३२	५४९

अण्डा यानी हृदय-रोग को सीधा निमन्त्रण

अरविन्द जैन

वर्षो से चली आ रही यह धारणा कि बच्चो को अण्डे खाने से नुकसान नही होता, वैज्ञानिक माइकल ब्राउन तथा गोल्डस्टीन की खोज़ो से गलत निकली। भले ही ऐसे बच्चे ऊपर से हृष्ट-पुष्ट दिखायी दे, परन्तु अदर से हृदय-रोग ग्रस्त हो जाते है।

वैज्ञानिको के अनुसार मानव-शरीर मे कोलेस्टेरोल नामक एक तत्त्व होता है। यह तत्त्व वनस्पतियो मे नही के बराबर होता है, पर माँस तथा जानवरो से प्राप्त वसा मे प्रचुर मात्रा मे होता है। इस मान से शरीर मे कोशिका-झिल्ली तथा हारमोन्स बनते है। यह तत्त्व शरीर के लिए आवश्यक भी है। अगर यह कोलेस्टेरोल रक्तवाहिनी मे जमना शुरू हो जाता है तो रक्त-प्रवाह मे बाधा डालता है। धीरे-धीरे जमते-जमते यह इतना अधिक हो जाता है कि रक्तप्रवाह रुक जाता है और हृदय काम करना बद कर देता है।

नयी खोज़ के अनुसार रक्त मे पाये जाने वाला पदार्थ 'लोडेसिटी-लिपोप्रोटीन' या एल डी एल है, जो कोलेस्टेरोल को रक्त मे अपने साथ प्रवाहित करता है। शरीर मे जिगर तथा अन्य भागो के सेलो मे एक पदार्थ है, जिसे 'रिसेप्टर' कहते है। वह एल डी एल तथा कोलेस्टेरोल को रक्त मे विलीन कर लेता है। इसके परिणामस्वरूप रक्त-प्रवाह मे कोई बाधा नही आती है। इन वैज्ञानिको के अनुसार, जो व्यक्ति मासाहार तथा अण्डे खाते है, उनके शरीर मे रिसेप्टरो की सख्या मे कमी हो जाती है, अत रक्त मे कोलेस्टेरोल की मात्रा अधिक हो जाती है।

कोलेस्टेरोल अण्डो मे सबसे अधिक मात्रा मे पाया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप चर्म रोग भी हो जाते है। अण्डो से कुछ लोगो को एलर्जी भी होती है। कुछ दिन पूर्व इडियन कौसिल ऑफ एग्रीकल्चरल रिसर्च द्वारा किये गये सर्वेक्षण से पता चला कि फल, सब्जियो, अण्डे तथा माँस मे डी डी टी के अश पाये गये। अण्डो मे डी डी टी का अश अधिक मात्रा मे होता है, क्योकि पौल्ट्री फार्मो मे मुर्गियो को महामारी से बचाने के लिए डी डी टी आदि दवाइयो का खूब धडल्ले से इस्तेमाल होता है, परिणामस्वरूप अण्डे खाने वाले लोगो के पेट मे इन दवाइयो के अश आ जाते है।

अब तक अण्डो को सुपाच्य समझा जाता था, क्योकि यह प्रयोग जानवरो पर किये जाते थे। कुछ वैज्ञानिको ने अब इनका प्रयोग मनुष्यो पर किया, तब पाया गया कि ये सुपाच्य नही है। वैसे भी अण्डे के छिलके पर लगभग १५००० सूक्ष्म छिद्र होते है। इनके द्वारा कई जीवाणु अण्डे मे प्रवेश कर जाते है जो उसे दूषित कर देते है। वैसे भी अण्डे आठ डिग्री सेल्सियस के तापमान पर ख़राब होने शुरू हो जाते है। आजकल विदेशो मे भी अण्डे न खाने की राय दी जा रही है। □

अण्डा
५ प्रतिशत फायदा
९५ प्रतिशत नुकसान



बम्बई के सुप्रसिद्ध डॉक्टर श्री वसत जाई ने स्वास्थ्य की दृष्टि से अण्डे का बड़ा सुलझा हुआ मूल्याकन किया है।

डॉ जाई गत ३० वर्षों से डायटोलॉजिस्ट (आहार-विशेषज्ञ) एव न्यूट्रिशनिस्ट (पोषक तत्त्व-विशेषज्ञ) की हैसियत से हाफकिन इस्टीट्यूट तथा हरकिसनदास अस्पताल मे सेवारत रहे हैं।

उनका स्पष्ट मत है कि यदि अण्डे से ५ प्रतिशत फायदे हैं तो उससे ९५ प्रतिशत नुक़सान भी हैं। अण्डे का प्रचार करने वाले प्राय उसमे उपलब्ध प्रोटीन का गुणगान करते हैं। उनसे कहो कि अण्डे की तुलना खट्टे-मीठे फलो से करें और फिर बतायें कि उसमे विटामिन 'सी' कितना है? ध्यान रहे १०० मिलीग्राम विटामिन 'सी' प्राप्त करने के लिए सिर्फ एक पाव सतरा या टमाटर चाहिये, जबकि इतना ही विटामिन 'सी' पाने के लिए १० किलोग्राम यानी २०० अण्डे खाने पड़ेंगे।

त्र एव जानकारी *'चित्रलेखा'* (गुजराती) २ मई ८८ से।

तो हम अण्डे खायें ?

शोभन

वडौदा से प्रकाशित गुजराती पाक्षिक 'भूमिपुत्र' के १६ अप्रैल, '८७ के अं मे अण्डों के बारे मे श्री शोभन ने जो अध्ययन-पूर्ण जानकारी दी है, वह विशे रूप से मननीय है। अण्डों को अपने आहार का अग बना कर मनुष्य अपने शरी को तरह-तरह के रोगों का अड्डा क्यों बनने दे ? हमे विश्वास है कि श्री शोभ द्वारा दी गयी इस जानकारी के बाद कोई भी विवेकवान् और विचारशील व्यवि अण्डों को अपने आहार मे स्थान देना पसन्द नहीं करेगा।

महाविद्यालय के एक विद्यार्थी पिछले दिनो उपचार के लिए आये। छह मही पहले जब वे आये थे तो उनका चेहरा कमल-के-फूल की तरह खिला हुआ था लेकिन पिछले छह महीनो मे वे इतने बदसूरत बन चुके थे कि उनके चेहरे की तर देखने की इच्छा ही नही होती थी। वे उग्र रूप से मुँहासो की अर्थात् मुखदूषिका व बीमारी से पीडित थे। **पूछने पर पता चला कि छात्रावास मे रहते समय अप मित्रो की नक़ल करते हुए उन्होंने भी रोज दूध के साथ अण्डे खाने का ज सिलसिला शुरू किया, उसी की वजह से उन्हें यह बीमारी हुई है।**

आज यह स्थिति महाविद्यालय के इस एक ही छात्र की नही है, हमा महाविद्यालय मे पढने वाले हज़ारो छात्र अपने माता-पिता की गाढी कमाई को, जि माता-पिता अपना पेट काट कर अपनी सन्तान के लिए भेजते हैं, अण्डो, मास, पा तम्बाकू, बीडी, नशीली दवाइयो, शराब, सिनेमा आदि पर खर्च करते रहते हैं, औ इसके कारण वे कई तरह की बीमारियो के शिकार बनते हैं। अण्डो मे विषय-वास को उत्तेजित करने की शक्ति रहती है, इसलिए अण्डो आदि का सेवन करने वा नौजवान समय से पहले ही विषय-सेवन के दुष्ट चक्र मे फँस कर स्वप्न-दोष, हस्त मैथुन, व्यभिचार आदि की बुराइयो मे फँस जाते है।

सारी दुनिया मे चिकित्सा-विज्ञान के और आहार-शास्त्र के क्षेत्र मे जो खोज़ वैज्ञानिको द्वारा की जा रही है, उसके फलस्वरूप यह बात अधिकाधिक स्पष्ट होती जा रही है कि अण्डों मे शरीर की शक्ति बढाने के बदले रोग बढ़ाते रहने की क्षमता अधिक है। हृदयरोग, उच्च रक्तचाप, गुरदे की बीमारियाँ और पथरी-जैसी बीमारियो के लिए कारण-रूप 'कोलेस्टेरोल' नामक तत्त्व एक अण्डे मे चार ग्रेन होता है।

अमेरिका मे फ्लोरिडा के कृषि-विभाग ने डेढ साल की खोज-बीन के बाद प्रकट किया था कि तीस फीसदी अण्डो मे डी डी टी के तत्त्व पाये जाते हैं, जो बहुत ही खतरनाक होते हैं। डॉक्टर ई व्ही मैक्कालम कहते हैं कि अण्डो मे कार्बो-हाइड्रेट्स बिलकुल न होने और कैल्शियम भी कम होने के कारण पेट मे सडाँध पैदा होती है। अण्डो मे टी बी और सग्रहणी की बीमारी विशेष मात्रा मे रहती है, इसलिए अण्डो का सेवन करने वालो को भी ये बीमारियाँ होती रहती हैं। आयुर्वेद में कहा गया है कि दूध के साथ 'मास या अण्डे खाने से वह एक परस्पर-विरोधी आहार का रूप ले लेता है। ऐसे आहार के फलस्वरूप श्वेतकुष्ठ, खाज, मुँहासा, दाद, सोरायसिस, खुजली आदि चमडी के लगभग सभी रोग पैदा होते हैं। इसका समर्थन करते हुए डॉक्टर आर जे विलियम्स ने और डॉक्टर रॉबर्ट ने कुछ पशुओ पर प्रयोग करने के बाद यह सिद्ध किया है कि अण्डे के अन्दर की जरदी मे 'एविदिन' नाम का एक हानिकारक तत्त्व रहता है, जिसके सेवन से खाज, दाद, चमडी का कैन्सर, चमडी मे सूजन के अलावा लकवा भी हो सकता है। डॉक्टर जे एमन विल्कज और डॉक्टर कैथोराइन निम्बा का कथन है कि अण्डो के सेवन से दिल की धडकन बन्द होने की अधिक सभावना रहती है। इसके कारण पित्ताशय की पथरी और मानसिक व्याधि-जैसे रोग भी होते है। डॉक्टर गोविन्दराजन की खोज़ से पता चला है कि अण्डो मे प्राप्त नाइट्रोजन, फॉस्फेरिक एसिड और चरबी के कारण शरीर मे एसिड की मात्रा बढ जाती है, जिसके फलस्वरूप एसिडिटी के कारण उत्पन्न होने वाले अनेक रोगो को बढावा मिलता है।

'हाउ हेल्दी आर एग्ज़ ?' नामक पुस्तक के लेखक कहते है कि नर-मादा के रज-शुक्र मे-से उत्पन्न होने वाले अण्डे गन्दे होते हैं। अण्डो मे जो सफेदी पायी जाती है, उसमें उस प्राणी के मल-मूत्र एकत्र हुए रहते हैं। अण्डे खाने वाले लोग इन्हें अपने पेट मे डाल कर बीमारियो को और गन्दगी को न्योतते रहते हैं। सात्त्विकता खोते हैं, और तमोगुण की कमाई करते हैं। अण्डे आँतो मे रहने वाले 'कॉमन

वकीली' किस्म के कीटाणुओ को विषैला वना कर अनेक रोगो को जन्म देते है। लन्दन के एक एस आर सी डॉक्टर जे आर मैक्डॉनल ने इसकी पुष्टि की है।

कैलीफोर्निया के वैज्ञानिक डॉक्टर जे अमेन्ज़ा कहते है कि अण्डो मे पाया जाने वाला 'कोलेस्टेरोल' नाम का विप रक्तवाहिनियो मे छेद उत्पन्न करके कई तरह के रोगो को जन्म देता हैं। जर्मन प्रोफेसर एग्नरवर्ग कहते है कि अण्डे के समान कफ-कारक दूसरा कोई पदार्थ होता ही नही। सौ मे-से ५२ लोगो को कफ का उपहार दे कर अण्डा जुकाम, खाँसी, और दमा-जैसी वीमारियो को जन्म देने का कारण वनता है। वाजारो मे मिलने वाले शक्तिवर्धक आहारो मे जैसे चॉकलेट, ब्रेड, केक आदि मे अण्डे होते हैं और हमारे अहिंसक कहे जाने वाले लोग भी वडे चाव के साथ अपने वालको को ये सारी चीज़े रोज-रोज खिलाते रहते हैं। बम्बई की 'हाफकीन इन्स्टीट्यूट' नामक सस्था ने अपने अनुसधान मे कहा है कि छोटे वच्चो की जठराग्नि दुर्वल होती है, इसलिए उन्हे अण्डे या अण्डेवाली चीजें देनी ही नही चाहिये। भारत सरकार द्वारा प्रकाशित 'हेल्थ वुलेटिन' मे वताया गया है कि अण्डो, मास और मछली की तुलना मे शाकाहारी खाद्य पदार्थों मे प्रोटीन अधिक होता है। □



वत्तीम / अण्डा जहर ही जहर

→

(इन्फर्टाइल) अण्डो को शाकाहारी अण्डे (वेजीटेरियन एग) जैसा मिथ्यानाम दे कर भारत की शाकाहारी समाज मे एक भ्रम फैला दिया । वास्तव मे यूनीसेफ-जैसी उत्तरदायी सस्था को यह काम नही करना था, किन्तु वदकिस्मती से यह हुआ और कई लोग अण्डो से उत्पन्न अनेक गभीर वीमारियो के शिकार हुए। आज भी हम उस अभिशाप को भोग रहे हैं। अण्डे का उपर्युक्त चित्र सारी कहानी को विस्तार से कह रहा है ।

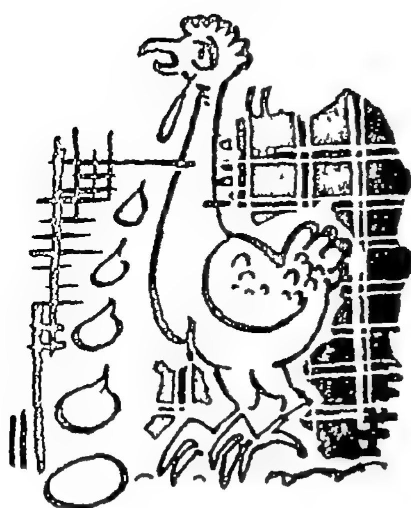
चित्र की दाहिनी ओर वायु-क्षेत्र वताया गया है । यह वहुत महत्त्वपूर्ण है । यह क्षेत्र अण्डे की दो कवच-झिल्लियो को अलग करता है और भ्रूण को श्वासोच्छ्वास की सुविधा देता है । यह भ्रूण को वाहरी दुनिया से जोड़ता है । यह सभी अण्डो मे होता है । इसी तरह अण्डे के सवसे ऊपरी भाग मे बीचोबीच एक छोटी रकाबी (ब्लास्टोडिस्क/जर्मिनल डिस्क/जनन-विम्ब) होती है । अण्डे के गर्भ से बाहर आते ही इसमे विदलन (क्लीवेज) शुरू हो जाता है । कैलाजा (श्वेतक रज्जुओ) को देखें। यह गर्भ-मे-स्थित अण्डवाहिनी मे अण्डे के घूमने से वनती है और अल्वूमनी द्रव मे अण्डे को बीचोवीच वनाये रखती है । किसी भी अण्डे की रचना मे जव हम इन तीन स्थितियो की समीक्षा करते हैं, तव यह शत-प्रतिशत सिद्ध हो जाता है कि अण्डा, फिर वह किसी भी जीव का हो, सजीव/जीवन-युक्त होता है। इस तरह विज्ञान की नज़र मे भी 'अण्डे को शाकाहारी कहना' एक बहुत वडी झूठ है ।

वात सन् १९७१ की है ।

मिशीगन यूनिवर्सिटी (अमेरिका) के वैज्ञानिको ने यह सिद्ध किया कि ससार का कोई अण्डा निर्जीव नही है, फिर चाहे वह निषेचित (सेया गया) हो अथवा अनिषेचित ।

इसी वर्ष श्री फिलिप जे स्केम्वल ने 'पौल्ट्री फीड्स एड न्यूट्रीशन' शीर्षक से एक पुस्तक लिखी, जिसके १५ वें पृष्ठ पर साफ-साफ कहा गया है कि अनिषेचित (इन्फर्टाइल) अण्डे भी जीव-युक्त होते है । वैज्ञानिक स्केम्वल के शब्द है – अण्डा वहुत नाजुक होता है। वह प्रतिकूल वातावरण के प्रति भी सवेदनशील होता है । वस्तुत अण्डे की उत्पत्ति वच्चे के सृजन के लिए होती है, मनुष्य की खुराक के लिए नही । अण्डे मे हवा के आने-जाने की नैसर्गिक व्यवस्था है । सफेद खोल के अन्दर वने सूक्ष्म छिद्रो मे हो कर ऑक्सीजन अन्दर जाता है और जरदी की भाफ कार्वन-डायोक्साइड को वाहर फेंकती है, जिससे अण्डे का भ्रूण जीवित रह कर विकास करता है । यही वात अनिषेचित (अनफर्टेलाइज्ड) अण्डो पर भी लागू होती है ।

श्वासोच्छ्वास जीवन की निशानी है और जव भी यह अवरुद्ध होता है, अण्डा सड़ जाता है। वैज्ञानिक तमाम अण्डो मे जीव मानते है, अत जो लोग ऐसा नही मानते वे अनायास ही चौदहवी सदी मे उतर जाते हैं। वस्तुत अण्डा गर्भरस है, अत उसे शाकाहार के अन्तर्गत गिनना-गिनाना एक वहुत वडा धोखा है और अपने स्वार्थ के लिए फैलायी जाने वाली भयानक भ्रान्ति है। □



जितनी देर मे आप यह पृष्ठ देख-पढ रहे हैं, उतनी देर मे ५,००० चूजों के प्राण लिये जा चुके है।

सवाल उठता है कि क्या अण्डा संपूर्ण आहार है ?
स्पष्टत नही।
क्या, सिर्फ अण्डे खा कर मनुष्य जीवित रह सकता है, और उसे काम करने के लिए अपेक्षित/आवश्यक ऊर्जा/कैलोरियाँ मिल सकती है ? नही।
आहार-विज्ञान के अनुसार बैठक का काम करने वाले एक व्यक्ति को २,४००, मद्धम दर्जे का काम करने वाले को २,८०० और भारी श्रम करने वाले को प्रतिदिन ३,९०० कैलोरियों की जरूरत होती है। तो क्या इन्हे वह क्रमश प्रतिदिन २८, ३२ और ४५ अण्डे खा कर प्राप्त करे ? और क्या इतने अण्डे खा कर उसे वह सब मिल जाएगा जो एक संपूर्ण/संतुलित आहार में-से प्राप्त होता है ? नही (यहाँ यह ध्यान रखे कि एक अण्डे से कुल मिला कर ८७ ५ कैलोरियाँ मिलती हैं)।

माँसाहार सौ तथ्य

डॉ नेमीचन्द



होशियार!!



* मांस-की बुनियाद पर खडे आहार से क्रमश· हड्डियो की सघनता घटती है और वे कमजोर और कच्ची पड़ जाती है (तथ्य-१३)।
* विश्व स्वास्थ्य सगठन (डब्ल्यूएचओ) की बुलेटिन सख्या ६३७ के अनुसार माँस खाने से शरीर मे लगभग १६० बीमारियाँ प्रविष्ट होती है (तथ्य-४७)।
* माँस मे निहित 'यूरिक एसिड' खून मे मिल कर हृदय-रोग, फेफडो-की रुग्णता, क्षय (टी.बी.), खून-की-कमी (एनीमिया), हिस्टीरिया, दमा, अजीर्ण, अतिनिद्रा, इन्फ्लूएजा, निमोनिया, गठिया, गर्दन/कमर-दर्द, कृशता आदि सैकड़ो बीमारियाँ पैदा करता है (तथ्य-५७)।
* आप शायद इस तथ्य से चौंक पडेगे कि अमेरिका को हृदय-रोग की रोक-थाम/इलाज पर प्रतिवर्ष ६० अरब डॉलर खर्च करने पडते हे। वहाँ यह वाक्य एक कहावत की तरह चलन मे है— अधिक माँमाहार अधिक हृदय-रोग (तथ्य-६४)।
* अमेरिका मे तम्बाकू, शराव, और नशीली वस्तुओ के बाद मृत्यु का सवमे बड़ा कारण मॉसाहार है (तथ्य-९८)।
* मांसाहार पानी-की-कमी-जेसी गभीर समस्याओ को जन्म देता हे (तथ्य-२)।
* अमरीकी पशु जितना अन्न और सोयावीन खाते है, उतने से एक अरव तीन करोड़ लोगो का पेट भरा जा सकता है (तथ्य-३)।
* मॉसाहार के कारण दुनिया के तमाम मुल्को की जमीन बजड हुई जा रही हे (तथ्य-४)।
* किसी भी प्रकार के मॉसाहार मे विटामिन 'सी' नही होता। मॉसाहार इस अद्‌भुत अमृत से वचित हे (तथ्य-६)।
* अण्डे की सफेदी मे 'एविडिन), नामक जहर होता हे, जो खाज-खुजली दाद-कोट जसे रोग उत्पन्न करता हे। किसी भी प्रकार का मांसाहार किसी भी चर्मरोग का कारण वन सकता हे (तथ्य-९)।

माँसाहार : सौ तथ्य



डॉ. नेमीचन्द

तीर्थंकर शाकाहार प्रकोष्ठ प्रकाशन, इन्दौर

मांसाहार : मज़हबी क़ानून के ख़िलाफ़

"Blood is unhealthy", says Dr A m Katme, a representative of the Islamic Medical Association " It is full of toxins, urea, and organisms The consumption of blood is forbidden for Muslims It is arrogant for someone who is not a Muslim to presume that he can teach us the practice of our faith God protect us from those who think that they know better than He "

But no animal can be fully drained of its blood and so,logically Muslims who eat meat are actually contravening their own laws If they do not wish to consume blood, then,quite simply, they should not eat meat

—*Why You Don't Need Meat* by Peter Cox p 166

Did you know?

- ☐ *One-fourth of the world s fish catch is used to make fish-meal to feed factory-bre animals*
- ☐ *More grain and cereal is fed by the USA and Russia to livestock than is consume by the people of the entire Third World*
- ☐ *Britain gives two-third of its homegrown cereal to its livestock—the same amou could satiate 250 million people each year Even then it imports grain for livesto "because it is more economical to place the burden of growing the other ha elsewhere "*
- ☐ *The European Economic Community gets 20 million tonnes of cattle feed from th Third World, including India*
- ☐ *Third World fodder including soybeans from India provides every tenth litre milk and every tenth pound of meat produced in the EEC*
- ☐ *South America's rainforests have been cut down to grow cattle for hamburge sold in the USA—as a result the greenhouse effect which will destroy most of li as we know it has been accelerated*
- ☐ *20 million tonnes of grain provides two million tonnes of animal proteins Seve kg of grain produces one kg of meat*

If you—

If you want to save the contry's green cover if you want to do something t increase the amount of oxygen in the air and fresh water in the ground start by givin up meat Everything else comes later Incidentally the term vegetarian does not com from vegetable but from *vegetus* which mean whole sound fresh, lively

—Menaka Gandh

मासाहार . १०० तथ्य, डॉ नेमीचन्द, © हीरा भैया प्रकाशन, प्रकाशन - तीर्थंकर शाकाहार प्रकोष्ठ, द्वारा - हीरा भैया प्रकाशन, ६५, पत्रकार कॉलोनी, कनाडिया मार्ग, इन्दौर - ४५२ ००१, मध्यप्रदेश, **मुद्रण** - नईदुनिया प्रिंटरी, बाबू लाभचन्द छजलानी मार्ग, इन्दौर - ४५२ ००९, मध्य प्रदेश, **चित्र** - देवेन्द्र शर्मा, **पहली बार** - जून १९९२, **दूसरी बार** - अगस्त १९९२, **तीसरी बार** - जुलाई १९९३, **चौथी बार** - जनवरी १९९४, **पाँचवीं बार** - जून १९९४, **छठी बार** - दिसम्बर १९९४, **सातवीं बार** - मार्च १९९५, **आठवीं बार** - जुलाई १९९५, **नवीं बार** - अक्टूबर १९९५, **दसवीं बार** - जनवरी १९९६, **ग्यारहवीं बार** - मार्च १९९६, **बारहवीं बार** - सितम्बर १९९६, **तेरहवीं बार** - मई १९९७, **चौदहवीं बार** - सितम्बर १९९७, **पन्द्रहवीं बार** - दिसम्बर १९९८, [illegible], मराठी, तेलुगु और मलयालम् मे **कुल प्रतियाँ** - ८६,०००, **मूल्य** - पाँच रुपये।

यदि—

हम देख रहे है कि दुनिया मे, खासतौर से हमारे देश मे, माँसाहार बहुत तेजी से बढ रहा है। माँसाहार की फितरत है कि वह अपने साथ कई बुराइयाँ ले कर आता है और विनाश की दिशा मे मनुष्य को दो कदम और आगे धकेल देता है। असल मे, माँसाहार मनुष्य के अब तक के विकास को पीछे की ओर ले जाने की दुर्भाग्यपूर्ण प्रक्रिया है। जिस छोर से हमने मनुष्य होना शुरू किया था, माँसाहार हममे बर्बरताएँ बढा कर हमे उसी बिन्दु पर खीच लाने पर आमादा है। आप यह जान कर हैरान होगे कि ब्रिटेन के कत्लघरो से हर वर्ष एक अरब किलोग्राम खून (एक लाख टन खून) नालियो मे बह कर वहाँ के पर्यावरण को दूषित करता है (और भारत मे उसकी मत पूछिये ? वह बे-हिसाब है और अब गलीकूचो मे भी है)।

हम देख रहे हैं कि क्रूरताओ ने आज इसान को इसान नही रहने दिया है। हिसा ने उसे पिशाच बना दिया है। दुनिया का कोई मज़हब हमे विश्वासघात की सीख नही देता, किन्तु हम है कि हमने कही-न-कही से कोई गली निकाल ली है और अपने स्वाद और शौक के लिए अपने खूनी पज़ो से आसपास के वातावरण को दूषित करने पर तुले हुए है।

फरवरी के महीने मे जब भूख से तडप रहे फिलस्तीनी शरणार्थियो ने अपने नेताओ से नरमाँस खाने की इजाज़त माँगी तब लगा कि यह और कुछ नही है बल्कि रोज़-ब-रोज़ बढते माँसाहार का दुष्परिणाम है। कुछ अमीरो की अमीर ज़िन्दगी और बदहवास ज़ायके के लिए हमे अपने मूक-निरीह पशुओ को मारने का कोई हक नही है। हम धन-के-लिए-पागल-हुए अपनी ही शस्यश्यामला वसुन्धरा को बजड बना रहे हैं और अपनी ही पशु-सपदा को बर्बाद कर रहे है। ज़मीर-की-मौत का इससे बडा सुबूत और क्या हो सकता है कि हम अपने ही पाँव पर खुद कुल्हाडी चला रहे हैं। दु खद यह है कि हमारे यहाँ कृषि मन्त्रालय नये यान्त्रिक कत्लखाने खोलने जा रहा है और ब्रिटेन मे कत्लखानो की सबसे बडी शृखला ड्यूहर्स्ट माँस बेचने वाली अपनी ६०० दुकानो पर ताला डाल रही है।

जो लोग अमरीकी अर्थतन्त्र की तनिक भी जानकरी रखते है वे साफ-साफ बता सकते है कि यदि हमारे देश मे माँसाहार बढता है तो हमारा आर्थिक मानचित्र कितना बदशक्ल हो जाएगा, आर्थिक ही क्यो, हमारा सास्कृतिक और नैतिक ढाँचा भी बदसूरत हो पडेगा। हमारे जीवन-मूल्य एक तो नष्ट हो ही गये है, जो बचे है वे भी चिन्दा-चिन्दा हो जाएँगे।

यह कैसा दुश्चक्र है कि हम पहले कसाईघरो मे निरीह जानवरो को बडी बर्बरता से मारते है और फिर स्वय मे एक सौ साठ बीमारियो के कत्लखाने का शिलान्यास करते है। बीमारियो-का-कसाई किसी को भी कत्ल करने से नही बख्शता। मधुमेह (डायबिटीज़) ओर अतितनाव (हायपरटेशन) दो ऐसे कातिल है जो आदमी के पीछे माँस खाना शुरू करते ही हाथ धो कर पड जाते हैं। हमे जानना चाहिये कि माँसाहार एक राक्षस है, जो शुरू मे लुभावना लगता है, किन्तु बाद मे

वह अपनी शहद-जैसी मिठास से इसान-की-ज़िन्दगी को तवाह कर देता है।

आज पूरी दुनिया मे पानी की तगी है। सब जानते है कि इस तगी की सवसे बडी वजह माँसाहार है। अमेरिका भी जलाभाव के शिकजे मे आ गया है। भारत भी इस अभागे घेरे मे है। ध्यान रहे जैसे-जैसे हमारे यहाँ कत्लखानो की सख्या वढेगी, पानी की तगी बढती जाएगी। तय है कि जलाभाव का सकट जहाँ भी गहरायेगा उसके लिए कुसूरवर माँसाहार ही होगा।

दुनिया-भर मे अपहरण, दगे, युद्ध, हत्या, कलह, विकलागता, भुखमरी, नशाखोरी आदि बेतहाशा बढ रहे है। कौन है इन सबके लिए जिम्मेदार? स्पष्टत माँसाहार। हम खून बहा रहे है, हत्याएँ कर रहे है, हम क्रूरताएँ कर रहे है, बदले मे क्रूरताएँ पा रहे है—इसमे खास क्या है? यह तो कुदरत का कानून है, इसकी अवहेलना भला कौन कर सकता है, या कर सका है?

भुखमरी का हिसाब और आलम यह है कि विश्व मे हर रोज़ पचास करोड लोग या तो भूखे रह रहे है, या अधपेट सो रहते है। एक ऐसी दुनिया जिसमे हर रोज चार लाख बच्चे भूख से छटपटा कर दम तोड देते हो क्या नर्क से कम कही जाएगी? कौन है इन बच्चो और इतनी वडी आवादी पर जुल्म ढाने वाला? माँसाहार, सिर्फ माँसाहार। वे देश जो माँसाहारी है और जो माँसाहार के लिए पशुओ को पनपाते और काटते है, जिन्होने कृष्य भूमि को अनावश्यक रूप मे चरागाहो और बाडो मे बदल रखा है, कारखाने चला रहे है माँस के, चूज़ो के, अण्डो के—जिम्मेदार है इस मानवीय सकट के लिए। अमेरिका और ब्रिटेन-जैसे देश भुखमरी और उससे होने वाली मौतो के लिए उत्तरदायी है (अव भारत भी)। वर्ल्ड वाच सर्वेक्षण का निष्कर्ष है कि यदि हमने माँसाहार कम नही किया तो इसके वडे दुर्भाग्यपूर्ण नतीजे होगे।

बहुत कम लोग जानते है कि दुनिया मे माँस-अण्डे की व्यापारिक लॉबी (प्रचार-दल) अपने अस्तित्व-के-सघर्ष मे अरबो पौड/डॉलर खर्च कर रही है। दुनिया माँसाहार छोडना चाहती है और यह लॉबी टीवी, रेडियो, अखबार, तथा अन्य तमाम प्रचार-माध्यमो से 'इटेसिव्ह हाईप्रेशर एडवर्टाइजिग' द्वारा उपभोक्ताओ पर माँसाहार ज़बरन थोपना चाहती है। सरकारे इस दबाव का मुकावला इसलिए नही कर पा रही है कि इस लॉबी ने उन्हे तथा उनके कारिन्दो को खरीद रखा है और अपने ऑगन मे बँधुआ मजदूरो की तरह डाल रखा है। टीवी पर जिस तरह का विज्ञापन आता है और माँस के व्यजनो को वरतानवी एप्रन पहिन कर जिस रुचि से प्रदर्शित किया जाता है, वह सब भारत-जैसे अहिंसक देश के लिए अभिशाप है। असल मे हमने यदि माँसाहार की निरर्थकता को तमाम वैज्ञानिक, मजहबी, और सास्कृतिक चेतावनियो के बावजूद भी नही समझा तो तय है कि हमारे सामाजिक, सास्कृतिक, आर्थिक, धार्मिक, नैतिक आदि स्वास्थ्य खतरे मे पड जाएँगे और हम युगयुगो के लिए पतन की राह पर आ खडे होगे।

जो तथ्य इस किताब मे दिये गये है यदि हमने इनकी अनदेखी की तो सच मानिये हम अपनी आने वाली पीढियो के साथ विश्वासघात तो करेगे ही, उनकी खुशियो के वगीचे को भी उजाड देगे। इन्दौर/७ जून १९९२ —नेमीचन्द

मांसाहार : १०० तथ्य

१. मामाहार से लकवा (पक्षाघात), गुर्दे मे पथरी, प्रोस्टेट (पुर स्थग्रन्थि) कैमर, सर्वाइकल कैसर (गर्भाशयी-ग्रीवा-मे-कैमर), पेप्टिक अल्मर (आमाशय-मे-व्रण), डायबीटीज़ (मधुमेह), हायटल हर्निया (आमाशयिक आत्र-उभार), गॉलब्लेडर स्टोन (पित्ताशय-मे-पथरी), इर्रिटेबल कॉलन सिड्रोम (बडी ऑत मे जलन का सलक्षण), हृदय-रोग, वक्ष-कैसर, पैक्रिआटिक कैमर (अग्न्याशय-मे-कैमर), डायवर्टिक्यु-लोमिस (बडी ऑत मे रुकावटे), उदर-कैसर, हाइपोग्लीमेमिया, कब्ज, हायपरटेशन (उच्च रक्तचाप), साल्मोनेलोसिम (माल्मोनेला जीवाणु मे उत्पन्न रोग), ऑस्टिओपोरोसिस (अस्थियो-की-विरलता), कॉलन-कैमर (बडी ऑत मे कैसर), एडोमीट्रियल कैमर (गर्भाशय-मे-कैमर), गुर्दो-के-रोग, मोटापा, दमा, ट्रिकिनोमिम (कचकृमिरोग, जो सुअर का माम खाने से



सोयाबीन, मूँगफली अथवा नारियल से क्रमश ३५३/३५३/४३२/५६४/४४ कैलोरियाँ सहज ही मिल सकती हैं। याद रहे एक वयस्क पुरुष को प्रतिदिन २४०० तथा स्त्री को २००० कैलोरियो की जरूरत होती है।

८ अमेरिका के नोबल पुरस्कार विजेता डॉ माइकेल ब्राउन और डॉ जोसेफ गोल्डस्टीन का निष्कर्ष है कि मास मे कोलेस्टेरोल की मात्रा अधिक होती है, अत इससे हृदयरोग, चर्मरोग, पथरी आदि उत्पन्न हो सकते हैं। **किसी भी वानस्पतिक आहार मे कोलेस्टेरोल नहीं होता।**



९. रॉबर्ट ग्रॉस ने अपनी लोकप्रिय पुस्तक 'हाउ हेल्दी आर एग्ज?' मे लिखा है कि अण्डे की सफेदी मे 'एविडिन' नामक ज़हर होता है, जो खाज-खुजली, दाद-कोढ जैसे रोग उत्पन्न करता है। किसी भी प्रकार का मासाहार किसी भी चर्मरोग का कारण बन सकता है।

१० मासाहार का भारत की अहिंसक सस्कृति से कोई तालमेल अथवा सगति नही है। महावीर, गौतम बुद्ध, सत कबीर, गुरु नानक, गाँधी, विनोबा आदि सभी शुद्ध शाकाहारी थे।

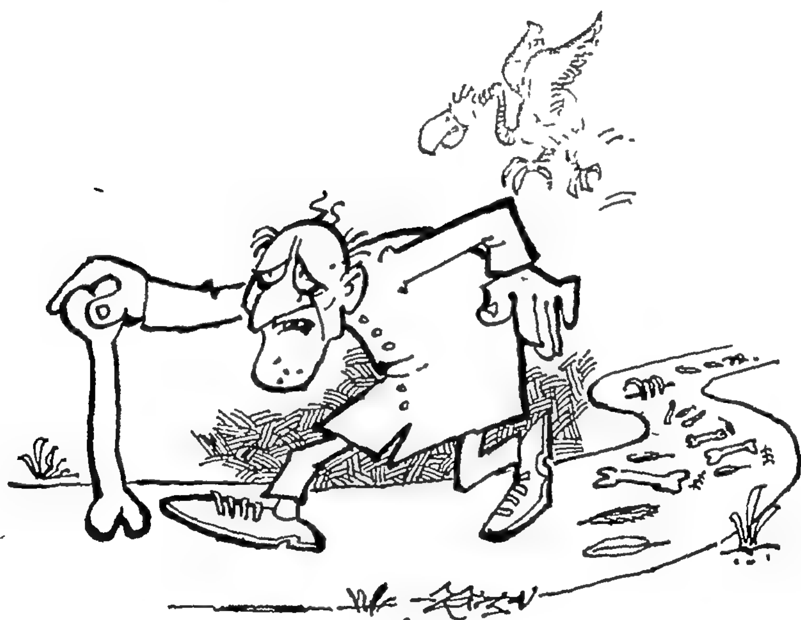
११. शायद आप नही जानते कि व्यापारिक दृष्टि मे पशुओ का वजन बढाने के लिए उन्हे तरह-तरह के रासायनिक मिश्रण दिये जाते है, जिनमे-से एक है डेस (डायथिस्टिलबेस्ट्रॉल)। जो गर्भवती स्त्रियाँ 'डेसयुक्त मास' का भक्षण करती है, उनकी सतान को आगे चल कर कैंसर होता है। कई डेसबेबीज युवतियाँ होने पर कैंसर का शिकार हुई है। पुरुषो मे इस तरह का मास स्त्रैणता का कारण बनता है। ध्यान रहे 'डेस' कोई प्राकृतिक पदार्थ नही है बल्कि इसे सश्लेषण (सिंथेसाइजेशन) द्वारा तैयार किया जाता है। यह पशुओ मे मासवृद्धि के लिए उपयोग मे आता है। यद्यपि इसके उपयोग पर विकसित देशो ने रोक लगा रखी है तथापि विकसित/विकासशील दोनो मुल्को मे इसका चोरी-छुपे व्यापक उपयोग होता है।

१२. ऑस्टिओपोरोसिस (अस्थियो का विरलन, या बिखराव) एक ऐसा रोग है जो कई कारणो से होता है। इसकी सब-से-बडी वजह आहार मे प्रोटीन का अतिरेक (बहुत अधिक होना) है। मासाहार को प्रोटीन का समृद्ध स्रोत कहा गया है। सूत्र यह है कि 'अधिक प्रोटीन, अधिक कैल्शियमक्षति'। ओस्टिओपोरोसिस कैल्शियम-के-क्षरण की वजह से होने वाला भीषण रोग है।

१३. स्थापित तथ्य है कि आहार मे जितना अधिक प्रोटीन होगा, कैल्शियम की हानि भी उस अनुपात मे उतनी ही अधिक होगी

फिर हम अपने आहार मे कैल्शियम की मात्रा चाहे जितनी बढा ले, या बढाते जाएँ। परिणामस्वरूप मामान्यत उच्च प्रोटीन-युक्त आहार— मुख्यत माम-की-बुनियाद पर खडे आहार— मे क्रमश हड्डियो की मघनता घटती है और वे कमजोर और कच्ची पड जाती हैं।

१४. कम प्रोटीन-युक्त आहार शरीर मे कैल्शियम की अपेक्षित मात्रा को सुरक्षित रखता है जबकि मामाहार कैल्शियम को बाहर निकाल फेकता है। बुढापे की दुर्बलता मामाहार का अनिवार्य अभिशाप है।



१५. मिशीगन स्टेट तथा अन्य विश्व-विद्यालयो (अमेरिका-स्थित) के अनुसधानकर्ताओ के ये निष्कर्ष ध्यान देने योग्य है—१ पुरुष शाकाहारियो मे हड्डियो की औसतन क्षति ३ प्रतिशत होती है जबकि पुरुष मासाहारियो मे यह ७ प्रतिशत पायी गयी है। २ स्त्री शाकाहारियो मे हड्डियो की औमतन क्षति १८ प्रतिशत

आँकी गयी है जबकि स्त्री मासाहारियो मे यह प्रतिशत ३५ देखा गया है।

१६. आप आश्चर्य करेगे कि एक मामिष भोजी अमरीकी स्त्री ६५ वर्ष की उम्र तक पहुँचते-पहुँचते अपनी हड्डियो का लगभग 'एक-तिहाई' भाग खो बैठती है। यह नुकमान कई शारीरिक दुर्बलताओ को जन्म देता है ममलन कमर का झुकना, सुस्ती, अनुत्साह का अनुभव करना आदि।

१७. चिकित्सको का स्पष्ट निष्कर्ष है कि यदि किमी शाकाहारी की हड्डी टूटती अथवा क्षतिग्रस्त होती है तो वह तेजी मे बहुत कम ममय मे पूरी तरह जुड जाती है जबकि एक मासाहारी, विशेषत महिला, के साथ ऐसा होना असभव होता है।

१८. मास, अण्डे, मछली आदि मर्वाधिक अम्लोत्पादक (एमिड फार्मिंग) पदार्थ है, अत रक्त की तटस्थता (पीएच/न अम्ल, न क्षार) बनाये रखने के लिए हड्डियो मे-मे कैल्शियम की खपत होती है, किन्तु अधिकाश फल-मब्जियो मे 'अल्काइलिन एश' बनती है, जो रक्त की तटस्थता को कायम रखती है और हड्डियो के कैल्शियम-कोष को उजडने नही देती।

१९. फल/सब्जियो मे कैल्शियम/फॉस्फोरम के उच्चतर अनुपात के कारण कैल्शियम अधिक मात्रा मे उपलब्ध रहता है। यदि हरी राई या मरमो मे प्राप्त कैल्शियम/फॉस्फोरम-अनुपात की तुलना मे हम चूजो मे प्राप्त अनुपात मे करे तो एक को गगनचुम्बी इमारत कहेगे और दूमरे को लघु श्वानघर (स्मॉल डॉग-हाउम)।

२०. पशु-जनित प्रोटीन (मासाहार-मे-प्राप्त प्रोटीन) कई ममस्याएँ खडी करता है, जिनमे-मे एक गभीर ममस्या है गुर्दे-मे-पथरी का बनना। ध्यान रहे अतिरिक्त प्रोटीन न केवल कैल्शियम के मचित कोष को खाली करता है वरन् गुर्दे (किडनी) मे अधिक

श्रम ले कर उसे बुरी तरह क्षतिग्रस्त कर देता है। कई पशु-परीक्षणो/अध्ययनो का निष्कर्ष है कि आहार मे अधिक प्रोटीन के कारण गुर्दा-विस्तृति/वृद्धि (हायपरट्रॉफी) तथा जलन/प्रदाह (इन्फ्लेमेशन) जैमी घटनाएँ अधिक होती है।



२१. सन् १९७० मे 'जर्नल ऑफ द नेशनल कैमर इस्टीट्यूट' (अमेरिका) के अध्ययन-निष्कर्ष के अनुमार जिन प्रदेशो मे मास-की-खपत अधिक होती है वहाँ स्पष्टतया बडी ऑत (कॉलन) के कैमर का आँकडा ऊँचा है, किन्तु जहाँ माम-की-खपत कम है वहाँ छोटा और झुका हुआ है। कहा गया है कि ममार का ऐमा कोई मुल्क नही है जहाँ माम-की-खपत अधिक न हो और बडी आँत के कैमर की दर कम हो।

२२. माम पचाने की क्रिया मे बडी आँत मे कैमरकारक पदार्थ उत्पन्न होते हैं, अत मामाहारियो को मासाहार से निबटने के लिए

पित्त-अम्ल (बाइल एसिड्स), विशेषतया डीऑक्सीकॉलिक एसिड, का व्यापक उत्पादन आवश्यक होता है। यह अम्ल बहुत महत्त्वपूर्ण है, क्योकि क्लोस्ट्रिडिया बैक्टीरिया डीऑक्सीकॉलिक एसिड को सशक्त कैसरकारको मे बदल देते है। यह तथ्य, कि शाकाहारियो की तुलना मे मासाहारियो की बडी आँत मे डीऑक्सीकॉलिक अम्ल अचूक रूप से होता है बहुत बडा कारण है इस निष्कर्ष के पीछे कि उनमे बडी आँत के कैसर की दर ऊँची होती है।

२३. तन्तु (रेशा/फाइबर) आँत मे बुहारी का काम करते है। ये आँत की लगातार सफाई करते रहते है। रेशा-रहित आहार के कारण आँतो मे चिकना मलवा जमा हो जाता है, जो आँतो मे हो कर गुजरने वाले आहार की अवधि लम्बी कर देता है। यदि किसी व्यक्ति के आहार मे पशु-वसा (एनीमल-फैट) है तो उस पर यह बात भरपूर लागू होती है। जिस तरह चिकनाई (ग्रीस) नालियो को रुद्ध कर देती है, ठीक उसी तरह वसा (फेट) से आँते रुद्ध हो पडती है।

२४. आँतो मे आहार के अधिक लम्बे समय तक बने रहने मे उसमे कई विषाक्त पदार्थ उत्पन्न हो जाते है तथा आँत-भित्तियाँ अधिक विष सोखने लगती है। रेशा-युक्त आहार आहार-की-आन्त्र-यात्रा को सुगम और शीघ्रगामी बनाता है और उसे घुलने, बँधने, तथा कई कैसरकारक विषो को निष्क्रिय करने मे मदद करता है।

२५. जितने समय मे आप इन तथ्यो को पढ रहे होगे उतने समय मे अमेरिका के चिकित्सक वहाँ की १०० महिलाओ को बता चुके होगे कि उन्हे स्तन-कैसर हो चुका है, किन्तु बहुत कम चिकित्सक इन्हे यह बता पाते है कि वे जितना कम-से-कम मास लेगी, कैसर का खतरा उतना कम हो जाएगा।

२६. टोकियो की नेशनल कैसर रिसर्च इस्टीट्यूट के डॉ हिरायामा ने चिकित्सा-इतिहास मे, कैसर-के-बडे-अध्ययन का नेतृत्व किया है।

उनके मार्गदर्शन मे १,२२,००० व्यक्तियो का कई दशको तक गहन अध्ययन किया गया। डॉ हिरायामा और उनके माथियो का निष्कर्ष है कि जो महिलाएँ प्रतिदिन मामाहार करती है वे उन महिलाओ की तुलना मे जो मास लेती है या बिल्कुल ही नही लेती कैंसर का चार गुना अधिक खतरा उठाती है। इसी तरह अण्डे खाने का मतलब भी स्तन-के-कैंसर को बुलावा देना है।

). एक लडकी जितना अधिक माम-भक्षण करेगी वह उतनी ही जल्दी रजस्वला होगी और तदनुसार स्तन-कैंसर का खतरा भी उमे उतना ही अधिक होगा।



२८· मास, दुग्ध, और अण्डा-युक्त आहार न सिर्फ जल्दी रजोस्राव की ओर ले जाता है अपितु मामिक धर्म बन्द होने की स्वाभाविक अवधि को भी विलम्बित तथा बाधित करता है।

२९· जो लोग मासाहार तथा अन्य उच्चवसा-युक्त आहार छोड देते हैं उन्हे ३० प्रतिशत इसुलिन की कम जरूरत पडती है तथा उनका ब्लड-सुगर-लेवल (रक्त मे ग्लूकोस का स्तर) अधिक स्थिर रहता है और वे एथीरोस्क्लेरोसिस की जटिलताओ से बच जाते है।

३०· हाइपोग्लाइसीमिआ अमेरिका मे व्याप्त एक ऐसी बीमारी है, जिसे लोग अब सामान्य मानने लगे हैं। ये लोग इस बात पर विचार नही करते कि दुर्बलता, चक्कर आना, या भ्रान्ति होना रक्त-मे-ग्लूकोस-के-स्तर मे होने वाली गिरावट के कारण ही है, और वे इस बात का अनुभव भी नही करते कि इन सबका सबन्ध मनुष्य के खान-पान की सस्कृति से है। वस्तुत हाइपोग्लाइसीमिआ बीमारी उन लोगो मे होती है, जो मास शक्कर, और वसा का भरपूर उपभोग करते है।

३१· प्रोस्टेड (पुरस्थग्रन्थि) के कैसर का मासाहार से सीधा सबन्ध है। लोमालिंडा यूनिवर्सिटी (कैलीफोर्निया) मे ६५,००० व्यक्तियो पर २० वर्षो तक चले अध्ययनो के अनुसार मास, पनीर, अण्डे आदि खाने वाले व्यक्तियो को उनकी अपेक्षा जो इन्हे अत्यल्प या बिल्कुल नही लेते उनमे ३ ६ गुना कैसर-आशका अधिक होती है।

३२· स्त्रियो मे छाती-के-कैसर से होने वाली मृत्यु का क्रम है—सबसे अधिक मासाहारी स्त्रियाँ, इसके बाद अण्डा खाने वाली स्त्रियाँ, इसके बाद शुद्ध शाकाहारी स्त्रियाँ।

३३· अधिक वसा वाले आहार से होने वाले हॉर्मोन-सबन्धी परिवर्तन पुरुषो मे मासिक धर्म शुरू या बन्द होने जैसी यौन घटनाओ के

रूप मे नही होते, फिर भी यह स्पष्ट देखा गया है कि प्राणिज वमा वाली आहार-शैली (मामाहार) मे लडकियो की तरह लडको मे भी यौन विकाम समय-मे-पूर्व हो जाता है, जो स्वास्थ्य के लिए खतरनाक है।

३४ अमेरिका-जैसे विकमित देश मे मृत्यु के ८ बडे कारणो मे-मे एक है डायबीटीज़ (मधुमेह), जो एथीरोम्क्लेरोमिम का दुष्परिणाम है। यह रोग मामाहार मे होता है। मधुमेह मतृप्त वमा-युक्त आहार अर्थात् मामाहार की मतान है। इममे नमे इतनी क्षीण



और जर्जर हो जाती है कि ८० प्रतिशत मधुमेह-रोगी आँखो-की-क्षति से पीडित रहते है। अमेरिका मे अन्धेपन के जो नये केस दर्ज हुए है उनमे मधुमेह-रोगी ही अधिक हैं।

३५. मासाहार किडनी (गुर्दे)-तक-रक्त-आपूर्ति मे बाधक बनता है, अत डायबीटीज के रोगी गुर्दो की बीमारी के औमतन दर से

१८ गुना अधिक शिकार होते है। नमो के अन्तिम छोर तक खून का दौर इतना कम पड जाता है कि पॉव-की-अँगुलियो मे जरा-सी छूत भी गेग्रीन का कारण बन जाती है, तब फिर या तो पूरा पाँव कटाना होता है या फिर प्राणो मे हाथ धोना पडता है।

३६. मिनेमोटा यूनिवर्मिटी (अमेरिका) के महामारी-विज्ञान विशेषज्ञ डॉ डेविड स्नोडौन का कथन है कि मामाहार की अनुपस्थिति ने हमारे निष्कर्षो को अधिक पुष्ट किया है। २५,००० लोगो पर २१ वर्षो तक चले हमारे एक अध्ययन के अनुमार जैसे-जैसे विभिन्न स्तरो पर मासाहार का परिमाण कम किया गया, मधुमेह का खतरा उतना-उतना कम होता गया। इम तरह डायबीटीज और मामाहार परस्पर मबद्ध है।

३७. वेने स्टेट यूनिवर्सिटी मेडिकल स्कूल (अमेरिका) मे जब चिकित्सा-सबन्धी अनुसधान करने वाले छात्रो ने इस किवदन्ती का कि आरथ्राइटिस (जोडो-मे-सूजन/सन्धि-शोथ) का आहार से कोई सबन्ध है, परीक्षण किया तब उन्हे यह देख आश्चर्य हुआ कि सन्धि-शोथ के छह रोगियो को जब वसा-रहित आहार (शाकाहार) दिया गया तब उनमे मात हफ्तो मे रोग के लक्षण पूरी तरह लुप्त हो गये, किन्तु जब उन्हे पुन मासाहार दिया गया तब लक्षण उभर आये।

३८. गाउट (गठिया रोग) भी आहार से ही सबन्धित है। वस्तुत गाउट यूरिक एसिड (मूत्राम्ल) मे सुई-जैसे क्रिस्टल (रवा) बनने से पैदा होता है। जब ऐसा होता है तब रोगी को दुस्सह पीडा होती है। उमके जोड, खासतौर से पॉव का अँगूठा, सूज जाते है। जो अपने आहार मे प्यूरीन (एक नाइट्रोजन-युक्त कार्बनिक यौगिक) अथवा प्रोटीन नही लेते गाउट मे उन्हे अत्यधिक लाभ होता है। शेल मछली, अन्य मछलियॉ, अण्डे, गोमास, सूअर-के-मास आदि मे प्यूरिन अधिक होता है।

३९. गुर्दे-मे-पथरी से असह्य पीडा होती है, किन्तु इस भयानक पीडा से बचा जा सकता है। निन्यानवे प्रतिशत कम प्रोटीन, अधिक रेशे, कम वसा (जिनमे कोलेस्टेरोल कम हो) तथा कम सतृप्त वसा वाले आहार न ले कर इससे सहज ही बचा जा सकता है। अमेरिका मे शुद्ध शाकाहारियो मे पथरी रोग नही होता।

०. अमेरिका मे प्रतिवर्ष २७,५०,००,००० (सत्ताईस करोड पचास लाख) रोगी डॉक्टरो की शरण मे जाते हैं, जिनमे-से-हर ग्यारह-मे-से-एक उच्च रक्तचाप (हाई ब्लड-प्रेशर) से पीडित होता है। बढती उम्र के साथ जिन लोगो मे रक्तचाप सामान्य होता है, उनके अध्ययन से कुछ तथ्य सामने आये हैं १ उनके आहार मे वसा (फेट), कोलेस्टेरोल और नमक कम होता है और रेशे अधिक। २ वे चोकर-युक्त अनाज, ताज़ा सब्जी और फल खाते हैं। ३ ससाधित (प्रोसेस्ड) और विशुद्धीकृत (रिफाइड) खाद्य कम-से-कम लेते है।

१. पशुओ को जैसे ही बूचडखानो की ओर ले जाया जाता है, वे जो घटित होने जा रहा है उसका आभास पा लेते हैं और क्रोधावेश मे भयकर व्यवहार करने लगते हैं तथा पागलो-की-तरह हो जाते हैं। उन्हे इस दशा मे मारा जाता है और उनका मॉस बाज़ार, मे बिकने आता है। यह मॉम ज़हरीला हो जाता है, फलस्वरूप उसे खाने वाले मनुष्यो मे ऐठन, तनाव, सन्निपात, मिर्गी, एव आकस्मिक मृत्यु जैसे अनेक रोग घर कर लेते हैं।

४२. एक औसत अमरीकी प्रतिवर्ष करीब १२० किलो मॉस खाता है जिसे प्राप्त करने के लिए लगभग एक टन अनाज खर्च होता है। यदि वह सीधे १२० किलो अन्न खाये तो इतने अनाज से वर्ष मे आठ व्यक्तियो का काम चल सकता है। प्रोफेसर जॉर्ज बर्गस्टॉर्म के अनुमार सिर्फ अमेरिका में पशु-जगत् जितने वनस्पति-खाद्य का उपभोग करता है, उतने से विश्व की आधी आबादी का पेट भरा जा सकता है।

४३ जॉन्स हॉपकिन्स यूनिवर्सिटी के डॉ एलन वाकर ने दाँतो के माइक्रोस्कोपिक विश्लेषण मे पता लगाया है कि मनुष्य फल खाने वाले प्राणियो का वशज है, न कि माँस खाने वालो का।



४४. स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयॉर्क (बफैलो) मे की गयी खोज से यह सामने आया है कि अमेरिका मे ४७,००० से भी अधिक ऐसे बच्चे हर वर्ष जन्म लेते है, जिन्हे माता-पिता के माँसाहारी होने के कारण कई बीमारियाँ जन्म से ही लगी होती हैं और जो बडे होने पर भी पूर्णत तन्दुरुस्त नही रह पाते।

४५. एक रिपोर्ट के अनुसार एक कीट, अग्रेजी मे जिसे 'ब्रेनबग' कहते है, ऐसा होता है, जिसके काटने से पशु पागल हो जाता है, किन्तु पागलपन के रोग को पूरी तरह विकसित होने मे दस वर्ष लग जाते है। इस बीच यदि कोई व्यक्ति इस कीडे द्वारा काटे हुए पशु

का मॉस खाता है, तो पशु-मे-पलने-वाला-यह-रोग उसके शरीर मे प्रवेश कर जाता है।

४६. उपलब्ध तथ्यो के अनुसार आस्ट्रेलिया, जहॉं प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष १३० किलो मॉस की खपत है, ऑतो-के-कैमर का सर्वाधिक शिकार है। डॉ एड्रयू गोल्ड ने अपनी पुस्तक 'डायबीटीज़ इट्स कॉजेज एड ट्रीटमेट' मे मधुमेह-रोगियो को शाकाहार की मलाह दी है।

४७ विश्व स्वास्थ्य सगठन (डब्ल्यूएचओ स्थापना—७ अप्रैल १९४८) की बुलेटिन सख्या ६३७ के अनुसार मनुष्य के शरीर मे लगभग १६० बीमारियॉं मॉस खाने से प्रविष्ट होती है। दु.खद यह है कि बहुत से चिकित्सक भी इस तथ्य को नही जानते। ये ऐसी बीमारयाँ हैं जिनमे-से अधिकाश मनुष्य को सीधेमौत के मुँह मे धकेलती हैं और अनेक इतनी असाध्य हैं कि उनकी कोई चिकित्सा उपलब्ध नही है।

४८. मॉस मे एक खास किस्म का कीडा 'बाटूलीनम' होता है, जो 'बटूलिनिज्म' नामक रोग को उत्पन्न करता है। इस रोग से व्यक्ति मर भी सकता है। यह एक खतरनाक रोग है।

४९. मॉस-भक्षण से मनुष्य के मस्तिष्क मे 'टिनियासोलियम' नामक एक कीडा प्रवेश कर जाता है, जो मस्तिष्क तथा शरीर के अन्य भागो मे गिल्टियाँ उत्पन्न कर देता है, फलस्वरूप मस्तिष्क मे बहुत छोटे-छोटे मोड्यूल्स उत्पन्न हो जाते है, जिनके कारण सबन्धित व्यक्ति को मिर्गी का रोग हो जाता है। इस रोग को 'सिस्टीसरकोसिस' कहते हैं।

५०. कुत्ते का मॉस खाने से 'साइडेटिड सिस्ट' नामक रोग हो जाता है। न्यूजीलैड, उस्मानिया, साइप्रस, अर्जेन्टाइना, और पेरू मे यह बीमारी अधिक होती है। इस रोग के कीटाणु शरीर मे प्रवेश कर रसोली का रूप धारण कर लेते हैं। यह रसोली मस्तिष्क मे फेफडो मे जिगर मे अथवा किसी भी जगह पैदा हो सकती है। और इत्तफाकन यदि यह फूट जाए तो रोगी के बचने की

सभावना शून्य हो जाती है। भारत मे भी यह बीमारी देखी गयी है।

५१. मॉस-भक्षण से चार प्रकार की बीमारियाँ होती है — डायरेक्ट जूनोसिस, साइक्लोजूनोमिस, मेटाजूनोमिम, मेपरोजूनोमिम।

५२. डायरेक्ट जूनोमिस वे बीमारियाँ है, जो मॉम खाने से मनुष्य के शरीर मे सीधे हो जाती है, उदाहरण के लिए ट्रीचनोमिम बूसिलोसिस।

५३. साइक्लोजूनोसिस बीमारियाँ मनुष्य के शरीर मे मीधे प्रवेश न कर दूसरे पशुओ के शरीर मे हो कर उनके मॉस-भक्षण से होती है, जैसे — टेपवॉर्म (फीताकृमि)। ये कीटाणु पहले सूअर, गाय, या कुत्ते आदि मे होते है और मनुष्य जब इन रोगग्रस्त पशुओ का मॉस खाता है तब यह बीमारी उसे हो जाती है।



५४. मेटाजूनोसिस वे बीमारियाँ है, जो बगैर रीढवाले प्राणियो (इनवर्टाब्रेट) मे-से हो कर मनुष्य के शरीर मे पहुँचती हैं, जैसे — प्लेग, लिवर, फ्लू।

५५ शाकाहारी प्राणियो (मानव-सहित) और माँसाहारी प्राणियो मे कम-से-कम छह अन्तर हैं-

	शाकाहारी	माँसाहारी
१ पजे/नाखून	तीखे नहीं होते	तीखे/पैने होते हैं।
२ त्वचा-छिद्र	होते हैं	नहीं होते, पसीना जीभ से निकालते हैं।
३ लार-ग्रन्थियाँ	विकसित हैं	छोटी/अविकसित हैं।
४ लार	लवणीय, टाइलीन एजाइम-युक्त	तेज हाइड्रोक्लोरिक एसिड-युक्त
५ उदर-अम्ल	कम तीव्र	अतितीव्र
६ आँतें	शरीर की लम्बाई की लगभग दस गुना	शरीर की लम्बाई की लगभग तीन गुना

५६. सेपरोजूनोसिस वे बीमारियाँ हैं जो रोगग्रस्त पशुओ द्वारा मिट्टी पेड-पौधो मे कीटाणुओ के फैल जाने से पैदा होती हैं, यथा - लारवा, माइग्रेन्स आदि।

५७. मास मे निहित 'यूरिक एसिड' खून मे मिल कर हृदय-रोग, फेफडो-की-रुग्णता, क्षय (टी बी) खून-की-कमी (एनीमिया), हिस्टीरिया, दमा, अजीर्ण, अतिनिद्रा, इन्फूलएजा, निमोनिया, गठिया, गर्दन/कमर-दर्द, कृशता आदि सैकडो बीमारियाँ उत्पन्न करता है। विभिन्न मासाहारो मे यूरिक एसिड की मात्रा प्रति पौण्ड इस प्रकार मानी गयी है — मछली (५ ग्रेन), भेड-बकरी (६ ग्रेन), सूअर (८ ग्रेन), बछडा (काफ/८ ग्रेन), चूजा (चिकन/९ ग्रेन), गाय (९ ग्रेन), कलेजी (लिवर/१९ ग्रेन), मास-का-शोरबा (मीट-सूप/५० ग्रेन), कबाब (ब्लेकमीट/१४ ग्रेन)।

५८. मद्रास-स्थित 'केन्द्रीय लेदर इस्टीट्यूट' के अनुसार भारत मे पशुओ का लगातार लोप हो रहा है। इस्टीट्यूट के ऑकडो के अनुसार सन् २००० मे प्रति एक हज़ार व्यक्ति स्थिति इस प्रकार हो जाएगी—

पशु	१९५१	१९८१	२०००
गाय-बैल (कैटल)	३४०	२७८	११०
भैस-भैसे	१२०	१००	६०
बकरी-बकरे	१४१	११८	३०
भेडे	१०८	६२	३०

यदि वध-शालाएँ इसी रफ्तार से खुलती रही तो एक दशक ऐसा भी होगा जब भारत मे कोई पालतू पशु नहीं बचेगा।

५९. सालमोनेला (बहुचर्चित बैक्टीरिया) के अलावा चूज़ो/मुर्गा-मुर्गियो के माँस मे एक नया माइक्रोब 'केम्पीलोबैक्टर' पाया गया है, जो आँतो मे भयकर बीमारियाँ उत्पन्न करता है। एक कत्लघर से लाये गये ८० प्रतिशत चूज़ो और ९० प्रतिशत टर्कियो (पीरू/गीध) मे इसका तीव्रगतिक सवर्द्धन देखा गया है। इनकी सख्या प्रति पक्षी एक लाख बैक्टीरिया बतायी जाती है। 'सालमोनेला' की भाँति यह माइक्रॉब भी चूज़ो-की-खाल की सतह पर पाया जाता है। चूजो की चमडी पर फैले इन माइक्रॉब्ज पर जब मशीनी मूसलो (फ्लैलो) की मार पडती है, तब पखो के नोचे जाने से खाली हुए छेदो मे ये घुस जाते हैं। इस प्रक्रिया मे चर्म-सतह और उसकी पर्तो मे इनकी सख्या लगभग १०० गुना, यानी एक करोड हो जाती है। सपूर्ण प्रक्रिया मे माइक्रॉब्ज सतह के नीचे दुबक जाते है और उष्णता तथा धुलाई तक की क्रिया मे बच रहते हैं, अन्तत ये खाने वाले के पेट-मे-उतर-कर तरह-तरह की बीमारियाँ पैदा करते है। आप शायद नही जानते, कि जिन मशीनी अँगुलियो से चूज़ो के पख नोचे जाते है उनके एक वर्ग सेंटीमीटर पर लगभग १० लाख माइक्रॉब्ज (सालमोनेला/केम्पीलोबेक्टर बैक्टीरिया) होते है — हो सकते है।

६०. अतीन्द्रिय-शक्ति-सपन्न बहुचर्चित श्री यूरी गैलर अपने अतीन्द्रिय बल से काँटे-छुरी और चम्मच को दृष्टिपात से टेढा कर देते है, घड़ियो की सुइयाँ रोक लेते है। यूरी शुद्ध शाकाहारी है। उनका कथन है कि हमारा शरीर शाकाहार के लिए बना है, माँसाहार के लिए नही। उन्होंने कहा है कि शाकाहार मे उनके अतीन्द्रिय बल मे वृद्धि हुई है।



६१. आहार-सबन्धी खोज करने वालो का निष्कर्ष है कि मॉस-वसा (चर्बी) ने हृदय-रोग की समस्या को काफी उलझा दिया है। मॉस-वसा कुछेक कैसरो के लिए भी उत्तरदायी है। एक अमेरिकी आहार-विज्ञानी ने हिसाब लगाया है कि अमेरिका मे ५० प्रतिशत कैसर-रोगो के लिए मॉस-निर्भर आहार, जो उच्च ससाधित भी होता है, जिम्मेदार है। इसी अनुसधानकर्ता ने कहा है, कि जो व्यक्ति १२ औस वजन के चारकोल-भूने मॉस के दो टिक्के हर हफ्ते खाता है, वह टार (डामर) का अपने भीतर उतना ही सचय कर लेता है जितना प्रतिदिन दो पैकेट सिगरेट पीने वाला। ऑक्सफर्ड मे मेडिसिन के प्रोफेसर मर रिचर्ड डॉल ने मॉसाहार और कैसर के मध्य सबन्ध स्थापित किया है।

६२. वनस्पति/पेड-पौधे मनुष्य-के-आहार की नीव हैं। मॉस का क्रम द्वितीय है। मॉस पशुओ द्वारा किये गये शाकाहार की उपज है। इस खाद्य-शृखला मे मॉसाहार का नम्बर शाकाहार के बाद है। जैसे-जैसे हम आहार-शृखला मे आगे बढते हैं पर्यावरणिक विष

उसमे अधिक घनीभूत (सघन) होते जाते हैं। पशु जो सदूषित वनस्पति खाते है, स्वय तरह-तरह के विष सचित कर लेते हैं। इन्हे आहार बनाने के कारण मॉसाहारियो मे ये विष सघनतर हो जाते है। यही कारण है कि मॉसाहारियो का माँस नही खाया जाता।

६३. दुनिया की उफनती आबादी को देखते हुए शाकाहार एक अत्यन्त सुरक्षित जीवन-पद्धति है। मॉस-का-उत्पादन शाकाहार-के-उत्पादन की तुलना मे काफी महँगा है। उत्पादन का यह अनुपात २१ १ है। एक पौड गोमॉस-जनित प्रोटीन प्राप्त करने के लिए गाय को २१ पौड वनस्पति-जनित प्रोटीन खिलाना पडता है। अमेरिका मे मनुष्य की तुलना मे पशु दस गुना ज्यादा अनाज खा जाते है। हिसाब लगाया गया है कि माँसाहार के कारण जितना अनाज बर्बाद होता है उतने से दुनिया की ९० प्रतिशत प्रोटीन-आवश्यकता पूरी हो सकती है। यदि अमेरिका तथा उस जैसे-कुछ मुल्क अपने आहार मे-से मॉस को अनुपस्थित या कम कर दे तो दुनिया का हर आदमी भर-पेट भोजन कर सकता है।

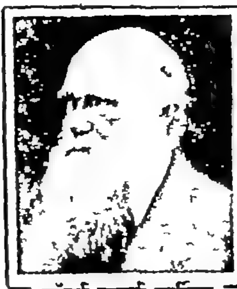
६४. अमेरिका मे हर साल ५,५०,००० मौते सिर्फ हृदय-रोग से होती है, इनके अलावा ५४ लाख ऐसे अमरीकी हैं, जिनकी ज़िन्दगी हृदय-रोग-ग्रस्त होने के कारण सीमित हो गयी है। आप शायद इस तथ्य से चौक पडेगे कि अमेरिका को हृदय-रोग की रोकथाम/इलाज पर ६० अरब डॉलर प्रतिवर्ष खर्च करने पडते हैं। वहाँ यह वाक्य एक कहावत की तरह प्रचलित है — अधिक मॉसाहार, अधिक हृदय-रोग।

६५. नेशनल एकेडमी ऑफ साइंसेज़ (अमेरिका) के एक आयोग का निष्कर्ष है कि हमे अपनी अस्तित्व-रक्षा के लिए वनस्पति पर अधिक और मॉस पर कम निर्भर रहना होगा।

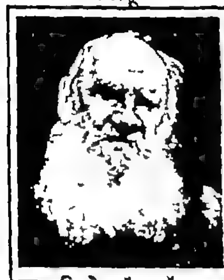
६६. विश्व-विख्यात विभूतियाँ, जैसे/अरस्तू (३८४/३२२ ई पू), चार्ल्स डार्विन (१८०९-१८८२ ई), अल्बर्ट आइन्स्टाइन (१८७९-१९५५), लियो टाल्सटॉय (१८२८-१९१०), एच जी. वेल्स (१८६६-१९०६), जॉर्ज बर्नार्ड शॉ

विश्व-विख्यात शाकाहारी दार्शनिक वैज्ञानिक साहित्यकार


अरस्तु


रॉबर्ट चार्ल्स डार्विन

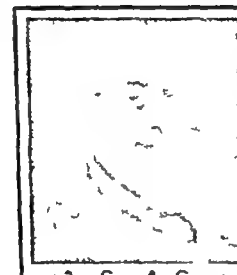

अल्बर्ट आइन्स्टाइन


लियो टॉल्सटॉय


हर्बर्ट जॉर्ज वेल्स

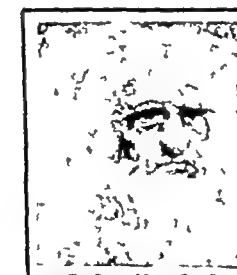

जॉर्ज बर्नार्ड शॉ

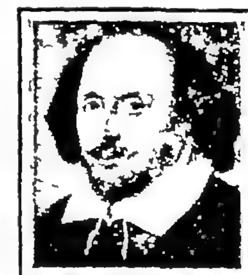

महात्मा गांधी


बेंजामिन फ्रैंकलिन


वॉल्टेअर


सर आयजक न्यूटन


लियोनार्दो द विंची


विलियम शेक्सपीयर


पर्सी बिसे शेली


रवीन्द्रनाथ ठाकुर


स. ही. वात्स्यायन 'अज्ञेय'

(१८५६-१९५०), महात्मा गांधी (१८६९-१९४८), अल्बर्ट स्वाइत्जर (१८७५-१९६५), हेनरी डेविड थोरो (१८१७-१८६२), रेल्फ वाल्डो एमर्सन (१८०३-८२) रिचर्ड वेग्नर (१८१३-८३), बेंजामिन फ्रेंकलिन (१७०६-९०), वॉल्टेअर (१६९४-१७७८), सर आयज़क न्यूटन (१६४२-१७२७), लियोनार्दो दा विंची (१४५२-१५१९), विलियम शेक्सपीयर (९५६४-१६१६), वर्जिल (७०-१९ ई पू), होरेस (६५-०८ ई पू), प्लेटो (४२७-३४७ ई पू), पायथोगोरस (५८२-५०० ई पू), पर्सी बिसे शेली (१७९२-१८२२), रवीन्द्रनाथ ठाकुर (१८६१-१९४१), सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' (१९११-१९८७), इत्यादि सभी शाकाहारी थे। इनमे-से अधिकाश महापुरुष वैज्ञानिक, गणितज्ञ, दार्शनिक, महाकवि, कलाकार, साहित्यकार, चित्रकार और शिल्पी रहे है।

६७. इधर के दशको मे अमरीकी आहार मे जो क्रान्तिकारी और रचनात्मक परिवर्तन हुआ है, वह आश्चर्यजनक है। १९६० ई के बाद तो अमेरिका मे निरामिष आहार (मीटलेस मील) एक पारिवारिक शब्द बन गया है। वहाँ गाय और सूअर के माँस की खपत घट गयी है और साग-सब्जी की खपत मे आशातीत वृद्धि हुई है। वास्तव मे अब एक अमरीकी अपनी खुराक मे ११ प्रतिशत सब्जियाँ और ७ प्रतिशत फल अधिक शरीक करता है।

६८. आरोप लगाया जाता है कि मनुष्य की दन्त-पाक्ति मे कुत्ते-के-कर्तन-दन्त- (केनाइन टीथ)-की-तरह-के-दाँत भी है, लेकिन ध्यान रहे शेर-कुत्तो के दाँत की तुलना मे ये बहुत छोटे है। इसके अलावा हमारे जबडे मचल (मोबाइल) है, जो वानस्पतिक आहार को चबाने-पीसने के काम आते है। हमारे मुख मे कार्बोहाइड्रेट्स को पचाने के लिए क्षारीय लार (अल्केलाइन सलाइवा) की व्यवस्था है जबकि माँसाहारी जीव-जन्तुओ मे अम्लता (एमिड्स) अधिक है, जिसका होना माँम-पाचन के लिए ज़रूरी है। इसके अतिरिक्त मनुष्य की आँते मासाहारी



जीव-जन्तुओ की आँतो की तुलना मे अपेक्षाकृत लम्बी हैं, जो वानस्पतिक आहार के पाचन के अनुरूप हैं। यद्यपि ये शुद्ध शाकाहारी जीव-जन्तुओ की आँतो की तुलना मे उतनी लम्बी नही हैं, तथापि यह निर्विवाद है कि इनकी रचना मूलत शाकाहार के लिए है।

६९. नृतत्त्वशास्त्रियो (एंथ्रोपोलॉजिस्ट्स) का निष्कर्ष है कि प्रागैतिहासिक यूरोप मे युद्ध एक सामान्य वृत्ति हो गयी थी। मनुष्य की जुझारू वृत्ति की शुरूआत उसके द्वारा भोजन के लिए पशु-पालन से हुई। इससे यह स्पष्ट है कि शान्तिप्रिय और अनाक्रमक जीवन-निर्वाह मे मासाहार एक बहुत बडी बाधा है। मासाहार से निरर्थक क्रोध आता है, और शत्रुता की भावना जकड लेती है।

विशेषत अनाज के बीजाकुरो मे निर्मित तेलो मे, तथा वनस्पतिज तेलो मे। पता लगाया गया है कि विटामिन-ई ऑक्सीजन की मौजूदगी मे, सवेदनशील विटामिन ए और सी के भण्डारण की रक्षा करता है। अनुसधान करने वालो का निष्कर्ष है कि ऑक्सीजन-रक्षण/सतुलन/समायोजन की विशेषता के कारण विटामिन-ई का उपयोग प्रजनन, रक्त-सचरण, और



सधिवात-के-उपचार मे बहुत प्रभावी सिद्ध हुआ है। यह मानना भी तर्कसगत है कि हृदय, जो कोशिकाओ को निरन्तर ऑक्सीजन पप करता है, यदि यह क्रिया विटामिन-ई की मौजूदगी मे करता है तो ऑक्सीजन अधिक चलता है, अत हृदय-रक्षक (हार्ट-सेवर) के रूप मे इसका काफी महत्त्व है। यह मॉसाहार मे नही है।

७८ इधर हुई ताजा खोजो से विदित हुआ है कि (१) विटामिन-ई का युवावस्था जैसी ताजगी और उमग, जीवन्तता और स्फूर्ति से घनिष्ठ सबन्ध है, (२) शरीर मे होने वाली अपरिहार्य क्षतियो को रोकने के लिए अन्य विटामिनो की अपेक्षा इस विटामिन की अधिक आवश्यकता है। ई शाकाहार मे सहज उपलब्ध है।

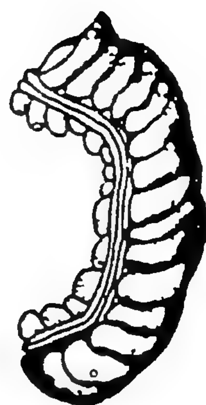
७९. माँस-जनित रोगो की उत्पत्ति का कारण उसे सदूषण से बचाने के काम मे आने वाले बोरिक तथा बेजॉइक एसिड (अम्ल) जैसे रसायन हैं। सदूषित माँस-जनित जीवाणुओ से बोविन टीबी, ब्रूसेलोसिस, साल्मोनेला और शीगेला जैसे छुतहे रोग हो जाते हैं। सूअर के माँम से ट्रिचिनेल्ला स्पिरेलिस तथा टेनिया सोलियम फीता-कृमि एव गौमाँस से टेनिया सेगीनाता फीता-कृमि जैसे रोग हो जाते हैं।

८० शिशुओ, किशोरो और प्रौढो मे अण्डो के प्रति एक सहज अतिसवेदनशीलता (एलर्जी) होती है, फलस्वरूप आर्टीकेरिया (पित्ती) तथा अस्थमा (दमा) जैमे रोग हो जाते है। ऐसे तमाम अतिसवेदनशील व्यक्तियो को अपने दैनदिन आहार मे-से न सिर्फ अण्डो को बल्कि उनसे बनने वाली वस्तुओ (बिस्किट्स, कैक इत्यादि) को हटा देना चाहिये।

८१. मनुष्य और माँसाहारी जीव-जन्तुओ की बनावट मे एक मूलभूत अन्तर है। मनुष्य की आँत आगे-पीछे-/टेढे-मेढे कई मोड-मरोड लेती अपने भक्ष्य पदार्थ को आगे ठेलती है। उसके मार्ग मे कई कैंची-मोड आते है। उसकी बनावट काफी जटिल है। इसके विपरीत माँसाहारी प्राणियो की आँते सरल-सीधी/साफ-सपाट होती है। उनमे घुमाव या मोड नही होते, फलस्वरूप उनकी पारण-अवधि (ट्राजिशन टाइम) मनुष्य की आँतो की पारण-अवधि से कम होती है। माँसाहारी जीव-जन्तुओ की आँते कोलेस्टेरोल और वसा (चर्बी) को नियन्त्रित करने मे समर्थ होती है। उन्हे अपने भक्ष्य पदार्थ को आगे ठेलने मे तन्तुओ (रेशो/फायबर्स) की आवश्यकता नही पडती।



माँसाहारी की आँत का एक प्रतिनिधि भाग



मनुष्य की आँत का एक प्रतिनिधि भाग

८२. ट्यूबिन्जन (पश्चिम जर्मन) के प्रोफेसर गासलेन ने केशिकाओ (केपिलरोज़) के घनत्व (डेसिटी) को ले कर एक आहार-सबन्धी प्रयोग किया। उन्होने अपने दो विद्यार्थियो को ३० ग्राम ब्रेड और नीबू-पानी के साथ प्रतिदिन १,५०० ग्राम माँस के विविध व्यजन खिलाये। दस दिन बाद उन्हे पता लगा कि माँसाहार के कारण उन छात्रो के केशिका-घनत्व को उल्लेखनीय क्षति पहुँची है। बोन के प्रोफेसर बर्जर के अनुसार केशिका-घनत्व को बरकरार रखने के लिए आहार मे ताज़ा साग-सब्जी और फल अत्यन्त आवश्यक हैं।

८३. बर्तानिया के राज-चिकित्सक मेजर जनरल सर रॉबर्ट मेक्केरीसन ने सन् १९३९ मे कश्मीर के हुजाओ के बीच रह कर काम किया। हुज़ा जाति दीर्घायु और अच्छे स्वास्थ्य के लिए विश्व-विख्यात है। उसके आहार मे मुख्यत चोकर-युक्त अनाज, ताज़ा फल, साग-सब्जियाँ, और बकरी का दूध होता है। डॉ मेक्केरीसन ने लिखा है कि मुझे हुज़ाओ मे बदहजमी, आमाशय अथवा ग्रहणी (ड्युओडीनल) का व्रण (अल्सर), उपान्त्र शोथ (एपेंडिसाइटीज), कोलन-की-सूजन (कोलाइटीज) अथवा कैसर जैसा कोई रोग नही मिला। ये लोग उदरशूल, थकान, तनाव, चिन्ता, अथवा सर्दी-जुकाम आदि से लगभग अपरिचित हैं।

८४. ध्यान रहे, शारीरिक अथवा बौद्धिक ओज (विगर), शक्ति, और ऊर्जा के लिए माँसाहार आवश्यक शर्त नही है। ये तथ्य, कि सर्वाधिक बलशाली पशु हाथी, अरना (जगली भैसा/बायसन), दरियायी घोडा (हिप्पोपोटेमस) और द्रुतगति से दौडने वाले पशु (घोडे, हिरण आदि) पूरी तरह शाकाहार पर जीते-पनपते है, और पूर्व तथा पश्चिम के गभीर/मनीषी चिन्तक एव दार्शनिक सभी माँसाहार से परहेज़ करते रहे हैं, माँसाहार का अप्राकृतिक होना सिद्ध करते हैं। शाकाहारी पहलवान, ग्रीक मेरेथोन (लम्बी दौड)-धावक, नये तैराक, भारोत्तोलक (वेटलिफ्टर्स), कुश्तीबाज़, साइकिल-धावक आदि ने यह कर दिखाया है कि शरीर-की-शीर्ष क्षमता वधशाला-के-माँस से नही खेत-खलिहान/बाग-बगीचो की साग-सब्जियो से सभव है।

८५. भारत ही नही विश्व मे अपनी गौरवशाली परम्पराओ के लिए प्रसिद्ध बॉम्बे हॉस्पिटल (बम्बई) मे रोगियों को उसके स्थापना-काल से ही शाकाहारी भोजन परोसा जाता है। अस्पताल के विशेषज्ञो ने 'रोल ऑफ वेजीटेरियन डायट इन हेल्थ एड डिसीज़' (१९८९) मे ऐसे दस्तावेज़ी अनुभव और विवरण प्रस्तुत किये हैं जिनसे पता चलता है कि शाकाहार द्वारा कई गभीर रोगो से बचा जा सकता है। उपर्युक्त पुस्तक 'बॉम्बे हॉस्पिटल इस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइसेज़' ने प्रकाशित की है।

८६. जो लोग माँसाहार करते है वे अक्सर ग्रासनली (ईसॉफेगस) के कैसर के शिकार हो जाते हैं। शाकाहारी इस गभीर रोग से इसलिए बचे रहते हैं चूँकि ताज़ा फलो, साग-सब्जियो, विशेषत ऑवला, नीबू आदि, मे विटामिन 'सी' होता है। विटामिन 'सी' कैसर-प्रतिरोध मे एक अच्छा कवच सिद्ध हुआ है।

८७. माँसाहार के रेशायुक्त न होने के कारण उससे केरीज़ (दाँतो मे सडाँद और उनका क्षीण होना) नामक रोग हो जाता है। शाकाहार के रेशा-विपुल होने के कारण वह लार-के-प्रवाह को



उन्नत रखता है तथा फलस्वरूप पाचन को आगे बढाता है। वह केरीज़ को रोकता है। अस्थिक्षय से भी वह शरीर की रक्षा करता है।

८८ माँसाहारियो मे हायटस हर्निया (ग्रासनली और आमाशय के बीच की प्राचीर से आँत का उभार) का उत्पात प्राय देखा जाता है। यद्यपि अभी इसका निश्चित कारण अज्ञात है तथापि कहा जाता है कि शाकाहार मे— विशेषत उसके स्वाभाविक रूप मे—वसा (चर्बी) बहुत कम होती है अत आमाशय के रिक्त होने मे अधिक समय नही लगता। इसके विपरीत माँसाहार मे वसा के अधिक होने के कारण आमाशय जल्दी खाली नही होता और डायफ्राम (मध्यच्छद) पर लगातार भारी दबाव पडता है, फलस्वरूप हायटस हर्निया हो जाता है।

८९ आँते परजीवियो (पेरेसाइट्स) की घर होती है, जिनमे टेनिया सेगीनाटा और टेनिया सोलियम परजीवी भी होते है। ये दोनो माँसाहारियो की आँतो मे ही पाये जाते हैं। शाकाहारियो की आँतो मे इनकी उत्पत्ति नही होती। इनकी उपस्थिति मे तरह-तरह के भयकर रोगो की आशका बनी रहती है।

१०. एमीबिएसिस और जिआर्डिएसिस से भिन्न, क्रॉनिक अल्सेरेटिव्ह कोलाइटीज़ 'जीवन-भर चलने वाली खूनी सग्रहणियाँ' है। पहली दो सग्रहणियाँ तो औषधियो से ठीक हो जाती हैं, किन्तु 'क्रॉनिक अल्सरेटिव्ह कोलाइटीज' का कोई इलाज नही है। यह बीमारी माँसाहारियो को ही अधिक होती है। चूँकि शाकाहार मे रेशे होते हैं, अत शाकाहारी प्राय इस रोग से बचे रहते हैं।

११. यह तथ्य काफी दिलचस्प है कि पित्ताशय-मे-पथरी (गॉल-स्टोन्स) का रोग माँमाहारियो मे अधिक और शाकाहारियो मे नगण्य होता है। वस्तुत चिकित्सक पित्ताशय-की-पथरी के रोगियो को रेशायुक्त आहार लेने की अनुशसा करते हैं ताकि भविष्य मे पथरी न बने। पित्ताशय मे होने वाली पथरियो के तीन प्रकार हैं—कोलेस्टेरोल पथरी, वर्णक पथरी, मिश्रित पथरी। माँमाहारियो मे अग्न्याशय (पैक्रियाज) के कैसर का खतरा भी बना रहता है।

१२. हाल मे हुए अध्ययनो और अनुसधानो से पता चला है कि आहारीय वसा (चर्बी) और पुरःस्थग्रन्थि (प्रोस्टेट) के कैसर मे अन्त सवन्ध है। अमेरिका मे हुए सर्वेक्षणो का निष्कर्ष है कि जहाँ गोमाँस की खपत अधिक है वहाँ पुरःस्थग्रन्थि (प्रोस्टेट) का कैसर अधिक पाया गया है।

१३. नर-वानर (प्रायमेट्स) की तरह मनुष्य की छोटी-बडी आँते शरीर की लम्बाई की लगभग तीन गुना होती है, जबकि माँसाहारियो की आँते उनके शरीर की लम्बाई की लगभग दस गुना होती हैं। माँसाहारियो का यकृत (लीवर) तथा उनके गुर्दे (किडनीज़) भी अनुपात मे अपेक्षाकृत बडे होते हैं ताकि वे नाइट्रोजनिक अपशेष (नाइट्रोजनिक वेस्ट), जो माँसाहार का अवशेष होता है, से निबट सके।ध्यान रहे, माँसाहारियो का यकृत उच्चवसायुक्त माँसाहार से निबटने के लिए आँतो मे अधिक पित्त पैदा करता

है, इस तरह कुल मिला कर मनुष्य का पाचनतन्त्र माँसाहार के उपयुक्त नही है।

९४. मॉस-मछली खाना अन्तत ऊतको (टिसूज) मे अम्लता (एसिडिटि) बढाता है— अण्डे इस स्थिति को और बदतर बना देते है, जबकि दूसरी ओर इतना ही दूध और फलाहार शरीर मे क्षारीय तत्त्व (अल्केलिनिटी) को सुरक्षित रखते हैं। इस सतुलन से पाचन-तन्त्र की कई गडबडियो से बचा जा सकता है।

९५. आहार की विषाक्तता (फूड-पॉइजनिंग) की सत्तर प्रतिशत घटनाओ के लिए मॉसाहार उत्तरदायी है। प्रशीतित चूज़े (फ्रोज़न चिकन), तुर्की, और मॉस का कीमा या कोफ्ता इसके लिए सबमे अधिक कुसूरवर है। डॉ थॉम्पसन का कहना है कि शरीर-विज्ञानियो में इस तथ्य पर कोई विवाद नही है कि मनुष्य को शाकाहारी ही होना चाहिये।



९६. इन अध्ययनो का दावा है कि मॉसाहार स्वास्थ्य के लिए हानि पहुँचाने वाला है— रौस, आई एल, बी के आर्मस्ट्राग, एल जे

बीलिन एड आर वेडोज़ीन १९८३ जनवरी १/८, एफ आर एलिस एड टी सैंडर्स १९७७ कोर्ड, एफ, १९७९ मई १, सी पी लूकास एड एल पॉवर १९८१, एल लिडवेल, ए स्टेनरेम एड पी ए ओकरमैन १९८४, डब्ल्यू जी रॉबर्टमन, एम पीकॉक, पी जे हेवर्न, एफ ए हैंस, ए रूदरफार्ड, एड ई क्लीमेस्टन १९७९। उपर्युक्त अध्ययनो का माराश है कि यदि आप अपने आहार मे मांस, अण्डा, मछली, सुअर-की-चर्वी अथवा अन्य पशुजनित उत्पाद शामिल किये हुए हैं तो व्यर्थ ही आप अपने स्वास्थ्य को खतरे मे डाल रहे हैं।

१७. महामारी-विज्ञान (एपियेमिओलॉजी) सबन्धी अध्ययनो से पता चला है कि पशुजनित प्रोटीन और पशुजनित वसा (चर्बी) का छाती और बडी आंत (कॉलन) के कैसर से आनुपातिक सबन्ध है।

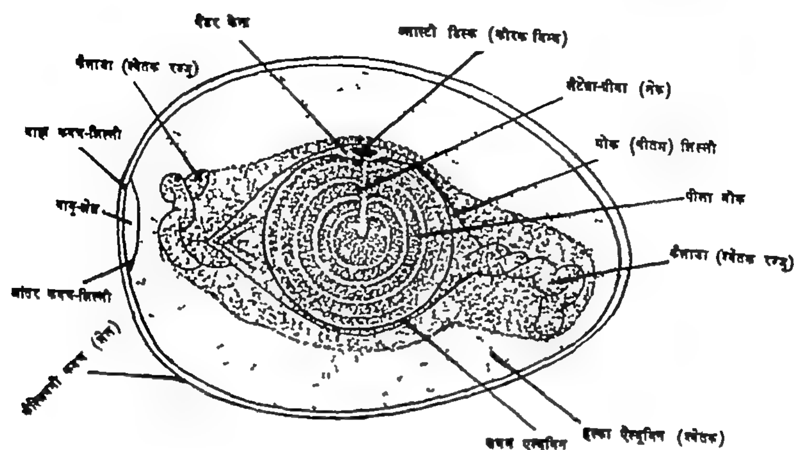
१८. रेफ्रीज़रेटरो मे आहार को सुरक्षित रखने की भी अनेक सीमाएँ है। इससे कई खतरे पैदा होते है। यदि रेफ्रीज़रेटर मे मांस या अण्डे रखे हैं तो एटीबायोटिक प्रतिरोधी सूक्ष्म जीवाणुओ से सदूषण (कटेमिनेशन) का खतरा काफी बढ जाता है। दूध और उसके उत्पादो मे यह खतरा उतना अधिक नही है बशर्ते सबन्धित वर्तनो (पात्रो) को पूरी सावधानी से वद किया जाए।

१९. शाकाहार मे बी-१२ के न होने की शिकायत प्राय की जाती है, किन्तु इस तथ्य को सभवत वहुत कम लोग जानते है कि मांसाहारियो मे बी-१२ को सोखने की क्षमता कम होती है। अन्य शव्दो मे— यदि एक मांसाहारी १० माइक्रोग्राम वी-१२ विटामिन प्रतिदिन लेता है तो वह उससे-से सिर्फ १६ प्रतिशत को ही अवशोषित कर पाता है जवकि एक शुद्ध शाकाहारी (वीगन) अपनी खुराक मे आधा माइक्रोग्राम ही लेता है, किन्तु वह उसका ७० प्रतिशत सोख लेता है।



१०० अमेरिका मे तम्बाकू, शराब, और नशीली वस्तुओ के बाद मृत्यु का मवसे वड़ा कारण माँमाहार है। आज से लगभग तीस साल पूर्व 'जर्नल ऑफ अमेरिकन मेडिकल एसोसिएशन' ने अपने एक सपादकीय मे यह निष्कर्प प्रकाशित किया था कि शाकाहार खून के थक्को के जमाव (थ्राम्बो-एम्बोलिक रोग) से ९० प्रतिशत और धमनी-मार्ग-के-अवरोध (कारोनरी आक्लूजन्स) से ९७ प्रतिशत बचाव कर सकता है (शार्फनवर्ग १९६१)।

अण्डे को शाकाहार कहना बहुत बड़ा धोखा



अण्डा मासाहार है

ऊपर आप एक चित्र देख रहे हैं, जिसमे अण्डे की बनावट को स्पष्ट किया गया है। वताया गया है कि वह काफी जटिल है और मनुष्य कोशिश करने पर भी उसकी रचना नही कर सकता। प्रकृति आज भी मनुष्य के लिए एक वहुत वडी चुनौती है।

एक पूरे अण्डे मे पीतक (योक) का वहुत वडा भाग होता है। इसे अति-पीतक (पॉलीलेसिथल/ मेगालेसिथल) कहते हैं। साइटाप्लाज्म (कोशिका-तरल) जो ब्लास्टोडिस्क/जर्मिनल डिस्क (जनन-विम्व) मे पाया जाता है, जीव-युक्त होता है। अण्डा फिर चाहे वह निषेचित (फर्टिलाइज्ड) हो या अनिषेचित (इन्फर्टाइल) उसमे जीवनाश होता है, यह वात अव कोई कल्पना नही है, वल्कि विज्ञान द्वारा सावित एक ठोस सत्य है।

यह प्रचार कि अनिषेचित*(इन्फर्टाइल या मुर्गी के द्वारा न सेये गये) अण्डे मे जीव नही होता है, पूरी तरह ग़लत है। पार्थेनोजेटिक्स (अनिषेक-जनन-विज्ञान) मे सिर्फ अनिषेचित अण्डो पर ही विचार किया गया है। पार्थेनॉकार्पी का अध्ययन जिन्होंने किया है वे वता सकते हैं कि अनिषेक जनन होता है, अत अण्डे को शाकाहार कहना एक व्यावहारिक कपट है। 'शाकाहारी अण्डा' एक मिथ्यानाम (मिसनॉमर) है।

सन् १९६१ मे 'यूनीसेफ' ने एक पुस्तिका प्रकाशित की- *हैंडवुक ऑफ पौल्ट्री ऑफिसर्स इन इंडिया* जिसमें उसने अण्डो को लोकप्रिय वनाने के लिए अनिषेचित

---

* *देखे द सीक्रेट लाइफ ऑफ प्लांट्स, पैंग्विन बुक्स- १९७४, पृष्ठ २६, अनिषेचित अण्डो के बारे मे वनस्पति-विज्ञानी क्लीव वेक्स्टर के अनुभव।*

(इन्फर्टाइल) अण्डे (वेजीटेरियन एग) जैसा मिथ्यानाम दे कर भारत को शाकाहारी समाज मे एक भ्रम फैला दिया। वास्तव मे यूनीसेफ-जैसी उत्तरदायी संस्था को यह काम नही करना था, किन्तु बदकिस्मती से यह हुआ और कई लोग अण्डो से उत्पन्न अनेक गभीर बीमारियो के शिकार हुए। आज भी उस अभिशाप को भोगा जा रहा है। अण्डे का उपर्युक्त चित्र सारी कहानी को विस्तार मे कह रहा है।

चित्र की दाहिनी ओर वायु-क्षेत्र बताया गया है। यह बहुत महत्त्वपूर्ण है। यह क्षेत्र अण्डे की दो कवच-झिल्लियो को अलग करता है और भ्रूण को श्वासोच्छ्वास की सुविधा देता है। यह भ्रूण को बाहरी दुनिया से जोडता है। यह सभी अण्डो मे होता है। इसी तरह अण्डे के ऊपरी भाग मे बीचोबीच एक छोटी रकाबी (ब्लास्टोडिस्क/ जर्मिनल डिस्क/ जनन-बिम्ब) होती है। अण्डे के गर्भ से बाहर आते ही इसमे विदलन (क्लीवेज) शुरू हो जाता है। कैलाज़ा (श्वेतक रज्जुओ) को देखे। यह गर्भ-मे-स्थित अण्डवाहिनी मे अण्डे के घूमने से बनती है और अल्बूमनी द्रव मे अण्डे को बीचोबीच बनाये रखती है। किसी भी अण्डे की रचना मे जब हम इन तीन स्थितियो की समीक्षा करते है, तब यह शत-प्रतिशत सिद्ध हो जाता है कि अण्डा, फिर वह किसी भी जीव का हो सजीव (जीवन-युक्त) होता है। इस तरह विज्ञान की नजर मे भी 'अण्डे को शाकाहारी कहना' एक बहुत बडी झूठ है।

बात सन् १९७१ की है।

मिशीगन यूनिवर्सिटी (अमेरिका) के वैज्ञानिको ने यह सिद्ध किया कि संसार का कोई अण्डा निर्जीव नही है, फिर चाहे वह निषेचित (सेया गया) हो अथवा अनिषेचित।

इसी वर्ष श्री फिलिप जे स्केम्बल ने *पोल्ट्री फीड्स एड न्यूट्रीशन* शीर्षक से एक पुस्तक लिखी, जिसके १५ वे पृष्ठ पर साफ-साफ कहा गया है कि अनिषेचित (इन्फर्टाइल) अण्डे भी जीव-युक्त होते हैं। वैज्ञानिक स्केम्बल के शब्द है- 'अण्डा बहुत नाजुक होता है। वह प्रतिकूल वातावरण के प्रति भी सवेदनशील होता है। वस्तुत अण्डे की उत्पत्ति बच्चे के सृजन के लिए होती है, मनुष्य की खुराक के लिए नही। अण्डे मे हवा के आने-जाने की नैसर्गिक व्यवस्था है। सफेद खोल के अन्दर बने सूक्ष्म छिद्रो मे हो कर ऑक्सीजन अन्दर जाता है और जरदी की भाफ कार्बन-डायोक्साइड को बाहर फेकती है, जिससे अण्डे का भ्रूण जीवित रह कर विकास करता है। यही बात अनिषेचित (अनफर्टेलाइज्ड) अण्डो पर भी लागू होती है।

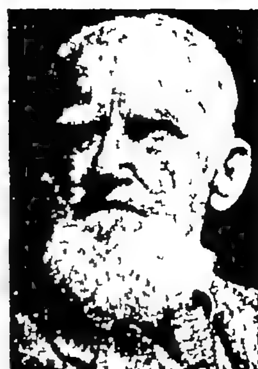
श्वासोच्छ्वास जीवन की निशानी है और जब भी यह अवरुद्ध होता है, अण्डा सड जाता है। वैज्ञानिक तमाम अण्डो मे जीव मानते हैं, अत जो लोग ऐसा नही मानते वे ताजा खोजो की अनदेखी करते हैं। वस्तुत अण्डा गर्भरस है, अत उसे शाकाहार के अन्तर्गत गिनना-गिनाना एक बहुत बडा धोखा है और अपने स्वार्थ के लिए फैलायी जाने वाली भयानक भ्रान्ति है। □□

इस तरह जनमती है क्रूरता अपनी संतान — युद्ध

"We are the living graves of murdered beasts
Slaughtered to satisfy our appetites
We never pause to wonder at our feasts
If animals like man, can possibly have rights
We pray on Sundays that we may have light,
To guide our footsteps on the path we tread
We are sick of war, we do not want to fight
The thought of it now fills our hearts with dread
And yet we gorge ourselves upon the dead"

Like Carrion crows we live and feed on meat
Regardless of the suffering and pain
We cause by doing so If thus we treat
Defenceless animals for sport or gain
How can we hope in this world to attain
The peace we say we are so anxious for
We pray for it over hetacombs of slain
To God while outraging the moral law
So cruelty begets its offspring **WAR"**

—George Bernard Shaw



"हम हैं कत्ल किये गये जानवरों की
जिन्दा कब्रें
उन जानवरों की जिन्हें हमने अपनी भूख मिटाने के लिए
कत्ल किया-मौत के घाट उतारा
हम अपनी शानदार दावतों पर कभी नहीं रुकते।
यदि मनुष्य की तरह पशुओं को भी अधिकार होते कभी
तो—
हम रविवारों को रोशनी के लिए प्रार्थना करते हैं
ताकि
हमें दिखायी दे वह रास्ता जिस पर हमारे कदम हों।
हम ऊब चुके हैं 'युद्ध' से
हम जूझना नहीं चाहते
अब 'युद्ध' का खयाल ही हमारे दिलों को आशंका में
भर देता है।
और
और फिर भी हम खाने ठूंसते हैं मुर्दा में।
"सड़े-गले मांस पर हर्षध्वनि करते कौओं की तरह
हम बसर करते हैं जिन्दगी और खाते हैं मांस
अनजान/अपरिचित उस त्रास और पीड़ा से जो हम
पशुओं को पहुँचाते हैं।
यदि उन निहत्थे/निरीह पशुओं के साथ अपने मनोरंजन या
फायदे
के लिए हम ऐसा सलूक करते हैं
तो हम इस विश्व के लिए उस शान्ति की आशा कैसे कर
सकते हैं
जिसकी हम चर्चा करते हैं और जिसके लिए चिन्तित हैं
और जिसके लिए
नैतिक कानूनों का उल्लंघन करते हुए हम कत्ल किये गये
पशुओं
की हड्डियों के ढेर पर खड़े प्रार्थना करते हैं प्रभु से?
इस तरह जनमती है क्रूरता अपनी संतान-युद्ध!!

—जॉर्ज बर्नार्ड

□ संयुक्त राष्ट्र, ७ फरवरी (एपी) बेरूत के एक उपनगर में फिलस्तीनी शरणार्थियों ने भुखमरी से बचने के लिए मुस्लिम नेताओं से इजाजत मांगी है कि उन्हें नर-मांस खाने दिया जाए।

□ नृतत्वशास्त्रियों का निष्कर्ष है कि प्रागैतिहासिक यूरोप में युद्ध एक सामान्य बात हो गया था। मनुष्य की जुझारू वृत्ति की शुरुआत उसके द्वारा भोजन के लिए पशु-पालन से हुई। इससे यह स्पष्ट है कि शान्तिप्रिय और अनाक्रमक जीवन-यापन में मांसाहार एक बहुत बड़ी बाधा है। मांसाहार में निरर्थक क्रोध आता है और क्रूरता की भावना तन मन को जकड़ लेती है।

माँस खाना बंद करें

कुछ समय पूर्व मैंने तुला (टॉल्सटॉय का गृह-नगर/रूस) के कत्लखाने को देखने का निश्चय किया।

एक रहमदिल/दयालु दोस्त को मैंने अपने साथ चलने के लिए कहा, किन्तु वह यह कह कर इंकार कर गया कि वह पशुओ को कत्ल होता बर्दाश्त नही कर सकेगा। ध्यान दे, कि मेरा यह दोस्त खुद शिकारी है और पशु-पक्षियो को मारता है।

और एक सुसंस्कृत महिला इस विश्वास में कि वह जो भी कर रही है उचित कर रही है, कत्ल किये गये इन जानवरो की लोथे (लाशे) निगल जाती है, किन्तु उसमे यह दुविधा बनी रहती है कि एक तो वह इतनी नाजुक है कि सिर्फ शाकाहार पर जीवित नही रह सकती, दूसरे वह इतनी संवेदनशील भी है कि न तो वह पशुओ को प्रताडित कर सकती है और न ही कत्ल के पीडादायी क्रूर दृश्यो को देख सकती है।

मैं कहना यह चाहता हूँ कि लोगो को सदाचार के लिए माँस खाना बंद कर देना चाहिये।

—टॉल्स्टॉय

इस पुस्तक को सही हाथो मे पहुँचाकर देश मे हिंसा के तेजी से बढते कदम रोकिये।



मैंने कत्लखाना देखने का निश्चय किया

Some time ago I decided to visit the slaughter-house at Tula and meeting a meek, kind acquaintance of mine, I invited him to accompany me My friend refused, he told me, bear to witness the slaughter of animals It is worth remarking that this man is a sportsman and himself kills animals and birds

And a kind refined lady will devour the carcasses of these animals with full assurance that she is doing right, at the same time asserting two contradictory propositions

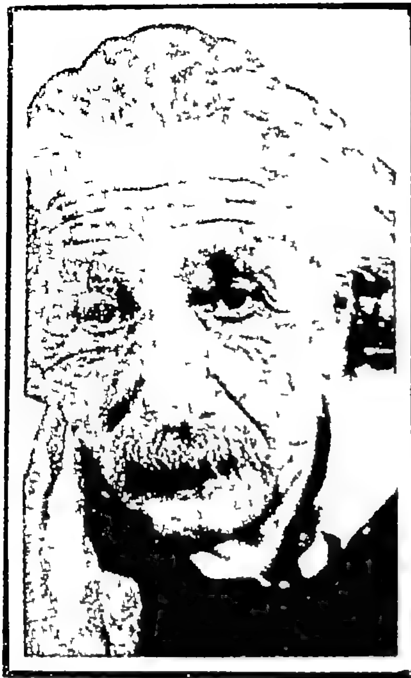
First that she is so delicate that she cannot be sustained by vegetable food alone, secondly, that she is so sensitive that she is unable, not only herself to inflict suffering on animals but even to bear sight of the suffering

What then, do I wish to say? That **in order to be moral people must cease to eat meat**

—Tolstoy



शुओ का क़त्ल भारत के
र्थतन्त्र का कत्ल है
Slaughtering animals is
Slaughtering Indian
conomy



जब हम खुद मृत प्राणियो की जीती-जागती कब्रे है, तब फिर हम इस दुनिया में किन्हीं आदर्श स्थितियों की कल्पना कैसे कर सकते है?

—जॉर्ज अल्बर्ट आइन्स्टाइन

यह धरती हमारी माता है, सिर्फ हमारी ही नहीं, उनकी भी जो बोल नहीं सकते; किन्तु जो उसे अपनी लीलाओं और अपनी सर्जनात्मक भूमिकाओ से धन्य करते हैं। विश्व एक कुटुम्ब है, जिस पर खरबों-खरब जीवधारी सांस लेते हैं। क्या हम इस व्यापक कौटुम्बिकता का अहसास नहीं करना चाहेगे? क्या कोई समझदार व्यक्ति अपने कुटुम्बियो की हत्या करना चाहेगा? नहीं; तो फिर हम क्यों खोल रहे हैं यान्त्रिक/आधुनिकतम क़त्लखाने अपनी इस सरज़मीं पर जो गौतम की है, गांधी की है, संतो की है, ऋषि-मुनियो की है? क्या इनके बगैर हम दरिद्र हो पड़ेंगे?

हम क्यो पागल हो गए हैं अपना मांस बेच कर डॉलर कमाने के लिए? क्या कोई अपनी माता की सपन्नता/उर्वरता बेच कर उसे बंजड़/बांझ करना पसद करेगा? क्या कोई अपनी आत्मा का सौदा कर सिर्फ ककाल रह जाना चाहेगा? यही हो रहा है हमारी पलकों-तले और हम बेखबर हैं। जिन जीव-जन्तुओ का मांस हम निर्यात कर रहे हैं, वे शाकाहारी पशु हैं। इस धरती का घास-फूस खाते हैं और इसे अमृत-तुल्य खाद लौटाते हैं, अन्तत. वे मर कर भी इसके काम आते हैं, इसे उपजाऊ बनाते हैं।

—डॉ नेमीचन्द

कत्लखाने : १०० तथ्य

डॉ. नेमीचन्द



हर सुवह देश के हजारो कत्लखानो से लाखो मूक-निरीह-निर्दोष पशुओ के लहू का जो दरिया वह निकलता है वह प्राण-रक्षा की करुण फरियाद लिये हिन्दुस्तान के लाखो-लाख ग्राम-नगरो से गुजरता है, लेकिन कोई नहीं सुनता उसमे प्रतिध्वनित वेआवाजो की पत्थर-तक-को-पिघलाने-वाली वह गुहार—न राष्ट्रपति, न प्रधानमन्त्री, न लोकसभा, न राज्यसभा, न यह पार्टी, न वह पार्टी। सव विदेशी मुद्रा की लुभावनी गिरफ्त मे नये यान्त्रिक कत्लखानो की इजाजत दे रहे है सिर्फ इसलिए कि अरव मुल्को की भोज-मेजो पर भारतीय पशुओ का मास परोसा जा सके। क्या आप सुन पायेंगे वह आवाज और दे पायेंगे उसे कोई साफ-सुथरा सकारात्मक जवाव?

हीरा भैया प्रकाशन इन्दौर

कत्लखाने भारी प्रदूषण फैलाते है। इन्हे साफ करने के लिए पानी की बेहद फिजूलखर्ची होती है। सिर्फ अल-कबीर कत्लखाना (रुद्रारम, आन्ध्रप्रदेश) प्रतिदिन १६ लाख लीटर पेयजल खर्च करता है, और उसकी सालाना जल-खपत ४८ करोड़ लीटर है। केन्द्रीय प्रदूषण-नियन्त्रण बोर्ड के एक ताजा अध्ययन के अनुसार साबरमती, सिन्धु-सतलज की सहायक नदियाँ, यमुना, सुवर्णरेखा, गोदावरी, कृष्णा, चम्बल, दामोदर, गोमती, काली, खान, क्षिप्रा, और हिंडोल नदियाँ बुरी तरह प्रदूषित हो चुकी है, तथा वैतरणी, भद्रा, ब्राह्मणी, तुंगा, कावेरी, ताप्ती, नर्मदा एव बेतवा प्रदूषण के कगार पर आ खड़ी हुई है। –नेशनल हेराल्ड, नई दिल्ली; २१, २७–१–१९९४।

आवरण-१/चित्र

यह है कत्लखाने का एक हृदय-विदारक दृश्य, जिसमे गोश्त-के-छीछडो और खून-के-पनालो के बीच खडा एक कुत्ता इसान से शिकायत कर रहा है कि अर तुम कब मेरी बिरादरी मे शामिल हुए? मैं क्या नाकाफी था इस सबके लिए?' और निरीह पशु की लाश लटकी है मनुष्य के इस बर्बर कृत्य की गवाही भरती। झाडू भी कोने मे खडी खून के आँसू बहा रही है।



'जब भी आप माम खाते है, दिल्ली के फेफडे रोग-ग्रस्त होते है। अरावली की धूल दिल्ली-अचल पर उतरती है, और उसे बीमार करती है। दिल्ली का **एसपीएम** (सस्पेड/सॉलिड पार्टिक्युलेट मैटर) स्तर दुनिया मे दूसरे क्रम पर सर्वाधिक है।'

'क्या आप देश की हरी खोल की रक्षा करना चाहते है? क्या आप ऐसा कुछ करना चाहते है, जिससे हवा मे ऑक्सीजन का परिमाण बढे और ताजा जल धरती के गर्भ मे ठहरे? क्या आप ठीक से सास लेना चाहते है? यदि हाँ, तो मास खाना छोड कर इस सबकी आज ही शुरूआत करे।'

कत्लखाने १०० तथ्य, डॉ नेमीचन्द जैन, हीरा भैया प्रकाशन, प्रकाशन- तीर्थंकर शाकाहार प्रकोष्ठ, द्वारा- हीरा भैया प्रकाशन, ६५, पत्रकार कॉलोनी, कनाडिया मार्ग, इन्दौर-४५२००१, मध्यप्रदेश, मुद्रक- नईदुनिया प्रिन्टरी, बाबू लाभचन्द छजलानी मार्ग, इन्दौर-४५२ ००१, चित्र- विश्वास जैन, इन्दौर, विनियोग परिवार, 'महाजनम्', मुम्बई, केअर, दिल्ली, यान्त्रिक कत्लखाना विरोधी समिति, हैदराबाद, **पहली बार**- २१ अप्रैल १९९४, **दूसरी बार**- १४ मई, **तीसरी बार**- २१ मई १९९४, **चौथी बार**- २ अक्टूबर १९९४, **पाँचवीं बार**- ३ दिसम्बर १९९४, **छठी बार**- १ अगस्त १९९५, **सातवीं बार**- १६ दिसम्बर १९९५, **आठवीं बार**- मार्च १९९६, **नवीं बार** मई १९९७, हिन्दी तेलुगु और गुजराती मे कुल प्रतियाँ - ७२,०००, मूल्य- दस रुपये। ISBN 81-85760-24-1 ☐☐ अन्तर्राष्ट्रीय मानक पुस्तक सख्या ८१-८५७६०-२४-१



और ये वोटियाँ, ये पर – क्या इमानीयत के तावूत पर अन्तिम खील नही हैं?

और यह खून-का-दरिया! किस दरिन्दे की कृपा है यह? क्या अब भी हम मांसाहार नहीं छोड़ेंगे? क्या हमारे हाथ कत्लखाने के इस गर्म खून में लथपथ नहीं हैं? क्या इन मूक-निरीह पशुओं का, जिन्होंने शताब्दियों तक हमारी सेवा की है, कर्ज़ हम इस तरह चुकायेंगे? क्या यह कृतघ्नता और विश्वासघात की पराकाष्ठा नहीं है? इस मृत पशु की आँखों में जो शोर तैर रहा है, उसे सुनिये - रो रहे हैं दोस्त मेरी लाश पर बेइख्तियार - ये नहीं दरियाफ्त करते किसने इसकी जान ली? महाजनम् के सौजन्य से।



गिद्धों का एक झुण्ड जो देवनार कत्लखाने के इर्द-गिर्द गोश्त के छीछड़े तलाश रहा है। क्या इनसान और गिद्ध में गोश्तखोरी की होड़ नहीं लगी है? किसी शायर की ये पंक्तियाँ कितनी मौजूं हैं इन हालात पर —उगे हैं बस्तियों में कितने जंगल, हरेक आदमी बन कर मिले हैं। —महाजनम् के सौजन्य से



चित्र विश्वास जैन

बेआवाज लाशों की आवाज →

है मौजजन एक कुलजुमे-खूँ काश यही हो
आता है अभी देखिये क्या-क्या मेरे आगे।

मेरे खून के आँसू रोने से एक रक्त-समुद्र हिलोरें ले रहा है। काश! मेरी मुसीबत यही खत्म हो जाए परन्तु उम्मीद नहीं है अभी और देखे क्या-क्या आगे

यदि देख सकते हो तो देखो कि इस बकरी के थनों मे दूध है और इसके मेमने घर पर इसकी प्रतीक्षा कर रहे हैं, किन्तु बदकिस्मती से अब इसे किसी



दूसरी-पहेली

जगल-की-आग

देश मे कत्लखानो-की-सस्कृति तेजी से पनप रही है। अंग्रेजो के जमाने मे हमारे पशुधन पर जो जुल्म नहीं हुए, वे अब होने जा रहे हैं। तब कुल मिला कर ३०० कत्लखाने थे, आज ३६,०३१ कत्लखाने है। देश जब आजाद हुआ, तब उसकी आबादी २७ करोड थी, आज लगभग ९० करोड है। आबादी का यह शीर्ष विन्दु गम्भीर चिन्ता का विषय है। स्वतन्त्रता-प्राप्ति के समय भारत की पशु-सख्या ३६ करोड थी, आज यह बमुश्किल १०-११ करोड है।

पूर्व प्रधान मन्त्री स्व. प. जवाहरलाल नेहरू ने अंग्रेजो के शासन-काल मे लाहौर मे कत्लखाना नहीं बनने दिया। उन्होने कहा – 'मैं कसाईखानो को बिल्कुल नापसद करता हूँ। मै जब भी किसी बूचडखाने के पास से गुजरता हूँ, तब मेरा दम घुटने लगता है। वहाँ कुत्तों का झपटना और चील- कौओं का मँडराना घृणास्पद लगता है। पशु हमारे देश के धन है। इनके ह्रास को मैं कदापि पसद नहीं करता।' सागर मे (मध्यप्रदेश) जनता के कडे रुख और विरोध के कारण अंग्रेजो को घुटने टेकने पडे, किन्तु आज हास्यास्पद यह है कि हम विदेशी मुद्रा की मृगतृष्णा मे फँस कर अपनी पशु-सपदा पर कहर बरपा कर रहे हैं। हमने कत्लखानो की एक अत्यन्त क्रूर-बर्बर शृखला को जन्म दे दिया है। सिर्फ दिल्ली मे कत्तालो (वधिको) की सख्या ५०,००० है। यह गभीर चिन्ता का विषय है।

मेट्रॉपोलिस (बम्बई, २५-२६ सितम्बर १९९३) के अनुसार आज देश मे ३६,००० सार्वजनिक बूचडखाने है। इनके अलावा ५ आधुनिक कत्लखाने, २ समन्वित कत्लखाने (मास-समाधन व चर्म-शोधन दोनों का) तथा २४ निर्यातोन्मुख (एक्सपोर्ट ओरिएंटेड) इकाइयाँ है।

देश मे कत्ल दर है गोवश १.४५ प्रतिशत, भैंस पाडा ३.४५ प्रतिशत, भेड ३२.५ प्रतिशत, तथा बकरे-बकरियाँ ३५.५८ प्रतिशत। यह सब पीडादायी तो है ही, देश को हिंसा, बर्बरता, क्रूरता, और बर्बादी की ओर धकेलने का षड्यन्त्र भी है।

अल-कबीर एक्स्पोर्ट्स लिमिटेड अरब देशो के शेखो का पेट भर रहा है। उनके चटखारो के लिए हमारी पशु सपदा को बेरहमी से काट रहा है। अल-कबीर कपनी ने सन् १९८० मे भिवडी (बम्बई) मे एक अद्यतन कत्लखाना बनाया था, जो एक युवक की बलि ले कर बद हुआ। इतने पर भी कपनी अपनी नीच हरकत से बाज नहीं आयी, और उसने ठीक ३० जनवरी १९८९ (गांधी पुण्य-तिथि/शहीद दिवस) को आन्ध्रप्रदेश के रुद्रारम ग्राम (हैदराबाद, मेदक जिला) मे एक यान्त्रिक कत्लखाना स्थापित करने के लिए दरख्वास्त दी, जिस पर आन्ध्रप्रदेश सरकार ने बगैर आगा-पीछा देखे ताबडतोड मे ४ मई १९८९ को दस्तखत कर दिये।

बावजूद मुकदमेबाजी के रुद्रारम का यान्त्रिक कत्लखाना बरकरार है और प्रतिदिन ४०० भैंस-पाडे तथा लगभग २००० भेड-बकरियाँ काट रहा है। यह काम वह ८ घंटे की एक पाली मे करता है। एक साल मे यह बूचडखाना एक लाख अस्सी हजार भैंस-पाडे तथा लगभग सात लाख भेड-बकरियाँ काट चुकेगा, जिससे देश को जो दीर्घकालिक क्षति होगी सो तो ठीक, सम्प्रति यह सुनिश्चित है कि उसे अगले पाँच सालो मे ८३२ करोड रुपयो की विदेशी मुद्रा से हाथ धोना पडेगा और १,६३,२५० लोगो की रोटी-रोजी अनिश्चित हो जाएगी। ध्यान रहे, अल कबीर ने सिर्फ ३०० से ३५० लोगो को रोजगार देने की बात कही है।

अल-कबीर एक्सपोर्ट्स लिमिटेड ने ६ फरवरी १९८९ को कहा था कि 'अल-कबीर समूह को इस प्रभाग को शुरू करने मे हमें प्रसन्नता है। हम सन् १९७६ से एक सफल निर्यातक रहे हैं। हमारा समूह खाडी/मध्यपूर्व देशो मे निर्यात के लिए भारतीय माल को प्राप्त करता और वितरित करता है। [illegible]

रिपोर्ट दी उसमे कहा गया कि भारत मे ७,५०,००,००० भैंस-पाडे हैं, जिनमे-से कत्ल के लिए ३,३०,००,००० भैंस-पाडो को चुना जाएगा।

देश मे अल-कबीर कपनी तो मास-व्यापार करती ही है, कई और ऐसे घटक हैं, जो यह घिनौना काम कर रहे हैं। पजाब मे चडीगढ के निकट पटियाला जिले के डेराबस्सी कस्बे मे आस्ट्रेलिया के सहयोग से पजाब मीट्स इडस्ट्री ने एक आधुनिक कत्लखाना बनाया है, जिसमे हर दिन २,००० पशुओ का वध होगा। तथाकथित विशेषज्ञो ने कहा है कि भारतीय मास की विदेशो मे खपत बढ़ाने के लिए यह आवश्यक है कि उसका उत्पादन अमेरिका और यूरोपीय देशो के मानदण्डो के अनुरूप किया जाए।

उधर बड़ौदा नगर निगम ने केन्द्र और गुजरात राज्य सरकारो के सहयोग से २ करोड रुपयो की लागत से एक अद्यतन बूचडखाना खोलने का पक्का इरादा व्यक्त किया है। यद्यपि राज्य-भर मे, विशेषत बडौदा मे, इसका व्यापक विरोध हुआ है; किन्तु हमारे विशेष प्रतिनिधि के अनुसार अभी निगम-आयुक्त ने इसके स्थगन के कोई स्पष्ट सकेत नहीं दिये हैं। लगता है हिंसा और आर्थिक उदारीकरण के उन्माद मे सरकार वह सब करेगी जो देश को चिन्दा-चिन्दा करने के लिए जरूरी है।

ताज्जुब इस बात का है कि जहाँ एक ओर बूचडखाने खोलने की अनुमतियाँ धडाधड दी जा रही हैं, वहीं दूसरी ओर कृषि मन्त्रीजी पशु-ऊर्जा सम्मेलन मे कह रहे हैं कि 'किसानो के लिए ७० प्रतिशत ऊर्जा का स्रोत जानवर ही होता है। ७ करोड ४० लाख बैलो और ८० लाख भैंसो से प्रति वर्ष १० हजार करोड रुपयो की ४ करोड हॉर्स पॉवर ऊर्जा प्राप्त होती है। मशीन यकायक इसका विकल्प नहीं बन सकती।'

पीडादायी यह है कि हमारे देश मे कत्लखानो का सपूर्ण विवरण, नियन्त्रण, और सचालन कृषि मन्त्रालय के पास है। पशु-वध कृषि के अन्तर्गत वर्गीकृत है।

देश का आम आदमी निरक्षर/अशिक्षित है, अत. न तो वह आर्थिक धूर्तताओ और बारीकियो से वाकिफ है, और न ही उस आगामी कल को देख पा रहा है जो अन्धकारपूर्ण तथा निराशाजनक है। कल-के-देश-की-काली-गोद-मे कराहती भावी पीढ़ी के दुर्भाग्य की कल्पना भी शायद वह नहीं कर पा रहा है, जो अभिशापो की बोझीली गठरी अपने सिर पर लिये कराह रही होगी।

हम तो सिर्फ यह कह सकते हैं कि यदि इस सूत्र को ध्यान मे रख कर कि पशुओ का कत्ल भारत के अर्थतन्त्र का कत्ल है (स्लॉटरिंग एनीमल्स इज स्लॉटरिंग इडियन इकॉनॉमी) हमने एक 'वध-शाला-विहीन' भारत के लिए प्रयत्न नहीं किया तो तय है कि इस देश की उर्वरता को लकवा मार जाएगा।

अन्त मे हम महाजनम् (वर्द्धमान सस्कृति धाम एव विनियोग परिवार, पेठेवाडी, जाम्बली गली, बोरीवली (पश्चिम), बम्बई-४०००९२); केअर(काइडनेस टू एनीमल्स एड रेस्पेक्ट फॉर एन्वायरोन्मेट, एम-३९ मैन मार्केट, ग्रेटर कैलाश पार्ट-१, नई दिल्ली-११०४८) तथा श्री विश्वास जैन(६५, पत्रकार कालोनी, कनाडिया मार्ग, इन्दौर-४५२००१)का हृदय से आभार मानते हैं कि जिनके सहज सौजन्य से हमे क्रमश देवनार (बम्बई), ईदगाह (दिल्ली) तथा इन्दौर स्थित क़त्लखानो के रगीन चित्र प्राप्त हुए। हमने चित्रो के साथ इनका यथास्थान नामोल्लेख कर दिया है।

हमे विश्वास है यह किताब भारतीय जीवन की अन्तरात्मा को प्रभावित करेगी, और उसे पश्चिम के दुष्प्रभाव से बचायेगी। हमे यह भी उम्मीद है कि इस पुस्तक के जरिये लोग यह भलीभाँति समझ पायेगे कि उनके, और पशु-पक्षियो के बीच के रिश्ते शत्रुता और क्रूरता के नहीं बल्कि मैत्री और करुणा, प्रीति और विश्वास के हैं। पुस्तक, हम जानते हैं, विभिन्न भाषाओ मे अनूदित हो कर देशवासियो के प्रकृति-प्रेम और सौंदर्य-बोध को जगायेगी, और इस सत्य को स्थापित करेगी कि कत्लखाने भारत ही नहीं वरन् सपूर्ण धरती के माथे पर कलक है, जो उसके स्वास्थ्य पर्यावरण और आर्थिक ताने-बाने को छिन्न-भिन्न करने मे लगे हैं।

इन्दौर. ५ अप्रैल १९९४

—डॉ नेमीचन्द
सपादक 'शाकाहार-क्रान्ति'



१. कत्लखाना वह बदकिस्मत जगह है, जहाँ स्वाद के लिए पिशाच बना मनुष्य पालतू शाकाहारी पशुओ का वध करता है। सभी संस्कृतियो ने इस क्रूर और बर्बर कृत्य की निन्दा की है। पर्यावरण-विज्ञानियो का कथन है कि वधशालाएँ प्रकृति के सहज सतुलन को गडबडाती है और मनुष्य को बर्बरता की ओर धकेलती है। नैतिकता और मनोविज्ञान भी हिंसा के पक्ष मे नही है। अहिंसा को एक मानवीय गुण और हिंसा को पाशविक वृत्ति निरूपित किया गया है।

२. भारत मे आज ३६,०३१ वैध (लायसेंसशुदा) कत्लखाने है, जिनमे-से चार महानगरो मे स्वचालित यान्त्रिक कत्लखाने हैं। जीव-जन्तु कल्याण बोर्ड (एनीमल वेलफेयर बोर्ड) के अध्यक्ष प्रो रामास्वामी (१९८९) ने कहा था (१०५१९८९) कि देश के ४,००० कत्लखानो के यन्त्रीकरण की आवश्यकता है। यदि उनकी यह योजना अमल मे लायी गयी, या लायी जा रही है तो देश मे प्रतिदिन ४ करोड पशुओ के काटे जाने की आशंका है। जिन नगरो मे यान्त्रिक कत्लखाने खोलने की पहल जारी है वे है— चेंगलचर्ला, मंगलगिरि, विशाखापट्टन (आन्ध्रप्रदेश), जबलपुर (मध्यप्रदेश), जयपुर (राजस्थान), शाकुम्भरी (उत्तरप्रदेश)।

३. वैध कत्लखानो के अलावा देश मे हजारो अवैध कत्लखाने हैं, जिनमे प्रतिदिन सूरज-की-पहली नरम किरण के साथ लाखो पशुओ को मौत के घाट उतार दिया जाता है।



देवनार क़त्लखाने (बम्बई) के प्रवेश-द्वार पर क़त्ल का इतज़ार करते स्वस्थ और सक्षम मवेशी

४. देवनार (बम्बई) कत्लखाना एशिया का सबसे बडा कसाईघर है, जिसमे प्रतिदिन १,००० बैल, गाय, भैस, पाडे-जैसे बडे पशु और ६,९०० भेड-बकरी-सूअर-जैसे छोटे पशु काटे जाते है। छोटे पशुओ का आँकडा कभी-कभी १०,००० तक पहुँच जाता है। देवनार मे वर्ष १९८७-८८ मे २५ लाख भेड-बकरियाँ, ८० हज़ार भैसे तथा पाडे, ५,२०० बछडे औा ५० हजार सूअर काटे गये।

५. विशेषज्ञो का निष्कर्ष है कि यदि भारत मे पशुओ-का-वध इसी रफ्तार से होता रहा तो बीसवी सदी के अन्त तक पशुओ-के-अकाल का खतरा मँडराने लगेगा। मद्रास-स्थित केन्द्रीय लेदर इस्टीट्यूट के अनुसार सन् १९५१ मे देश मे प्रति १,००० व्यक्ति ४३० गाय-बैल, १२० भैस-भैसे, १४१ बकरा-बकरी और १०८ भेडे थी। यह सख्या सन् २००१ मे क्रमश ११०, ६०, ३०, और ३० रह जाएगी। कत्लखाने जिस तेजी से खुल रहे है उसे देखते लगता है , पशु-सख्या अप्रत्याशित रूप से कम हो जाएगी।

६. अब सरकार खरगोश-पालन के बहाने देश मे 'खरगोश-कत्लखाने' भी स्थापित करने जा रही है। सरकार का निष्कर्ष है कि गाय, बैल, भैस, बकरा, भेड, सूअर, मुर्गा आदि से भारत की मॉस-मॉग पूरी नही हो सकती, अत अन्य विकल्प ढूँढने होगे। कहा जा रहा है कि खरगोश-की-एक-जोडी ५ वर्षो मे ३ लाख २२ हजार खरगोश पैदा कर



देवनार : कत्ल के लिए ट्रकों से उतारे जा रहे मवेशी।

सकती है। एक खरगोश से एक किलो मांस मिलता है, इस तरह पांच वर्षों में एक जोड से ३२२ टन मांस मिल सकेगा। सरकार का मानना है कि अकेला खरगोश पूरी दुनिया की मांस-जरूरतें पूरी कर सकता है।

७. २३ अप्रैल १९५८ भारत के इतिहास की एक काली तारीख मानी जाएगी। भारत की अहिंसा-प्रेमी जनता के लिए यह एक ऐसा बदकिस्मत दिन था, जिस दिन भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने देश की दया, करुणा और अहिंसा की अनदेखी करते हुए पशु-वध को व्यक्ति का मूलाधिकार निरूपित किया। सब जानते हैं कि इन पैंतीस वर्षों में देश में जो क्रूरताएँ और बर्बरताएँ बढ़ी हैं उन सबके लिए कत्लखाने तो जिम्मेदार हैं ही, यह फैसला भी जिम्मेदार है जिसके कारण इंसान में बर्बरता बढ़ी है। वस्तुतः हमारा न्यायालय भारत का भविष्य देख पाने में विफल रहा है।

८. अप्रैल १९९१ से मार्च १९९२ की अवधि में भारत से १९५ करोड़ रुपयों के मूल्य का मांस तथा तज्जनित पदार्थ विदेश भेजे गये। सन् १९८१ में ३८,९०८ टन मांस जहाजों पर लादा गया। सवाल है, क्या हमें विदेशियों के विनोद और स्वाद के लिए अपनी जमीन को रेगिस्तान में बदलना और अपनी पशु-सम्पदा को इस तरह बर्बाद करना चाहिये?

९. भारत किस तरह जैव खाद से वचित हो रहा है, इसकी एक झलक एक गाय से वर्ष-भर मिलने वाले लाभो से मिल सकती है। एक गाय वर्ष मे ३,५०० किलोग्राम गोबर देती है, जिससे १७,८८५ रुपयो के मूल्य का कम्पोस्ट खाद तैयार हो सकता है। इस खाद मे नाइट्रोजन ८०० किलोग्राम, फॉस्फोरस ५६० किलोग्राम, रोटेशियम १,०४० किलोग्राम, और माइक्रो न्यूट्रीएट ७७,६०० किलोग्राम होता है।

१०. ब्रिटेन के कत्लखानो से प्रतिवर्ष एक अरब किलोग्राम (१,००,००० टन) खून नालियो मे बह कर जबर्दस्त प्रदूषण फैलाता है।

११. यह एक भ्रान्त धारणा है कि कत्लखानो मे पशु-पक्षियो को मानवीय पद्धति से मारा जाता है। वस्तुत उन्हे कई क्रूर विधियो से मूर्च्छित और सवेदन-शून्य (स्टन) किया जाता है। यह प्रचार कि पशु-पक्षियो को इस तरह अचेत करने से उन्हे कोई पीडा नही होती, भ्रामक है, इसमे कोई सच्चाई नही है।

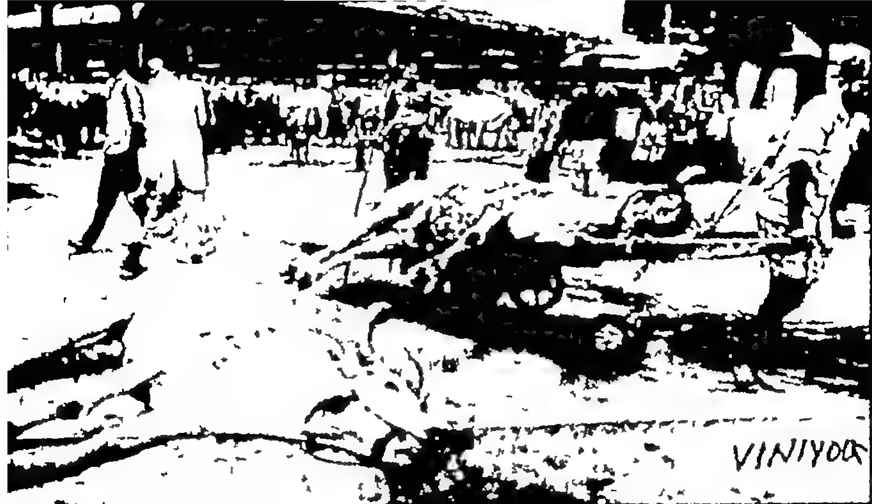
१२. यह निष्कर्ष सर्वथा निराधार है कि अचेत किये जाने पर पशु-पक्षी बगैर किसी पीडा के दम तोडते हैं। इस तरह मॉस-उद्योग अहिसा, दया और करुणा मे विश्वास रखने वाले व्यक्तियो और सस्थाओ के साथ निरन्तर छल कर रहा है। दुनिया-भर के चिकित्सको और वैज्ञानिको ने अब यह मान लिया है कि पशु-पक्षियो को मूर्च्छित/ अचेत करके मारने की पद्धति मानवीय नही है।

१३. ब्रिटेन की 'फार्म एनीमल वेलफेयर कौसिल' की रिपोर्ट से यह पूरी तरह सिद्ध होता है कि पशुओ का मानवीय वध एक सस्ता प्रचार है, इसके पीछे कोई सच्चाई नही है। कौसिल का निष्कर्ष है कि कत्लखानो मे पशु-पक्षियो की मूर्च्छितावस्था मान ली जाती है, वस्तुत वे पूरी तरह मूर्च्छित नही हो पाते।

१४. 'द ब्रिटेन वेटरनरी एसोसिएशन कौसिल' का कथन है कि कत्लखानो के वातावरण मे यह निश्चित करना मुश्किल होता है कि किसी पशु अथवा पक्षी को यथेष्ट विधि से मूर्च्छित किया भी जा सका है, या नही।

१५. आस्ट्रेलिया के एक सर्वेक्षण-प्रतिवेदन से पता चलता है कि बहुतेरे पशु-पक्षी आरम्भिक रूप मे अचेत किये जाने पर भी अचेत नही होते और उनकी अर्द्धमूर्च्छित अवस्था मे ही मृत्यु हो जाती है।

१६. कत्लखानो मे पशु-पक्षियो को अचेत करने की कई क्रूर पद्धतियाँ अपनायी जाती हैं, जिनमे-से दो है — १ केप्टिव्ह बोल्ट स्टनिंग



देवनार: कतील ढोता एक ठेला, जिसके पीछे खडे हैं कत्ल के इंतजार मे अनगिनत पशु।

(पिस्तौल दाग कर खोपडी तोडना), २ इलेक्ट्रिकल स्टनिंग (बिजली का करट दे कर मूर्च्छित करना)। ये दोनो पद्धतियाँ क्रूर, नृशस और अमानवीय है।

७. देश के कत्लखानो मे प्रतिदिन ६०,००० मवेशी (कैटल) मौत के घाट उतारे जाते है। दिल्ली के कत्लखानो मे ८,००० मवेशी रोज कटते है। क्या यह देश के पशुधन की बहुत बडी हानि नही है?

८. सरकार समझती है कि उसे कत्लखानो से प्रतिवर्ष १०६४२ करोड रुपयें (इस वर्ष १९८ करोड रुपये) मिलते हैं, किन्तु उसे नही मालूम कि कत्लखाने हमारी ऊर्जा किस तरह और कितनी उजाड रहे हैं। भारतीय कृषि को जितनी ऊर्जा चाहिये उसकी आधी से अधिक उन पशुओ से मिल सकती है, जिनका आज हमारे कत्लखानो मे वध किया जा रहा है। आज देश की पशु-सख्या ८,००,००,००० आठ करोड हैं। प्रत्येक पशु ५ अश्व-शक्ति (हॉर्स-पॉवर) उत्पन्न करता है, जो ४०,००० मेगावाट के लगभग होती है। वर्तमान मे एक मेगावाट विद्युत्-उत्पादन के लिए ३ करोड रु का पूंजी-विनियोग करना चाहिये। सरकार विद्युत्-उत्पादन पर ९०,००० करोड रु खर्च करती है, किन्तु दुर्भाग्य से इस बहुमूल्य देशी ऊर्जा-स्रोत पर वह मात्र १०,००० करोड रुपये खर्च करती है।

१९. कत्लखानो मे ज्यादातर भैसो और बैलो का कत्ल होता है, किन्तु बदकिस्मती से अब 'रेगिस्तान-के-जहाज' ऊँटो को भी कत्ल किया जाने लगा है। कर्नाटक और आन्ध्रप्रदेश के कारखानो का पेट राजस्थान के ऊँट भर रहे है। ख्याल रहे, राजस्थान के गरीब किमान लगातार एक समृद्ध देशी ऊर्जा-स्रोत मे वचित हो रहे है। १९८५ मे राष्ट्रीय कृषि आयोग ने स्पष्ट शब्दो मे कहा था कि भविष्य मे पशु-चालित गाडियो की मॉग तो बढेगी, किन्तु इन गाडियो को खीचने के लिए पशु नही मिलेगे।



२०. भारत मे भेड-बकरियो की कत्ल दर ३५ से ४० प्रतिशत है, जो भारत जैसे देशो के लिए गहन चिन्ता का विषय है। ३४९७ करोड विदेशी मुद्रा प्राप्त करने के लिए इन निरीह पशुओ का मॉस मध्यपूर्व और मलेशिया को भेजा जाता है। 'डॉलर-राजनीति' ने हमारे देश के प्रथम श्रेणी के मवेशी और अच्छी नस्ल की भेड-बकरियो को नष्ट कर दिया है। आनुवशिक दृष्टि से उत्कृष्ट साहीवाल, रेड सिन्धी, थापरकर, और राठी मवेशी के लुप्त होने का खतरा मँडराने लगा है। इसी तरह बहुमूल्य जमनापारी, अगोरा और पश्मीना जाति की भेडे भी लुप्त होने के कगार पर आ गयी है।

२१. १० अरब मेढको के कत्ल ने खाऊ (आवश्यकता से अधिक खाने वाले)



देवनार: एक और क्रूर दृश्य उन्हे खडा करने का, जिसे देख आँसुओ के भी आँसू आ जाते है।

यूरोपवासियो को मेंढक-की-टाँगे उपलब्ध कराने मे देश की दो दुर्लभ मेंढक-प्रजातियो को लोप-की-सीमा पर ला खडा किया है, ये है— राना टिग्रीना और राना हेक्साडाक्टिला। कहा जाता है कि इन प्रजातियो का एक मेंढक प्रतिदिन अपने वजन के बराबर कीडे-मकोडे खा कर कृषि की रक्षा करता है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के अनुसार मेंढको-की-टाँगो पर पूरी बंदिश नही है। सरकार व्यापारियो के आगे झुकी हुई है।

२२. जैव वैविध्य (बायोडायवर्सिटी) की दृष्टि से हमारा देश विश्व का अत्यधिक समृद्ध देश है, किन्तु हमारा दुर्भाग्य यह है कि हमारे ही देश मे ३० प्रतिशत स्तनपायी पशु-प्रजातियाँ (स्पीसीज़) लोप-सूची मे आ गयी है। शाकाहारी समाज मे माँस-संस्कृति का प्रभाव इस कदर बढ रहा है कि अब हमने हंस (गूज), जो कि 'सुनहरा अण्डा' देने वाली प्रजाति रही है, को भी मारना शुरु कर दिया है, अत पर्यावरण मन्त्रालय का कर्तव्य हो जाता है कि वह माँस-व्यापार को सीमित करे और देश को भावी बेकारी, महानगरीय अजगर, भूमिहीन-कृषकों की लगातार बढती संख्या तथा दुग्ध-दुर्भिक्ष से बचाये।

३. सूअर, जिनके बालो का ब्रश-उद्योग मे व्यापक उपयोग होता था, की कत्ल दर इतनी ऊँची हुई है कि देशी सूअर लगभग लुप्त हो चुके हैं।

४. दिल्ली के ईदगाह-कत्लखाने मे एक रुपया दे कर जी चाहे जितने पशुओ का कत्ल सभव है। यहाँ बच्चो को शूरवीर (ब्रेव्ह) बनाने के लिए कत्ल द्वारा तालीम दी जाती है। नगर निगम प्रति भैस-भैसा ५ रु तथा प्रति भेड-बकरी २ रु कत्ल-फीस लेता है।

५. ईदगाह-कत्लखाने को ८०० पशु प्रतिदिन मारने का लायसेस मिला हुआ है, किन्तु यहाँ ट्रक मे क्रूरतापूर्वक ठूँस कर लाये गये बीमार, भूखे और विकलाग १५,००० पशुओ को दर रोज़ मारा जाता है।

६. देश-विदेश मे दिनो-दिन चमडे का उपयोग बढता जा रहा है। रईस घरो मे एक ही व्यक्ति के पास ३-३, ४-४ जोड चप्पल-जूते होना आम बात है। जो लोग बढिया नरम क्रोम का जूता पहिनते हैं, उन्हे यह नही मालूम कि यह बढिया चमडा (काफ-लेदर) कहाँ से आता है। ध्यान रहे इसे मासूम बछडे-बछडियो को बेरहमी से मार कर तैयार किया जाता है। **अधिक मुलायम चमड़े के लिए गर्भवती गाय पर उबलता पानी डाल कर उसे सूँता जाता है और जब वह पिटते-पिटते दम तोड़ देती है तब उसके गर्भ से निकाले गये बछड़े से 'क्रोम-चर्म' बनता है। भारत के क़त्लखानो मे यह सब होता है।**

७. आठवी पचवर्षीय योजना मे कत्लखानो की भरमार होगी। विदेशी मुद्रा कमाने ने लोभ मे भारत सरकार ने कत्लखानो को ले कर एक बृहत् योजना बनायी है। सरकार चाहती है कि मॉस-निर्यात मे बढोतरी हो। भारतीय कत्लखानो ने वर्ष १९८९-९० मे ११० करोड रुपयो के मूल्य का मास निर्यात किया था, अब यह लक्ष्य प्रतिवर्ष ५०० करोड कर दिया गया है। सरकार ने कत्लखानो के तीन वर्ग किये है— १ नये कत्लखाने, २ वर्तमान कत्लखानो मे सुधार, ३ पक्षियो द्वारा हानि पहुँचाने के बहाने रक्षा-मत्रालय द्वारा खोले जाने वाले कत्लखाने। इस दृष्टि से प्रथम वर्ग मे ८, द्वितीय वर्ग में ११, और तृतीय वर्ग मे २२ कत्लखाने आते है। ये है — श्री नगर, माझीतर (सिक्किम), काचरकान हल्ली (बैगलोर), हैदराबाद, दिल्ली, मगलगिरि (गुटूर), विशाखापट्टनम् (आन्ध्र), रुद्रारम (आन्ध्र), इलाहाबाद, वाराणसी, अलीगढ, जालन्धर, पुणे, बजबज (बगाल), सईदापेट (मद्रास), पेराम्बुर (मद्रास), बडी दमन, बडा दीव, चडीगढ, ग्वालियर,



देवनार : एक रुग्ण-मूक पशु की आँखों से पीड़ा का दरिया प्रवाहित हुआ है – वह इन्तज़ार में है कि कब कत्ताल/जल्लाद उसे मारे, और कब उसे इस प्राणान्तक व्यथा से नजात मिले।

गोरखपुर, जोधपुर, हडगिल, तेजपुर, चबुआ, सिरसा, श्रीनगर, जम्मू, कलाइकुंडा, हैदराबाद, त्रिवेन्द्रम्, बैंगलोर, पटना, नागपुर, कलकत्ता, मद्रास, बम्बई, दिल्ली, हिन्दन, आगरा और अम्बाला।

८. एक सर्वेक्षण के अनुसार भारत के समग्र पशुधन का बाज़ार-मूल्य ४०,००० करोड़ रुपये है। ये पशु वर्ष में ४ करोड़ टन दूध देते हैं और इनसे एक अरब टन गोबर मिलता है। देश में १९ करोड़ ४० लाख गाय-बैल और ७ करोड़ भैंसे हैं जो ४ करोड़ अश्व-शक्ति (हॉर्स-पावर) जितनी ऊर्जा उत्पन्न करते हैं। यह ऊर्जा परिवहन के काम आती है। ख़याल रहे, देश में जितनी ऊर्जा प्रयुक्त है उसमें से ६६ प्र.श. का योगदान पशुओं का है।

९. देवनार (बम्बई) कत्लखाने में वर्ष में १,२०,००० बैल, ८० हज़ार भैंसें, तथा २५ लाख भेड़-बकरियाँ काटी जाती हैं। इस बेरहम वध से ४ करोड़ रुपयों की आमदनी होती है। कत्लखाने में १५१० कर्मचारी काम करते हैं, फलस्वरूप करीब २०० करोड़ रु. की सम्पत्ति नष्ट होती है और गाँवों में लगभग एक लाख लोग हर साल बेरोज़गार हो जाते हैं।

३०. देवनार (बम्बई) कत्लखाना १२६ एकड लम्बे-चोडे भूखण्ड पर विस्तृत है। कत्लखाने मे पशुओ को मूर्च्छित करने का सरजाम है, किन्तु इसका कभी उपयोग नही होता। यहाँ भी बान्द्रा-स्थित कत्लखाने की वध-पद्धति से पशुओ को मारा जाता है।

३१. कत्लखाने मे जिस किसी पशु के वध की अनुमति दी जाती है उससे पूर्व पशु के शरीर पर स्वस्थ्य होने की एक स्टाम्प (मुहर) लगायी जाती है। कानूनन बगैर स्टाम्प के पशु को काटना दण्डनीय अपराध है। कानपुर महानगर पालिका स्टाम्प के काम मे आने वाली स्याही बदायूं की 'मोनार्का कम्पनी' से मँगवाती थी, किन्तु मनपा द्वारा मूल्य न चुकाये जाने के कारण कम्पनी ने स्याही देना बद कर दिया, अत अब काल्पनिक सील-सिक्के के आधार पर ही जानवरो को काटा जा रहा है।

३२. कानपुर महानगर मे पाँच कत्लखाने है, जिनमे तीन बकरो, एक भैसो, और एक सूअरो के काटने के लिए है। एक सर्वेक्षण के अनुसार जो जानवर इन कत्लखानो में वध के लिए लाये जाते है उनमे से पचास से पचपन प्रतिशत रोगग्रस्त होते हैं।

३३. भारतीय कत्लखानो की हालत अत्यन्त दयनीय है। तमाम जानवर किसी-न-किसी सक्रामक रोग के शिकार होते हैं, जिनमे टेपवॉर्म (एक किस्म का कीटाणु) अधिकतर पाया जाता है। टेपवॉर्म का सक्रमण कत्ल-के-समय या बाद मे एक-दूसरे जानवर मे आसानी से हो जाता है। यह एक मास से दूसरे मास मे भी फैलता है। मास काटने वालो के नाखूनो के जरिये भी टेपवॉर्म एक-से-दूसरे जानवरो मे सक्रमित होता है।

३४. टेपवॉर्म सबमे बड़ा खतरा है। कुछ लोगो का यकीन है कि यह सिर्फ सूअर के गोश्त से ही फैलता है, किन्तु यह गलत है। पशु-चिकित्सको का आकलन है कि टेपवॉर्म-के-अण्डे आदि रोगग्रस्त व्यक्ति के मल से निकल कर कई महीने ज़िन्दा रहते हैं। भेड, बकरी, और गाय-भैंस, जिन्हे गदे माहौल मे पाला जाता है, यहाँ तक कि मछली जो गदे पानी मे पाली जाती है— सभी इन अण्डो को मनुष्य तक पहुँचा देते हैं। सूअरो मे मनुष्य के मल-मूत्र और खाने-पीने की चीजो से टेपवॉर्म पहुँच बना लेते हैं। **टेपवॉर्म क़त्लखानों का सबसे बड़ा अभिशाप है।**



देवनार : कत्ल-के-लिए पशुओं को बेजान जिन्स की तरह ट्रकों से उतारा जाता है।

३५. बूचडखाने जीवन की गुणवत्ता (क्वालिटी) को घटाते हैं। पर्यावरण पर भी उनका बुरा असर पडता है। वे मान कर चलते हैं कि पशु-पक्षियों में मनुष्य जैसी उदात्त अनुभूतियाँ नहीं हैं। वे महज सहजबोध और प्रतिक्रिया के पुलिंदे हैं। उनमें न तो हृदय है और न आत्मा, किन्तु भारत में ऐसा नहीं है। यहाँ 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' का बोधवाक्य गूँजता रहा है। 'जैसा मैं, वैसे ये' यहाँ के देशवासियों का प्रेरणा-वाक्य रहा है। बूचडखाने सहअस्तित्व की पवित्र भावना के प्रति एक करारी चुनौती है। पता नहीं फिर क्यों इन्हें नयी साज-सज्जा और यन्त्रीकरण के साथ हमारे समुद्र-तट पर उतरने दिया जा रहा है?

३६. एक और टेपवॉर्म है, जिसे 'इकाइनोकोकोसिस' कहा जाता है, जो सूअर, भेड, गाय-भैंस, बकरी, और ऊँट के जरिये फैलता है। यह सभी खौन के जानवर हैं। कुत्ते की टेपवॉर्म से खासा दोस्ती है। ये इन्हीं के साथ पलते-पुसते हैं। कुत्ते ही इसे वातावरण में फैलाते हैं और इन पशुओं तक पहुँचाते हैं जिससे अन्तत: मनुष्य प्रभावित होता है। कुत्ते से ये कीटाणु/विषाणु मनुष्य तक सीधे पहुँच जाते हैं। इसकी चपेट में आये कुत्ते के



देवनार: गोश्त के छीछडो के इतजार मे खडी/मँडराती कुत्तो की टोली।

बालो मे इसके अण्डे चिपके होते हैं। जो व्यक्ति कुत्ते के पास जाता है वह भी विषाणु की चपेट मे आ जाता है। जब कोई व्यक्ति इसकी चपेट मे आता है, तब उसे तुरन्त इलाज कराना चाहिये अन्यथा टेपवॉर्म फैल कर मस्तिष्क तक पहुँच जाते हैं। इससे मस्तिष्क सबन्धी तनाव, शून्यता, ऐंठन और कई मनोरोगो के लक्षण उभरते हैं। यहाँ तक कि पचास प्रतिशत लोग मौत के जबडो मे चले जाते हैं। **क़त्लखाने टेपवॉर्म के सबमें सघन अतिथिगृह होते हैं।**

३७. भारतीय कत्लखानो मे सविधान के अनुच्छेद ४८ का खुलेआम उल्लघन हो रहा है। सविधान में बछडे, बैल और दुधारू पशुओ का वध प्रतिबन्धित है, फिर भी इन्हे काटा जाता है। प्रश्न उठता है— यह कैसा सविधान है जो सरकारी क्षेत्र पर भी प्रभावी नही है?

३८. पश्चिम-की-सस्कृति मान कर चलती है कि पशु सहजबोध-चालित रोबोट (यन्त्रप्राणी) हैं। वे कलाई अथवा दीवार घडियो की भाँति पहियो, स्प्रिगो, गेयरो से सक्रिय वजन मात्र है। भारतीय अध्यात्म के लिए यह एक अनहोनी बात है।



कत्लखानों का वह वीभत्स परिदृश्य जहाँ पशु-पक्षियों के प्राणों की कोई कीमत नहीं रही है। —सौजन्य : डायट फॉर ए न्यू अमेरिका

२९. पोल्ट्रियाँ दुनिया के सबसे अधिक घिनौने कत्लखाने हैं, जो मान कर चलते हैं कि पशु-पक्षी जड़ अस्तित्व हैं। पश्चिम की यह मान्यता इस दृष्टिकोण की उपज है कि पशु-पक्षी वस्तु हैं, कच्चा माल हैं जिनका हमें खुल कर उपयोग करना चाहिये। कत्लखानों ने असल में परम्परागत शब्दावली को ही बदल डाला है। चिकन (मुर्गे) को आज चिकन नहीं कहा जा रहा है, उसे अन्य नामों से पुकारा जा रहा है। यदि उसे भून कर खाया जाना है तो 'ब्रोइलर' और यदि उसे अण्डों के लिए मुर्गीखाने

रखा जाना है तो 'लेअर' कहा जाता है। शब्दावली के बदलाव से दो नुकसान हुए है— १ यह विचार फैला है कि पशु-पक्षी बेजान है। २ उनके होने या, जीने की कोई सार्थकता नही है। **पशु-पक्षियो को निष्प्राण देखने की दृष्टि का विकास बूचडखाना-संस्कृति की घृणास्पद देन है।**

४०. बूचडखाने से निकलने वाला मलवा एक बहुत बडी समस्या है। यह पर्यावरण को तो दूषित करता ही है, किसी भी नगर के इर्दगिर्द गदगी और अस्वच्छता भी बढाता है। उन्नाव-स्थित तकीनगर का बूचडखाना इसका जीवन्त उदाहरण है। यहाँ का मलवा नगर के कूडेदानो मे डाल दिया जाता है, जिससे सक्रामक रोग तो फैलते ही है— राहगीरो का सडक चलना तक मुश्किल हो जाता है। देहरादून से प्रकाशित 'रीजनल एक्सप्रेस' ने अपने २० सितम्बर के अक मे इस समस्या पर अच्छा प्रकाश डाला है।

४१. कत्लखानो ने व्यवस्थित, सगठित और औद्योगिक हिंसा (सिस्टेमेटिक, ऑर्गेनाइज्ड एड इडस्ट्रिएलाइज्ड वॉयलेस) को जन्म दिया है। यह हिंसा परम्परित/ अनजाने मे हुई हिंसा से भिन्न है। इसे जानबूझ कर किया जाता है, इसीलिए सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक जॉर्ज आइस्टाइन का यह कथन





कत्लखानों में जवां दुधारू पशुओं को भी नहीं बख्शा जाता है। इस गाय के थन दूध से भरे है – और दूसरी गौएँ उसका निर्मम/बेरहम कत्ल देख रही है। ये गौएं अपनी बारी के इंतजार में है। – [illegible]



सूअरों को भी यहाँ इसी बेरहमी से मारा जाता है। [illegible]



कोई करुणा या रहमदिली नही। यह भैस मौत, खून, लाश, सडे-गले गोश्त के छीछडो, और मल-मूत्र के बीच बैठी अपने कत्ल का इतजार कर रही है।

— केअर नई दिल्ली के सौजन्य से



निर्यात की निरंकुशता मे हृष्ट-पुष्ट बछड़ो को भी गोश्त के लिए कत्ल कर दिया जाता है। लुटता है अन्ततः भारतीय किसान और भारत।

— केअर नई दिल्ली के सौजन्य से



और उस इंसान बदन की खून-की-धार वह निकली वह धार जो कभी ज़िन्दगी की धार थी। यही धार विषाद लिए देश के गली-गली, ग्राम-नगरों से गुजरती लेकिन कोई नहीं सुनता इसमें प्रतिध्वनित आवाज़-की-आवाज़ — न राष्ट्रपति, न प्रधानमन्त्री, न लोकसभा न राज्यसभा सब विदेशी मुद्रा के [illegible] में [illegible] सब [illegible] की [illegible] देश सिर्फ इसलिए कि व [illegible] मुद्रा की [illegible] पर वाणिज्य [illegible] पर [illegible] है।

चित्र: [illegible]



लाशे लटक रही हैं, एक भेड को कत्ल के लिए खींचा-खसोटा जा रहा है। इर्द-गिर्द पडी हैं खाले, गर्म लहू, गोश्त के छीछडे और मनुष्य की क्रूरता के लाल धब्बे। इस तरह, हिन्दुस्तान मे, कहीं भी, किसी भी कत्लखाने मे एक रुपया दे कर आप एक निरीह पशु का क़त्ल करवा सकते हैं। चित्र विश्वास जैन

बकरे के जिस्म पर से खाल उतारते कत्ताल (कसाई) के खून-सने हाथ।
चित्र [illegible] जैन





अल-कबीर कत्लखाना: पोनेतिंग (मनाधन) के लिए तैयार वे लाशें जिनकी खाल उतार ली गयी है। एक अरब शेख और कंपनी-प्रबन्धक [illegible] कर रहे हैं।



कत्लखानो मे बीमार, और मरणासन्न – मौत-के-मुंह-मे-खडे – पशुओ को भी बख्शा नही जाता। गौर करे, यहाँ लाये गये पशुओ को ठेले से किस तरह, और कितनी क्रूरता से कस कर बाँधा गया है।।

केअर नई दिल्ली के सौजन्य मे



अन्तिम प्रहार से पहले इस बकरी की पिछली टाँगे तोड दी गयी है, और खाल उतार ली गयी है।

केआरा नई दिल्ली के सौजन्य से

कि जब हम खुद मृत प्राणियों की जीती-जागती कब्रें हैं, तब फिर हम इस दुनिया में किन्हीं आदर्श स्थितियों की कल्पना कैसे कर सकते हैं?

पोल्ट्रियाँ क्रूरतम वध-स्थल हैं, जहाँ नन्हे चूज़े कूड़ा-करकट की तरह फेंक दिये जाते हैं। उन्हें बड़े थैलों (हैवी ड्यूटी प्लास्टिक बैग्ज़) में ठूँस-ठूँस कर इस तरह भर दिया जाता है कि वे सांस घुटने के कारण मर जाते हैं। आप जितनी देर में इस तथ्य को पढ़ेंगे उतने समय में २ ००० तुरन्त-जन्मे चूज़े मनुष्य के क्रूर हाथों से थैलों में ठूँस दिये जाएंगे?



लाख मूक प्राणियो को मौत के घाट उतार सकने की क्षमता वाले एव यान्त्रिक कत्लखानो के निर्माण के लिए भारत सरकार ने अरब देशो की अल-कबीर एक्सपोर्ट्स कपनी को लाइसेस दिया है। इस कत्लखाने का प्रमुख सलाचक और भागीदार गोडल-निवासी दिलीप हिम्मतलाल कोठारी (डी एच कोठारी) जैन है। हैदराबाद-स्थित अल-कबीर ग्रूप ऑफ कपनीज का पता है- '१-२-९३/४१ पहली मज़िल, गगन महल, दोमल गुडा, हैदराबाद-२९, आन्ध्रप्रदेश'।

४४. मीट ट्रेड जर्नल (यूके) के सपादक ने कहा है कि मास-उद्योग के प्रति जनता मे जो नफरत फैल रही है उसे देखते हुए इस उद्योग की पारिभाषिक शब्दावली मे परिवर्तन कर लिया जाना चाहिये तदनुसार 'स्लॉटरहाउस' को 'मीट-प्लाट' अथवा 'मीट फैक्टरी' और कसाई (बूचर) को 'विक्च्यूएलर' (आयरिश भाषा का शब्द, जिसका अर्थ है खाद्य-प्रबन्धक) कहना चाहिये। ऐसा करने से मास-उद्योग को अपने खूनी धन्धे पर पर्दा डालने का अवसर मिल जाएगा ।

४५. पीटर कॉक्स (ब्रिटेन) ने अपनी पुस्तक **व्हाय यू डोंट नीड मीट** (१९८६) मे कत्लखानो के प्रत्यक्षदर्शियो के हवाले से बताया है कि कत्ल के लिए लाये गये आतकित पशुओ को अपनी मृत्यु का आभास मिल जाता है, अत वे कत्लखाने-की-ओर आगे बढने से कतराने लगते हैं। ऐसी स्थिति मे उन्हे नुकीले हथियार चुभो कर एक खास जगह पर ले जाया जाता है, जहाँ मास को नरम बनाने के इजेक्शन (मीट-टेडराजिग इजेक्शन) दिये जाते है। खयाल रहे क्रूरता, उत्पीडन, और दुस्सह कष्ट के कारण उनकी मास-पेशियाँ सख्त हो जाती हैं।

४६. तय है कि शिकार किये गये, घायल, ज़ख्मी अथवा मदगति से मारे गये पशुओ का मांस स्वास्थ्य के लिए घातक होता है। तेज़ बुखार अथवा भयभीत पशुओ का रक्त-प्रवाह ऐसे ग्रन्थि-स्रावो (ग्लेज्युलर सीक्रेशन्स) से चार्ज हो जाता है कि मास मनुष्य के किसी भी प्राणी के खाये जाने के उपयुक्त नही रहता। कत्लखानो मे ऐसे क्रूर दृश्य अक्सर देखने को मिलेगे।

४७. कत्ल के लिए कतार मे खडे, बुरी तरह हाँफते, घूरते और तेज धडकनो मे झाग-उगलते मवेशी आतकित रहते है। कहा जाता है कि भेडो/ सूअरो को इलेक्ट्रोक्यूट (बिजली-से-मारना) किया जाता है, क्योकि असल मे उन्हे मारने के लिए उच्च वोल्टेज़ की आवश्यकता होती है, जिससे खून

अलग हो पाता है और इस विधि से प्राप्त मांस पर काले दाग पड़ जाते हैं। उपभोक्ता इस प्रक्रिया से अपरिचित रहता है और तरह-तरह की बीमारियों का शिकार बनता है।

यहूदी और इस्लामी कत्ल के तरीके में बुनियादी फर्क है। यहूदी कत्ल को शेचिता या कोशर और इस्लामी कत्ल को ज़बीह अथवा हलाल कहा जाता है। इस तरह के कत्ल की पहली शर्त है कि मनुष्य जिस पशु का मांस खाये वह सकलांग हो। इसका मतलब यह हुआ कि कत्ल के लिए लाया गया पशु न तो बीमार हो और न विकलांग। उसे हर हालत में सम्पूर्ण होना ही चाहिये। दूसरी शर्त है कि पशु को पूरी तरह रक्त-रिक्त (खून-से-खाली) किया जाना चाहिये, क्योंकि दोनों मज़हबों में खून का उपभोग सर्वथा वर्जित है, किन्तु वास्तविकता यह है कि किसी भी पशु का तमाम खून उसके शरीर से निकाला नहीं जा सकता। यह एक ऐसा तथ्य है जिसे कोई भी पशु-चिकित्सक प्रमाणित कर सकता है। इस्लामिक मेडिकल आर्गनाइज़ेशन (कुवैत) के प्रतिनिधि [illegible] [illegible] का कथन है कि खून अस्वास्थ्यकर होता है। इसमें कई विष तथा [illegible] होते हैं। मुस्लिमों के लिए खून का उपयोग पूरी तरह निषिद्ध है, अतः स्पष्ट है कि यदि कोई खून से बचना चाहता है तो उसे मांस नहीं खाना चाहिये।

गत ४५ सालो मे गेहूँ के भावो मे १२००, दालों मे १६००, बाजरे मे १६००, और चावल मे १५०० प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इस भाववृद्धि के कारण बहुत स्पष्ट हैं। पुराने कत्लखानो का आधुनिकीकरण हुआ तथा नये यान्त्रिक कत्लखाने खोले गये फलस्वरूप किसान मुफ्त मे मिलने वाली गोबर-खाद से वचित हुआ और उसे महँगी रासायनिक खादो का उपयोग करना पडा। सिर्फ देवनार (बम्बई) के कत्लखाने मे हर साल २७,४६,००० मवेशी मौत के घाट उतार दिये जाते है। जब एक कत्लखाने का यह हाल है तब उन हज़ारो कत्लखानो की कल्पना कर सकते है जिनमे हर साल करोडो पशुओ का कत्ल होता है और हमारी शस्यश्यामला धरती लगभग २०,६०,००० टन मुफ्त/सक्षम खाद से वचित रह जाती है। **क़त्लखाने धरती-की-उर्वरता और उपयोगी पशु-सम्पदा के दुश्मन हैं।**

५०. सवाल उठता है कि कत्लखानो मे पशुओ को तत्क्षण कत्ल क्यो नही कर दिया जाता? कसाई का कहना है कि हम चाहते तो यही हैं, किन्तु मास-उद्योग का मिथक है कि जब तक गल-शिरा (जेगुलर-वीन) से खून पूरी तरह निकल न जाए तब तक कत्ल-किये जा रहे पशु का दिल धडकना ही चाहिये, किन्तु चिकित्सा-विज्ञान का दावा है कि दिल भले ही धडकता रहे, पशु के शरीर से सारा खून निकाल पाना सभव नही है। ख्याल रहे, कत्लखानो का आधा खून नालियो मे बह जाता है और आधा पालतू पशुओ का आहार बनता है।

५१. श्री जी सी बैनर्जी ने अपनी किताब 'एनीमल हस्बैड्री' मे गोमास-उत्पादन के उतरोत्तर बढते ऑकडे इस प्रकार दिये हैं— वर्ष १९७५—६१,००० टन, १९८२—८०,०००, १९८५—८९,००० टन, १९९०—१३,००० टन, १९९५—१,३५,००० टन, २०००—१,७०,००० टन, २००५—२,१२,००० टन, २०१०—२,५५,००० टन। यद्यपि इन ऑकडो मे बछडो-के-मॉस (वियल) का ऑकडा सम्मिलित नही है, तथापि **एस्कॉर्ट्स** और अल-कबीर मॉस-उत्पादको के पॉव जमाते ही ये ऑकडे काफी बढ जाएँगे। मॉस-उत्पादक अल-कबीर के विश्व के ८ देशो मे ८,००० तथा दिल्ली मे ७६ मॉस-बिक्री-केन्द्र है।

५२. नैरोबी मे सपन्न 'अन्तर्राष्ट्रीय ऊर्जा सम्मेलन' मे स्व श्रीमती इदिरा गॉधी ने कहा था कि इस जेट युग मे भी भारत के लोग बैलगाडियो का

उपयोग करते हैं। जो हो, भारत के परमाणु देश के बिजलीघरों से उत्पन्न २२,००० मेगावाट बिजली से अधिक बिजली उत्पादित करते हैं। अब उनके स्थान पर किसी अन्य विकल्प को विकसित करने का मतलब होगा २५ से ४० अरब डॉलरों का अतिरिक्त पूंजी-विनियोग। इसके अलावा कृषि-अर्थतन्त्र को खाद और सस्ते ईंधन का नुकसान भी होगा ही। पीड़ादायी है कि भारतीय कर्णधार आज वही करने पर तुले हैं जिसे स्व. इंदिराजी नहीं चाहती थीं।

१३. द्वितीय महायुद्ध से पहले तत्कालीन अंग्रेज सरकार ने करोड़ों रुपयों की लागत से लाहौर में एक विशाल बूचड़खाना स्थापित करने की योजना बनायी थी। इस क्रूर और स्वार्थ-प्रेरित योजना का देशवासियों ने प्रबल विरोध किया था। देशवासियों के स्वर-में-स्वर मिलाते हुए युग-पुरुष पं. जवाहरलाल नेहरू ने कहा था- 'मैं कसाईखानों को बिल्कुल नापसंद करता हूँ। मैं जब कभी किसी बूचड़खाने के पास से गुजरता हूँ, मेरा दम घुटने लगता है। पशु हमारे देश के धन हैं। इनके हनन को मैं कदापि पसंद नहीं करता। सरकार ने लाहौर में जो कसाईखाना खोलने का निश्चय किया है मैं उसका घोर विरोध करता हूँ। इसके विरोध में देशवासी जो भी कदम उठायेंगे, मैं उनके साथ रहूँगा।' और प्रबल जन-विरोध के आगे ब्रिटिश सरकार को घुटने टेकने पड़े व उसे प्रस्तावित योजना को रद्द करना पड़ा था।

निर्यात-ससाधन क्षमता मे प्रतिवर्ष २,००,००० टन की वृद्धि सभव हो।

५६. जुलाई १९८९ की एक खबर के अनुसार भारत सरकार विदेशी मुद्रा की गिरती हुई स्थिति को सँभालने के लिए ५० करोड रुपयो की लागत से **मीट टेक्नोलॉजी मिशन** की स्थापना करने को थी (?)। मिशन का मुख्य उद्देश्य था कत्लखानो मे नयी तकनीको के उपयोग से मॉस-उत्पादन मे वृद्धि। मिशन के प्रथम चरण मे वरेली के इजातनगर मे आधुनिक कत्लखानो की योजना थी (?)

५७. व्यापक जन-आन्दोलन के फलस्वरूप २४ दिसम्वर १९८६ को सर्वोच्च न्यायालय ने बम्बई उच्च न्यायालय के उस फैसले का समर्थन किया, जिसके अनुसार 'अल-कबीर एक्सपोर्ट्स प्रा लिमि' तथा अन्य दो लायसेन्स-प्राप्त निर्यातक भिवडी (महाराष्ट्र) मे कत्लखाना स्थापित करने की टोह मे थे। आन्दोलन मई १९८३ मे आरम्भ हुआ था। उक्त तीन मॉस-उत्पादको को 'यूरेपियन इकोनॉमिक कम्युनिटी' के देशो तथा 'अमरीकी फूड्स एड ड्रग्ज़ एडमिनिस्ट्रेशन' के मानको के अनुसार जो भूखण्ड दिये गये थे, उन्हे भी सर्वोच्च न्यायालय ने निरस्त कर दिया।

५८. अमरीकी कत्लखानो मे एक किलोग्राम गोमास-उत्पादन मे ५ कि ग्रा अन्न; ३,००० लीटर सिंचाई-के-उपयोग मे आ सकने वाला जल, तथा २ लीटर गैसोलीन के बराबर ऊर्जा खर्च करनी पडती है।

५९. नीदरलैण्ड्स, बैल्जियम और फ्रास अब 'अतिरिक्त खाद क्षेत्र' बन गये है।उनकी जमीन-जितना-काम-मे-ले-सके उससे अधिक पशु-खाद वे उत्पन्न करने लगे है। वर्ल्ड वाच इस्टीट्यूट (वाशिंगटन) के अनुसार इस तरह की अरिरिक्त खाद, जलीय प्राकृतिक व्यवस्था (ईकोसिस्टम) को असतुलित करती है तथा भूमिस्थ जल को स्वास्थ्य पर बुरा असर डालने वाले नाइट्रेट क्षारो से प्रदूषित करती है।

६०. लैटिन अमेरिका मे पशु-फार्मो ने अधिकाश वर्षा-वनो को ध्वस्त/बर्बाद कर दिया है। इन वनो की ७० प्रतिशत भूमि पनामा और कोस्टारिका मे है। वर्ष १९७० से लैटिन अमेरिका के पशु-फार्मरो ने मिनेसोटा के क्षेत्रफल (२१७७३६ वर्ग किलोमीटर) के बराबर २ करोड हेक्टर वर्षा-वनो को नष्ट कर दिया है। कत्लखाने बढा कर भारत ने भी विनाश की इस खतरनाक डगर पर अपने पॉव रख दिये है।

कत्लखानों ने मनुष्य को इतना क्रूर और बेरहम बना दिया है कि अब उसे हिंसा में रस आने लगा है। कत्लखाना-उद्योग ने आदमी को खुदगर्ज और बेहया भी बना दिया है। किसी भी कत्लखाना-परिसर (कैम्पस) में आपको कुछ लोग बर्तन लिए घूमते-फिरते नज़र आएँगे ताकि कत्ल-से-पहले वे भैंसों से दूध का आखिरी कतरा तक दुह सकें।



६३. भारत की राजधानी दिल्ली के तमाम कसाई (वधिक), जिनकी सख्या लगभग ५०,००० है, ईदगाह-स्थित कत्लखाने के इर्द-गिर्द बसे हुए है। एमसीडी (नगरपालिक निगम, दिल्ली) तथा डीडीए (दिल्ली विकास प्राधिकरण) इनकी देखभाल करता है।

६४. दिल्ली-स्थित ईदगाह कत्लखाने मे वर्ष १९८९-९० मे ६,२५,०८८ भैसो तथा १९,११,८५७ भेड-बकरियो को मौत के घाट उतारा गया। वर्ष १९९०-९१ मे ५,८८,९२२ भैसे तथा १८,००,५५७ भेड-बकरियो का कत्ल हुआ। दिल्ली महानगर के इस ऑकडे से हम देश के ३६,००० वैध और ३०,००० अवैध कत्लखानो मे कत्ल किये जाने वाले पशुओ की सख्या का अनुमान लगा सकते है। हैदराबाद से प्रचारित एक पोस्टर के अनुसार हमारे देश से वर्ष १९९१ मे १,००० करोड किलोग्राम मास का निर्यात हुआ तथा १० करोड रु के मूल्य का चमडा विदेशो को भेजा गया। फलस्वरूप दूध देने वाले पशुओ की सख्या उत्तरोत्तर कम होती गयी। वर्ष १९७१ मे यह सख्या ६६ करोड थी, १९८१ मे ५६ करोड हुई, तथा १९९१ मे यह सिर्फ ३८ करोड रह गयी। यह सरकारी ऑकडे है।

६५. एक वहुत वडी सख्या मे छोटे-वडे प्राणी, पेड-पौधे, जीव-जन्तु पर्यावरण के अत्यन्त अनिवार्य भाग हैं, इसलिए मनुष्य-द्वारा मारे जाने वाले मूक/वेजुबान पशु, कत्लखानो से उत्पन्न प्रदूषण, जनस्वास्थ्य के लिए खतरे, तथा अन्य कई सकट चिन्ता के विषय है। इस तथ्य को समझने के लिए अधिक प्रतिभा की आवश्यकता नही है कि पशु/जीव-जन्तु इस धरती पर अतिक्रमणकारी (एनक्रोचर्स) नही है, अत उन्हे मनुष्य के साथ सह-अस्तित्व मे वने रहने का सपूर्ण अधिकार है। इस तर्क के आगे कत्लखानो का अस्तित्व ओले-की-तरह पिघल जाता है।

६६. भारत-की-राजधानी मात्र दिल्ली मे प्रति माह लगभग ३ लाख मवेशी अर्थात् सालाना लगभग ३६ लाख मवेशी काटे जाते है। इतनी वडी सख्या मे होने वाली सुव्यवस्थित हिंसा मनुष्य और अन्य प्राणियो के वीच सवन्ध-निर्धारण के मुद्दे को पुरजोर प्रस्तुत करती है, इसलिए कत्लखाने 'यहा हो, वहा हो, यहा वने, वहा वने' यह प्रश्न गौण है, मुख्य सवाल असल मे यह है कि पशुओ/जीव-जन्तुओ और मनुष्यो के वीच क्या केवल हिंसा का ही रिश्ता सभव है, अथवा कोई कानूनन अहिंसक सवन्ध भी हो सकता है?

आहार' (फूड फॉर सर्वाइवल सेक) है या 'आहार के बहाने' (इन नेम ऑफ फूड) किया जा रहा है?

७२. भारत-की-राजधानी दिल्ली मे हर दिन १२,००० भैसे और भेड-बकरियो का वध होता है अर्थात् वर्ष-भर मे करीब ३६ लाख पशुधन कसाई-की-छुरी के तले आ जाता है। वर्ष १९८१ मे दिल्ली की आबादी ६२ लाख २० हजार ४०६ थी, अर्थात् प्रतिवर्ष दिल्ली-की-जनसख्या के १ ६७ वे हिस्से के बराबर पशुधन मौत के घाट' उतार दिया जाता है।

७३. चतुर्थ पचवर्षीय योजना के बाद आन्ध्रप्रदेश, दिल्ली, गोआ, केरल, कर्नाटक, पश्चिम बगाल, जम्मू और कश्मीर, तमिलनाडु और सिक्किम मे ९ मास निगमो की स्थापना की गयी। सातवी पचवर्षीय योजना मे वधशाला निगमो मे पूँजी-निवेश की योजना क्रियान्वित की गयी, जिसके अन्तर्गत श्रीनगर, बैगलोर, सिक्किम, और हैदराबाद मे आधुनिक कत्लखाने बनाये गये। श्रीनगर कत्लखाना परियोजना की कुल लागत ५९० लाख रुपये है, जिनमे-से भारत सरकार का हिस्सा १४५ ६५ लाख रुपये होगा। इसमे-से ४५ लाख रुपये दे दिये गये है। बैगलोर, और सिक्किम के कत्लखानो की कुल लागत क्रमश १४५ लाख रुपये, और ३४ लाख होगा। भारत सरकार सिक्किम को २५ लाख रुपये दे चुकी है। सिक्किम के कत्लखाने की कुर्सी (प्लिथ) तैयार है।

७४. सरकार द्वारा उत्प्रेरित कत्ल के अलावा कुछ निजी क्षेत्र है जो कत्ल मे रस ले रहे है। मेसर्स ब्रुकबॉड इडिया लिमि ने १०० प्रतिशत निर्यात-मूलक 'आधुनिक मास कारखाना' स्थापित किया है। माफको बम्बई भी 'माफको फैक्टरी बोरीवली (बम्बई)' मे डिब्बाबन्द मास उत्पादित करती है। नादेड और गोरेगॉव मे भैस-मॉस के लिए यन्त्र लगाये गये है। देश के विभिन्न हिस्सो मे ८ आधुनिक बैकन (सूअर का मॉस) फैक्ट्रियॉ है।

७५. माम-निर्यात के अलावा सउदी अरब, कुवैत और दुबई तथा अन्य खाडी देशो को मॉम के लिए जिन्दा पशु भेजे जाते है। मलेशिया को जमा-हुआ भैम-मास भेजा जाता है। वर्ष १९८८-८९ मे ११७ करोड रुपये का भैम-माम भेजा जाता था।

७६. मरकारी नीति, तथा मरक्षण-प्रयासो के बावजूद सरक्षित जीव-जन्तुओ की मूची हर दिन बढ जाती है। वन्य जीवो के लुप्त होने का खतरा

आहार' (फूड फॉर सर्वाइवल सेक) है या 'आहार के बहाने' (इन नेम ऑफ फूड) किया जा रहा है?

७२. भारत-की-राजधानी दिल्ली मे हर दिन १२,००० भैसे और भेड-बकरियो का वध होता है अर्थात् वर्ष-भर मे करीब ३६ लाख पशुधन कसाई-की-छुरी के तले आ जाता है। वर्ष १९८१ मे दिल्ली की आबादी ६२ लाख २० हजार ४०६ थी, अर्थात् प्रतिवर्ष दिल्ली-की-जनसख्या के १ ६७ वे हिस्से के बराबर पशुधन मौत के घाट उतार दिया जाता है।

७३. चतुर्थ पचवर्षीय योजना के बाद आन्ध्रप्रदेश, दिल्ली, गोआ, केरल, कर्नाटक, पश्चिम बगाल, जम्मू और कश्मीर, तमिलनाडु और सिक्किम मे ९ मास निगमो की स्थापना की गयी। सातवी पचवर्षीय योजना मे वधशाला निगमो मे पूँजी-निवेश की योजना क्रियान्वित की गयी, जिसके अन्तर्गत श्रीनगर, बैगलोर, सिक्किम, और हैदराबाद मे आधुनिक कत्लखाने बनाये गये। श्रीनगर कत्लखाना परियोजना की कुल लागत ५९० लाख रुपये है, जिनमे-से भारत सरकार का हिस्सा १४५ ६५ लाख रुपये होगा। इसमे-से ४५ लाख रुपये दे दिये गये है। बैगलोर, और मिक्किम के कत्लखानो की कुल लागत क्रमश १४५ लाख रुपये, और ३४ लाख होगा। भारत सरकार सिक्किम को २५ लाख रुपये दे चुकी है। सिक्किम के कत्लखाने की कुर्सी (प्लिंथ) तैयार है।

७४. सरकार द्वारा उत्प्रेरित कत्ल के अलावा कुछ निजी क्षेत्र है जो कत्ल मे रस ले रहे है। मेसर्स ब्रुकबॉड इडिया लिमि ने १०० प्रतिश निर्यात-मूलक 'आधुनिक मास कारखाना' स्थापित किया है। माफ बम्बई भी 'माफको फैक्टरी बोरीवली (बम्बई)' मे डिब्बाबन्द म उत्पादित करती है। नादेड और गोरेगॉव मे भैस-मॉस के लिए यन्त्र लगाये गये है। देश के विभिन्न हिस्सो मे ८ आधुनिक बैकन (सूअर का मॉस) फैक्ट्रियाँ है।

७५. मास-निर्यात के अलावा सउदी अरब, कुवैत और दुबई तथा अन्य खाडी देशो को मॉस के लिए जिन्दा पशु भेजे जाते है। मलेशिया को जमा-हुआ भैस-मास भेजा जाता है। वर्ष १९८८-८९ मे ११७ करोड रुपये का भैस-मास भेजा जाता था।

७६. सरकारी नीति, तथा सरक्षण-प्रयासो के बावजूद सरक्षित जीव-जन्तुओ की सूची हर दिन बढ जाती है। वन्य जीवो के लुप्त होने का खतरा

पहले ही मँडरा रहा है। पालतू पशुओ को खाने-पीने के लिए दिन-दहाडे/ बेरोकटोक मारा जा रहा है, किन्तु कुछ छोटे पशुओ, तथा अन्य प्राणियो को अखाद्य प्रयोजनो के लिए, प्रयोगार्थ, शृगार-प्रमाधनो के निमित्त, हड्डियो अथवा सीगो के लिए, मनोरजनार्थ तथा अन्य जाने-अजाने प्रयोजनो के लिए मारा जाता है। यह सब कत्लखानो से बाहर-के-कत्लखानो मे नि सकोच होता है। प्रश्न उठता है कि क्या देश मे प्रतिदिन कत्ल होने वाले पशुओ की सख्या का कोई अधिकृत आँकडा उपलब्ध है, ताकि यह अनुमान किया जा सके कि 'क्या यह सख्या पशु-जगत् की प्रजनन क्षमता की मर्यादा मे है या उसका लगातार उल्लघन हो रहा है?' ख्याल रखना होगा कि पशुओ-मे-सभोग पर तो प्रकृति का नियन्त्रण है, किन्तु मनुष्य की सभोग-वृत्ति पर कोई बन्धन नही है। पशुओ की आयु भी अधिक नही होती। कई प्रजनन-क्षमता-युक्त मादा पशुओ को भी मार डाला जाता है, जिसका कुल जागतिक प्रजनन पर विपरीत प्रभाव पडता है। बछडो आदि को भी मार डाला जाता है। 'वेल्थ ऑफ इडिया' मे इस सबन्ध मे कुछेक आँकडे उपलब्ध हैं।

७. सूचनाएँ है कि गत वर्ष (१९९१) मे १ लाख मवेशियो की तस्करी हुई, जिससे ७०० करोड रुपयो का मुनाफा हुआ। हिसाब लगाया गया है कि गाय, या बैल से प्राप्त जिस माँस की कीमत देश मे सिर्फ १,२०८ रु होती है, दुबई मे उसके १४ से १८ हजार रुपये आसानी से मिल जाते हैं। खाडी-देशो को नियमित माँस-निर्यात भी होता है।

८. गोवध निवारण अधिनियम-१९५५ मे हुए सशोधनो से पूर्व १५ वर्षीय अनुर्वर गाय-बैलो का कत्ल कानून की सीमा मे था— आज भी वह वैध नही है। सशोधित अधिनियम ने गाय की परिभाषा इतनी विस्तृत कर दी है कि अब उसके अन्तर्गत बैल और बछडे भी आ गये है। मवेशी-तस्करो के लिए यह वरदान है, क्योकि बछडे के माँस की कीमत सामान्य गोमास की तुलना मे दुगनी मिलती है। 'इडिया टुडे' (३१ जुलाई १९९२) की एक खोजी रिपोर्ट के अनुसार राष्ट्रीय राजमार्ग न३२ स्थित सैयद राजा एक ऐसा केन्द्र है जहाँ से मध्यपूर्व को गोमास भेजा जाता है। रिपोर्ट मे कहा गया है कि मध्यपूर्व को हर दिन ३,००० क्विटल माँस भेजा जाता है। राजस्थान, हरियाणा, पजाब और उतरप्रदेश से लगभग ५,००० ट्रके सैयदराजा से पशुओ को ले कर गुजरती है।

७९ 'हिन्दुस्तान टाइम्स' (जुलाई ५, १९९२) मे प्रकाशित अमितासिंह के एक लेख के अनुसार कत्ल की जाने वाली पशु-प्रजाति मे भैस/गोवश ही मुख्य है, किन्तु प्राप्त तथ्यो के अनुसार ऊँट, जिसे 'रेगिस्तान-का-जहाज' कहा जाता है, और जिसके बगैर विशाल राजस्थान नहर का निर्माण सर्वथा असभव था, को भी कत्ल के लिए कर्नाटक और आन्ध्रप्रदेश भेजा जाता है। बताया गया है कि भेड-बकरियो की कत्ल-दर ३५ से ४० प्रतिशत है, जो ऐसे देश के लिए जहाँ चारागाही यायावर (खानबदोश/नोमेड्स) की सख्या कुल जनसख्या की ७ प्रतिशत है और जहाँ महिला-प्रधान कुटीरोद्योग इन्ही पशुओ पर आश्रित है, दुश्चिन्ता का विषय है।



८०. एक सर्वेक्षण के अनुसार सूअरो की कत्ल-दर इतनी गगन-चुम्बी है कि उनकी देशी नस्ल लगभग खत्म होने को है। इसी तरह यूरोपवासियो को स्वादिष्ट खाद्य मुहैया कराने के लिए प्रतिवर्ष १० करोड मेढक मारे जाते है। यह सब कत्लखानो-से-बाहर-के-कत्लखानो मे घटित होता है।

८१. २० दिसम्बर १९९२ के 'टाइम्स ऑफ इडिया' ने कछुए के अस्तित्व-शेष होने की ओर ध्यान आकर्षित किया है। कछुए पर्यावरण का एक अभिन्न भाग है। जलीय अधिवास को साफ-सुथरा रखने, शैवाल को नियन्त्रित करने, तथा मनुष्य-सहित कई जलीय/भू-तलीय प्राणियो की खाद्यपूर्ति करने मे उनकी एक विशिष्ट भूमिका है। कई कारणो से कछुए की मूल

आबादी पर गभीर प्रभाव पडा है, किन्तु मबमे बडी वजह बगाल मे कछुआ-माम की बढती माँग है। कछुए-जैसे निरीह-मूक प्राणी भी अब कमाई-की-छुरी-तले आ गये है, और उनकी आबादी पर भी खतरे की तलवार लटक गया है।

पजाब के डेगबस्मी ग्राम (जिला-पटियाला) मे एक ऐमा कत्लखाना बनाया जा रहा है, जिमका तमाम मरजाम (मामग्री) 'टर्नकी' (जेलर पद्धति) आधार पर न्यूजीलैड की एक फर्म भेजेगी। तैयार होने पर यह कत्लखाना पश्चिम एशिया, दक्षिण एशिया, उत्तर आफ्रिका मलेशिया, मिश्र, यूएई आदि को प्रतिवर्ष १०,००० टन अस्थि-रहित माम का निर्यात करेगा। कत्लखाने का पेट भरने के लिए प्रतिवर्ष लगभग १००,००० स्वस्थ भैमे काटी जाएँगी।

महाराष्ट्र मरकार ने देवनार (बम्बई) मे ८-८ घटो की पाली मे चलने वाला एक आधुनिक कत्लखाना स्थापित किया है, जिमकी प्रति चैन (जजीर) २,००० पशुओ की वध-क्षमता है। कत्लखाने मे तीन चैने (जजीरे) है। इमके अलावा फर्श-मे-हट कर (ऑफ फ्लोअर मिस्टम) द्वारा ४०० मे ६०० तक बडे पशु भी प्रतिदिन काटे जाते है।

दिल्ली की आबादी अब ८५ लाख, या इसमे कुछ अधिक ही हो गयी है। सम्प्रति 'दिल्ली कत्लखाने' मे औमतन लगभग ८,००० भेड-बकरियाँ और करीब २,००० भैमे प्रतिदिन काटी जाती है। यह कत्लखाना न मिर्फ नगर के मामाहारियो की जरूरते पूरी करता है, अपितु निर्यात-व्यापार के लिए भी माम उपलब्ध कराता है।

१७ मार्च १९९२ को वाणिज्य उपमन्त्री की अध्यक्षता मे मपन्न एक अन्तर्मन्त्रालयीन बैठक की कार्रवाई मे दर्ज किया गया कि भारत मरकार एक ममन्वित कत्लखाने की स्थापना के लिए उपयुक्त स्थल का चुनाव करे जहाँ माम की घरेलू तथा निर्यात-मबन्धी आवश्यकताओ की पूर्ति की व्यवस्था की जा सके। मरकार ने दिल्ली प्रशामन को कत्लखाने के ममय-बद्ध निर्माण के आदेश दिये है। २९ अप्रैल १९९२ को हुई बैठक मे पुन कहा गया कि उक्त ममन्वित/आधुनिक कत्लखाने को अविलम्ब स्थापित किया जाए।

६ कृषि-खाद्य तथा ममाधित खाद्य उत्पाद निर्यात प्राधिकरण (अपेडा) के अध्यक्ष ने बताया है कि दिल्ली मे होने वाले कच्चे प्रशीतित माम के निर्यात का ३०-४० प्रतिशत निर्यात दिल्ली कत्लखाने मे होता है, अत

दिल्ली-के-सीमान्त-क्षेत्र मे एक सपूर्णत पर्यावरण-सगत कत्लखाना बनाया जाए, ताकि निर्यात-व्यापार की जरूरते पूरी की जा सके।

८७. दक्षिण भारत की मशहूर फिल्म तारिका अमला नक्कर भारतीय कत्लखानो की दिल दहलाने वाली बीभत्मता पर जल्दी ही एक डाक्यूमेंट्री फिल्म बनाने वाली है, किन्तु इस बीच वे अत्यन्त धैर्यपूर्वक अन्य तौर-तरीको से पशुओ पर होने वाले सत्रास को कम करने-कराने की कोशिश करती रहेगी। सम्प्रति वे हैदराबाद-स्थित ब्लू क्रॉस सोसायटी की सचिव है, और कुत्तो के साथ होने वाले क्रूर बर्ताव को कम कराने मे लगी है।

८८ कत्लखानो के इस रहस्य को बहुत कम लोग जानते है कि जब वहाँ के फिसलन-भरे फर्श पर कत्ल के लिए ले जाए जाते पशुओ को घसीटा जाता है तब उनके भीतर का तमाम आतक, त्रास, और क्रोध प्रकट हो पडता है। आतक और खौफ की यह पराकाष्ठा पशु-रक्त मे एक शक्तिशाली जैव-रासायनिक (बायो-केमिकल) कारक (एजेट) 'एड्रेलिन' को पूरे शरीर मे प्रवाहित कर देती है। उक्त कारक, पशु-वध के बाद उसके मास मे बच रहता है, और मास को विषाक्त बना देता है।

८९ जापान, आयरलैण्ड, फ्रास, पौलैड, और इण्डोनेशिया मे प्रत्येक रविवार, सीरिया, अरब मे हर शुक्रवार, आस्ट्रिया, और जर्मनी मे हर शनिवार और रविवार, पाकिस्तान मे प्रत्येक मगलवार और बुधवार, तथा श्रीलका मे प्रतिपदा, अष्टमी, अमावस्या, और पूर्णिमा को कत्लखाने बद रखे जाते है।

९० कत्लखाने अन्तर्विरोध की एक अबूझ पहेली है। वे ऐसे तमाशे है जो दमन और असत्य की नीव पर खडे हुए है। मास-उद्योग म जागरूकता, विवेक, सवेदनशीलता, और मानवीयता निषिद्ध शब्द है। वहाँ निष्ठुरता, क्रूरता, रक्तपात, बर्बरता, शोषण, असत्य तथा हिसा स्वीकृत शब्दावली है।

९१. पश्चिम प्रभाव के कारण कत्लखाने (मास-उद्योग) पशुओ को निर्जीव यन्त्र (मशीन) मान कर चलते है, किन्तु भारतीय सस्कृति मे इस विचार की प्रतिष्ठा नही है। सच्चाई यह है कि जब पशु मनुष्य की सेवा कर चुके अथवा विकलाग या वृद्ध हो पडे तब मनुष्य की बारी आती है कि वह उसकी सेवा करे। यह भारतीय परम्परा है, करुणा की विरासत है, किन्तु जब हम किसी पशु को मात्र एक मशीन मान लेते है और

पाते है कि वह निकम्मा, और अनुपयोगी हो गया है, तब उसे कत्लखानो को सौंप देते हैं। कत्लखानो का यह नीतिशास्त्र पश्चिम के लिए भले ही सार्थक हो, किन्तु भारत के जन-जीवन से एकदम असगत और अयुक्तियुक्त है।

- इडियन स्टैण्डर्ड्सब्यूरो (भारतीय मानक प्रभाग) ने कत्लखानो मे स्वच्छता के रख-रखाव, वध्य पशु की वध-पूर्व (एटी-मोर्टेम) तथा वधोत्तर (पोस्टमोर्टेम) जाँच, मास और पशुओ के यातायात के सबन्ध मे अनेक मानक निर्धारित किये हैं ये हैं– १ आईएस १९८२ १९७१ (वध्य पशुओ, मीट एनीमल्स) के वध-पूर्व/वधोपरान्त निरीक्षण के क्रियान्वयन की सहिता – प्रथम पुनरीक्षण)। २ आईएस ७०५३ १९७३ (छोटे पशुओ के मास की बिक्री के लिए लगाये जाने वाले स्टॉल की मूलभूत आवश्यकता)। ३ आईएस ८७०० १९७७ (बडे पशुओ के मास की बिक्री के लिए लगाये जाने वाले स्टॉल की बुनियादी ज़रूरत)। ४ आईएस ८८९५ १९७८ (कत्लखाने के उप-उत्पादो की साल-सँभाल, उनके सग्रहण एव यातायात के लिए मार्गदर्शन)। ५ आईएस ४१५७ (पीटी २) १९८३ (पशुओ के यातायात की नियमावली भाग-२/पशुओ के रेल या सडक मार्ग से लाने-ले जाने की नियमावली – प्रथम पुनरीक्षण)। ६ आईएस ४१५७ (पीटी ३) १९८३ (पशुओ के यातायात की नियमावली/भाग-३, भेड-बकरियो का रेल/सडक से लाना-से-जाना – प्रथम पुनरीक्षण)। ७ आईएस ५२३६ १९६२ (सूअरो के रेल/सडक यातायात की नियमावली – प्रथम पुनरीक्षण)। ८ आईएस ४३९३ १९७९ (कत्लखानो की मूलभूत आवश्यकता– प्रथम पुनरीक्षण)। ९ आईएस १३०६१ १९९१ (मास तथा मास-उत्पादनो मे सालमोनेला का पता लगाना, सदर्भ पद्धति)। १० आईएस ६६२८ १९७२ (कत्लखानो मे फिसल-पटरियो का उपयोग)। ११ आईएस ६७८२ १९७२ (हॉग गेम्बिल्स)। आईएस ६९५० १९७३ (पिग हुक्स)। १३ आईएस ७८९१ १९७३ (अखाद्य सडे-गले मास को ढोने वाली ट्रॉलियाँ)। १४ आईएस ७९०९ १९७५ (सूअर को दिये जाने वाले विद्युत् आघात के लिए काम मे लाने वाली सडासियाँ)। १५ आईएस ११५३३ १९८५ (भेडो के लिए ड्रेसिंग हुक)। १६ आईएस ११६३१ १९८५

(भेड-बकरियो के लिए दुढालू छते)। आईएस १२१८७ १९८७ (भेड-विस्तारक/शीप स्प्रेडर)। १८ आईएस १२१९० १९८७ (भेड-रक्तस्रावी बन्धन)। १९ आईएस १२४८६ १९८८ (मास-निरीक्षण मेज)। २० आईएस १२४८७ १९८८ (छोटे पशुओ के सडे-गले मास की साल-सँभाल की मेज।

नि सदेह यदि कत्लखानो मे उक्त मानको का दृढतापूर्वक अक्षरश पालन कराया जाए तो देश के आधे से अधिक कत्लखाने बद कर देने होगे। राज्य सरकारो को चाहिये कि वे कत्लखानो से सबन्धित निरीक्षको को कठोर निर्देश दे।

९३. ताजा आँकडो के अनुसार देश मे ३६,०३१ सार्वजनिक कत्लखाने (पब्लिक स्लॉटर हाउसेज) है, जिनमे-से ५ आधुनिकतम, २ कत्लखाना-मास-ससाधन-समन्वित कारखाने (जिनमे मुख्यत भैसो का कत्ल होता है।), तथा २४ निर्यातोन्मुख मास-इकाइयाँ है।

९४. विपणन एव निरीक्षण निदेशालय (डीएमआई) के वरिष्ठ अधिकारियो के अनुसार मास-निर्यातको से हुए कतिपय नये गठबन्धनो से मास की गुणवत्ता पर नियन्त्रण रखने वाली धाराएँ शिथिल कर दी गयी हैं ताकि भैस-के-मास मे गो-मास की मिलावट की जा सके। विश्वसनीय सूत्रो के अनुसार इस कानूनी शिथिलता से सरकारी राजस्व मे २० करोड रुपयो का नुकसान हुआ है।

९५. मास-निर्यात के जीवाणुगत मानको (बैक्टीरियालॉजिकल स्टैण्डर्ड्स) को काफी शिथिल कर दिया गया है। पूर्व नियम के अनुसार एस्चीरिकिया कोली का प्रति ग्राम गणकाक (काउट) १०० था, किन्तु अब इसे १,००० कर दिया गया है। इस शिथिलन से पशु-वध को बढावा मिला है।

९६. अल-कबीर एक्सपोर्ट लिमि का लक्ष्य प्रतिवर्ष १५,००० टन जमा हुआ भैस-मास तथा ३,००० टन से अधिक गोमास/अन्य मास निर्यात करने का है। कम्पनी इस विपणन से १२४ करोड रुपये कमाना चाहती है, जिसके फलस्वरूप सरकार को ६० करोड रुपयो की विदेशी मुद्राएँ प्राप्त होगी, किन्तु देशवासियो को शायद यह नही मालूम है कि इससे देश को कई हजार करोड रुपयो की पशु-सपदा का नुकसान होगा, विशेषत उस पशु-सपदा का जिससे सकल राष्ट्रीय उत्पाद (जीएनपी)



पशुओ के सामूहिक कत्ल का एक खौफज़दा दृश्य। देखे, किस तरह जुल्म ढाने वाले लोग गिद्धो की मानिंद टूट पडते है बेज़बाँ-निरीह पशुओ पर!!

महाजनम् के सौजन्य मे



कुछ पशुओ का कत्ल हो चुका है, कुछ का जारी है। कत्ताल (वधिक) अपनी खून-मे-सनी-छुरी से उनकी खाल उतारने मे लगे हैं। एक गाय की टाँगे काट दी गयी हैं। एक कत्ताल उसकी पूँछ दबाये हुए है, दूसरा बडी बेरहमी से उसकी खाल उतार रहा है। यह है हमारा देश जहाँ कभी दूध-की-नदियाँ बहा करती थी, और अब जहाँ खून-का-दरिया थम नही पा रहा है।

महाजनम् के सौजन्य से



अहिंसा की इस शस्यश्यामला धरती पर जिन्दगी के साथ बेजान जिन्स की तरह का सुलूक होता है — यहाँ जीवन का अब मूल्य ही क्या रह गया है?
केअर नई दिल्ली के सौजन्य से



सब ओर बकरे-बकरियो के सरो के 'पहाड' दिखायी दे रहे हैं। पढे, इनकी सतप्त आँखो मे वह महाप्रलय जो जल्दी ही इसान की इस हिंसक/कत्ताल तहज़ीब को राख-के-ढेर मे बदल देगा। आज पैसे ने परमेश्वर की जगह ले ली है, किन्तु याद रहे कुदरत इसान के इस कुकृत्य को कभी माफ नहीं करेगी।

केअर नई दिल्ली के सौजन्य से

क्रूरता – पराकाष्ठा है इसकी यह!! कसाई के दो क्रूर/ज़ालिम हाथ तसले मे गलनस से गर्म लहू इकट्ठा कर रहे हैं। इसके वाद यही हाथ उतारेंगे खाल और ससाधित करेंगे गोश्त, देश की पाँच सितारा होटलो के लिए।



यह है एक वेकस-वेकसूर गाय। एक दरिंदा इसान एक हाथ से इसकी पूंछ दबाये हुए है, और दूसरे से गलझालर। एक अन्य कसाई गाय की गलनस (जेगुलर वीन) से लहू की धार निकाले हुए है। कैसी वेकमी है – टाँगे वँधी हैं, पूंछ खिंची है – क्या इस गौ-माता की आँख मे आप आने वाले किसी प्रलय की आहट नही सुन रहे हैं?

एक हाथ मे
की टाँगे हैं, अ
दूसरा उसके
नोच रहा है। फि
जमी पर दूध
नदियाँ बहती
उसी पर आज
के कतरे और गो
के छीछडे पडे हैं।

लहू से यह तसला — लगता है अपनी मौत-के-मुंह मे रवाँ है मुल्क।।

का १० प्रतिशत बनता है। पशुओ का कत्ल करने की दो कसौटियाँ है— उनका विकलाग होना, अथवा बीमार होगा।

• यदि हम भारतीय भेडो को मास के लिए मारने की जगह उनकी ठीक से देख-भाल करे तो उनसे प्रतिवर्ष ४५० करोड रुपये मूल्य का खाद, ४० करोड रुपयो का ऊन, और ५०० करोड रुपयो जितना दूध प्राप्त कर सकते है, किन्तु हम उन्हे मास की खातिर मार कर २७ करोड रुपये मूल्य का ऊन विदेशो से मँगाते है, और हजारो बुनकरो की रोटी-रोज़ी छीनते है।

• भारत सरकार द्वारा मास-उद्योग के विकास के लिए नियुक्त विशेषज्ञ-समिति के अध्यक्ष एन एस स्वामी ने भारतीय सस्कृति को बाला-ए-ताक रख कर कत्ल-से-पूर्व, वध्य पशुओ को मूर्च्छित करने के लिए भारतीय कत्लखानो को ५ करोड रुपयो के मूल्य की 'केप्टिव्ह बोल्ट पिस्तौले' देने की सिफारिश की है।

श्री बी के टिकदर ने अपनी बहुमूल्य कृति 'वाइल्ड लाइफ ऑफ इण्डिया' (भारत मे वन्य जीवन) मे स्व प्रधान मन्त्री प जवाहरलाल नेहरू का यह महत्त्वपूर्ण कथन दिया है कि 'मैं आश्चर्य-चकित हूँ कि ये पशु और पक्षी जिन्हे यदि सयोगवश सोचने-बोलने की क्षमता मिल जाए तो मनुष्य के बारे मे क्या सोचेगे, और उसके बारे मे क्या बयान देगे? मुझे सदेह है कि उनका बयान मनुष्य के प्रति सद्भावनापूर्ण होगा। हमारी (गौरवशाली) सस्कृति और सभ्यता के बावजूद मनुष्य न सिर्फ बर्बर बना हुआ है, अपितु जिन्हे हम वन्य पशु कहते है, उनसे भी अधिक खतरनाक है। स्व पण्डितजी की यह टिप्पणी भारतीय क्षितिज पर तेज़ी से करवट ले रही कत्लखाना-सस्कृति पर एक करारा तमाचा है।

०० 'अल-कबीर एक्सपोर्ट्स लिमिटेड' के यान्त्रिक कत्लखाने 'आधुनिक खाद्य ससाधन योजना' (मार्डन फूड प्रोजेक्ट) जैसी मगलभाषी शब्दावली का इस्तेमाल कर भारतीय नागरिक की सास्कृतिक ठगी कर रहे है। वे अत्यन्त कपटपूर्ण शैली मे हजारो निरीह पशुओ का क्रूर, और घृणित कत्ल कर विदेशी मुद्रा अर्जित करने के नाम पर सरकारी खेमो से शाबाशी प्राप्त कर रहे है।

□□

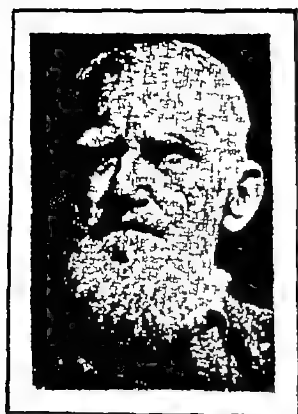
कत्लखाना-तहज़ीब हिन्दुस्तानियों को नंगा-भूखा रख कर गोरो के तन-बदन पर अधिक चर्बी चाहती है

☐ मैकडॉनॉल्ड, केंटुकी फ्राइड चिकन, टाटम फार्म्स, विम्पी, वेडी इत्यादि बहुराष्ट्रीय कपनियाँ भारत मे अपने पॉव जमा रही हैं, इस तरह दुनिया के गरीब देशो को अधिकतम खाद्य-निर्यात के लिए अपने खूनी शिकजे मे कस रही है। खयाल रहे, मैकडॉनॉल्ड का, साम्राज्यवाद से सीधा सबन्ध है। **यह कपनी काले लोगो को अधिक गरीब और भूखा रखना चाहती है तथा गोरो के बदन पर अधिक चर्बी चाहती है।** इस तथ्य को जान कर आप स्तब्ध रह जाएँगे कि पशुओ को जो १४ करोड ५० लाख टन अनाज, और सोया खिलाया जा रहा है, उसमे-से प्रतिवर्ष सिर्फ २ करोड १० लाख टन मास उत्पादित होता है अर्थात् २० अरब अमरीकी डॉलर मूल्य का १२ करोड ४० लाख टन अनाज प्रतिवर्ष नष्ट हो जाता है। उपर्युक्त धनराशि से विश्व की सम्पूर्ण आबादी को एक वर्ष के लिए खाना, कपडा और मकान उपलब्ध कराये जा सकते है। यह है भयावह कत्लखाना-तहज़ीब जिसे हमारी सरकार बहुराष्ट्रीय कपनियो के षड्यन्त्र मे शक्ल देने मे लगी है।

☐ याद रखे जब भी आप 'बिग मैक' को कुतर रहे होते है, तब आप 'मैकडॉनॉल्ड साम्राज्य' द्वारा इस ग्रह (प्लेनेट) को सर्वनाश की ओर धकेल रहे होते है। मैकडॉनॉल्ड उत्पादो मे वसा, शकर, मास, और सोडियम (नमक) होते है, जो छाती और ऑत के कैंसर तथा हृदय-रोग के प्रमुख कारण बनते है।

☐ मैकडॉनॉल्ड का 'मीनू' (आहार-सूची) पूरी तरह मास पर आधारित है, इसका मतलब है कि वह पशुओ की पैदाइश, परवरिश, और कत्ल केवल 'मैकडॉनॉल्ड-उत्पादो' के लिए करता है।

☐ सरकार ने काफी सोच-विचार के बाद मैकडोनाल्ड को भारत मे रेस्त्रॉ-शृखला खोलने की अनुमति दी है, जहॉं वे मास, मुर्गी, मछली, दूध, सब्जी, अनाज के बने खाद्य पदार्थ बेचेंगे। –१३ १२ १९९३, डॉ ओ एम सिह, उपायुक्त (महाराष्ट्र/मध्यप्रदेश) भारत सरकार खाद्य प्रोसेसिंग उद्योग मन्त्रालय, पचशील भवन, सेलगाव मार्ग नई दिल्ली-११० ०४९।



हम है कत्ल किये गये जानवरों
की
जिन्दा कब्रे
उन जानवरो की
जिन्हे हमने अपनी भूख मिटाने
के लिए
कत्ल के घाट उतारा।
यदि मनुष्य की तरह
पशुओ को भी अधिकार
होते कभी तो....?

—जॉर्ज बर्नार्ड शॉ

नई दिल्ली ईदगाह क़त्लखाने से रोजाना निकलने वाला १३ हज़ार लीटर खून यमुना नदी मे ही नहीं बहता बल्कि बडी-बडी दवा-कपनियाँ टॉनिक बनाने के लिए उस खून का कतरा-कतरा खरीद लेती है। कत्लखाने मे काटे जाने वाले पशुओ के रक्त का यह इस्तेमाल एक लम्बे अर्से से होता आ रहा है।

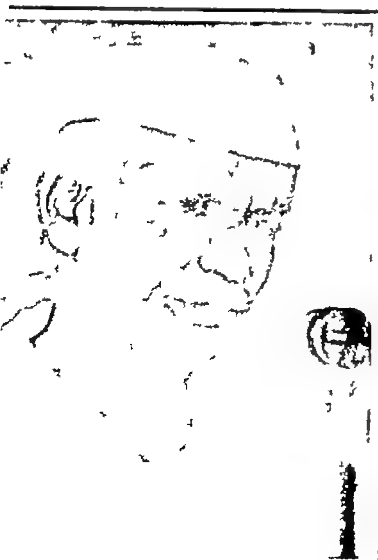
खासतौर पर गर्भवती महिलाओ के लिए पशुओ के खून से बनने वाला 'डेक्सोरेज' टॉनिक बहुत लोकप्रिय है। खून ही नहीं, काटे गये पशुओ के तक़रीबन हर अग का इस्तेमाल टूथपेस्ट, सरेस, फेवीकोल, चीनी के बर्तन, सनमाइका, इसुलिन इजेक्शन इत्यादि के बनाने मे होता है।

एक तथ्य यह भी है कि क़त्लखाने के कसाई खून बेच कर होने वाली कमाई को 'हराम' मानते है और इसीलिए इस आमदनी से ईदगाह के पास ही एक मुफ्त दवाखाना चलाया जाता है।

—ताहिरखान, 'सरेराह' पाक्षिक, अजमेर, २२ ४ १९९४

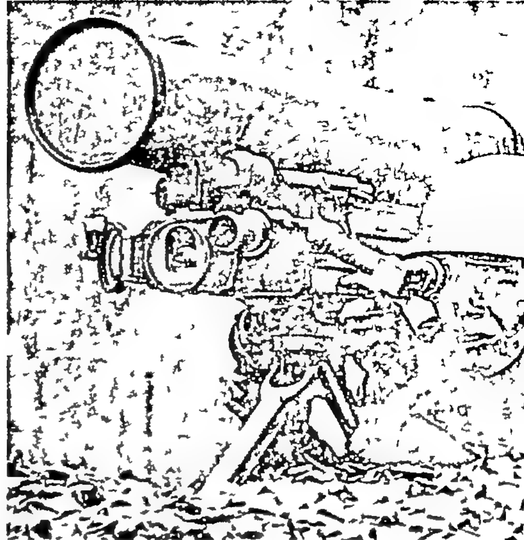


"मैं कसाईखानो को बिलकुल नापसद करता हूँ। मैं जब कभी किसी बूचड़खाने के पास से गुज़रता हूँ, मेरा दम घुटने लगता है — वहाँ कुत्तो का झपटना और चील-कौओ का मँडराना घृणास्पद लगता है। पशु हमारे देश के धन हैं। इनके ह्रास को मैं कदापि पसद नही करता। सरकार ने लाहौर मे जो कसाईखाना खोलने का निश्चय किया है, मैं उसका घोर विरोध करता हूँ। इसके विरोध मे देशवासी जो भी कदम उठायेंगे, मैं उनके साथ रहूँगा।' और प्रबल जन-विरोध के आगे विदेशी सरकार को घुटने टेकने पडे थे तथा प्रस्तावित योजना को रद्द करना पडा था।



आप क्या सोचते हैं कि जब पशुओ को बर्बरतापूर्वक नोचा, घसीटा या म जाता है, तब दुनिया मे कुछ भी घटित नही होता? होता है, किन्तु हम उस समीक्षा से घबराते है। वैज्ञानिक आइन्स्टाइन की पीडा-तरगो की विश (ईपीडब्ल्यू) की जानकारी हमे नहीं है, किन्तु यह तय है कि कत्लखानो के जन्य से उठने वाली तरगो का जो विश्लेपण हुआ है और संपूर्ण प्रक्रिया पर जि तर्क-सगत ढग मे विचार हुआ है, वह भावनात्मक न हो कर अत्यन्त वैज्ञानिक ढं कत्लखानो से प्रवाहित क्रूरता-तरगे पूरे विश्व मे व्यापती न हो, ऐसा कभी हो ह नही सकता। यह इन्ही तरगो का नतीजा है कि भावनात्मक रूप मे आज हमारा समाज बर्बरताओ और क्रूरताओ की भयानक गिरफ्त मे है और दुनिया जगह-जगह भूकम्प आने लगे हैं। हमारे देश मे जब-जब हिसा और क्रूरता का विस्तार हुआ है, धरती काँपी है और उसने हिसा को पूरी तरह नकारा है। ब्रह्माण्ड अथवा पृथ्वी ने कभी हिसा/बर्बरता को बर्दाश्त नही किया – उसने सदैव इस पर असहमति के हस्ताक्षर ही किये है।

–डॉ नेमीचन्द





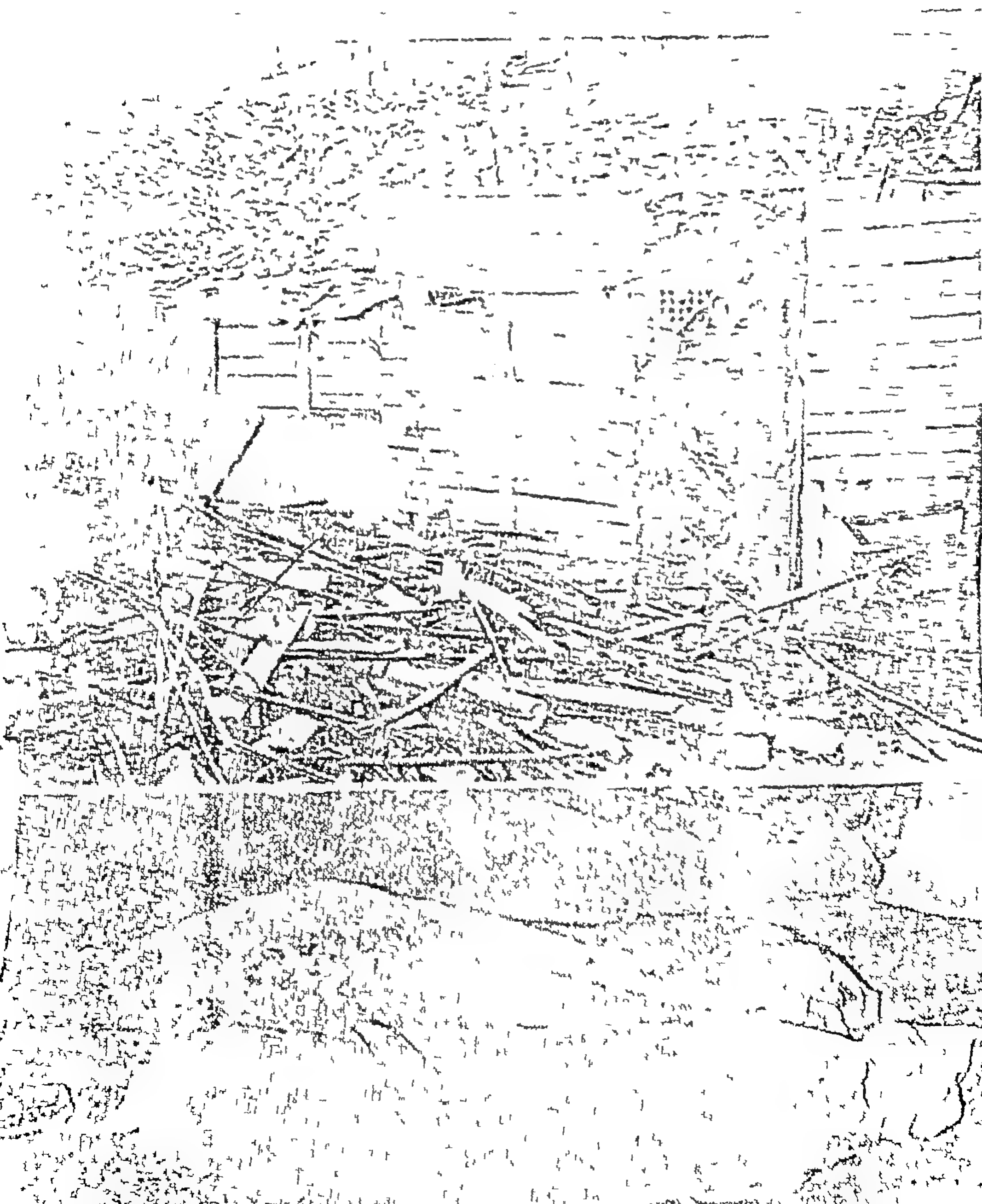


भूकम्प की वजह

. युद्ध, क्रूरता, हिंसा, हत्या

डॉ. नेमीचन्द

दुनिया का ऐसा कोई घाव, जख्म, या प्रहार नहीं है, जिसकी प्रतिक्रिया न होती हो। घाव फिर चाहे वह आदमी के जिस्म पर हो या किसी पशु-पक्षी के शरीर पर उसका प्रभाव दुनिया पर न हो यह असंभव है।



भूकम्प की वजह

कत्लखाने, युद्ध, क्रूरता, हिंसा, हत्या

डॉ नेमीचन्द

हीरा भैया प्रकाशन इन्दौर मध्यप्रदेश





भूकम्प की वजह डॉ नेमीचन्द, © हीरा भैया प्रकाशन, प्रकाशन - हीरा भैया प्रकाशन, ६५ पत्रकार कालोनी, कनाडिया मार्ग, इन्दौर- ४५२ ००१, मध्यप्रदेश, मुद्रण - नईदुनिया प्रिन्टरी, बाबू लाभचन्द छजलानी मार्ग, इन्दौर - ४५२ ००९, आवरण देवकृष्ण लाम्बोले, शा मीठालाल हीराणी [अशोककुमार, घीसुलाल, महेन्दर कुमार, वीमल कुमार, मुकेश कुमार (सुपुत्र), आशीश, पीयुस, रोहीत (पौत्र), श्री उकचंदजी हीराणी (पिताश्री)], रेवतडा (राजस्थान), एव श्रीमती चन्दाबाई सुजानमल जैन (प्रदीप बस रानापुर) के आर्थिक सहयोग से अल्प मूल्य मे प्रकाशित, प्रथम बार जून - १९९७, द्वितीय बार अक्टूबर २०००, मूल्य - पाँच रुपये।

81-85760-54-3 अन्तर्राष्ट्रीय मानक पुस्तक सख्या ८१-८५७६०-५४-३

क्यों आते हैं भूकम्प?

सामान्यत भूकम्प धरती की सतह पर उसके गर्भ मे घटित चट्टानी अथवा ज्वालामुखीन तब्दीली को कहा जाता है। इस सबन्ध मे पौराणिक कल्पनाओ के अलावा कई भौतिकी-उपपत्तियाँ भी है। सन् १८५६ के आसपास भारतीय भूकम्पो के अध्ययन-अनुसन्धान का सिलसिला शुरू हुआ। डब्ल्यू टी ब्लैडफोर्ड, फ्रान्सिस फेडन, एड्युअर्ड स्यूस, अल्फ्रेड वेजनर, टी ओल्धम तथा आर डी ओल्धम ने इस क्षेत्र मे अपूर्व योगदान किया। चार्ल्स फ्रान्सिस रिक्टर ने भूकम्पी तीव्रता मापने के लिए एक पैमाना (स्केल) विकसित किया, जिसे उनके नाम से 'रिक्टर स्केल' के रूप मे जाना गया।

वस्तुत भूकम्पी तरगो के अध्ययन ने वैज्ञानिको को धरती के आन्तरिक गठन को समझने मे बडी मदद की। इन तरगो को प्राथमिक तथा द्वितीयक दो श्रेणियो मे बाँटा गया और विश्व के तमाम भूकम्पो का बारीकी से अध्ययन किया गया, किन्तु इस तथ्य की एक आम आदमी ने अनदेखी कर दी, कि किसी भी कार्य या प्रभाव की सिर्फ एक ही वजह नही होती, बल्कि कई वजहे हो सकती हैं। उसने वैज्ञानिको के सिर्फ भौतिकी-सबन्धी निष्कर्षो को मान लिया शेष निष्कर्ष, या उपपत्तियाँ या तो उस तक पहुँची नही या उस तक पहुँचायी नही गयी।

भूकम्पो की भी यही स्थिति है। उनके आने का सिर्फ एक ही कारण नही है, या हम जिन कारणो को जानते है, उतने ही नही है, बल्कि अनेक कारण है, जिनका आगे चल कर पता लगेगा - लग सकता है। विज्ञान की विशेषता है कि वह कभी भी किसी भी स्थिति मे किसी अध्ययन या खोज को अन्तिम नहीं मानता और भावी सभावनाओ के लिए अपने द्वार प्रतिक्षण खुले रखता है।

भूकम्प को ले कर जो अध्ययन हुए है, जब हम उनकी क्रमबद्ध समीक्षा करते है, तब पता चलता है कि वे इकतर्फा है, उनमे मात्र पार्थिव या भौतिक स्थितियो पर विचार किया गया है तथा उन स्थितियो की अनदेखी कर दी गयी है, जो भौतिकी के इलाके से बाहर निकल गयी है, या उसके लिए विजातीय है। वर्ष १९९५ मे दिल्ली विश्वविद्यालय के तीन अध्येताओ डॉ मदन मोहन बजाज, एम एस एम इब्राहिम तथा विजयराजसिंह ने सूजडल (रूस) मे चट्टानों मे **वधशाला-जनित भू-रेखिक प्रत्यस्थ पीडा-तरगों के पारस्परिक प्रभाव** (इटरएक्शन ऑफ अबेटॉयर-जेनरेटेड नॉन-लीनियर इलास्टिक पैन वेव्ह्ज इन रॉक्स) पर प्रयोगशाला मे प्रयोग किये। उन्होंने **दुनिया के सामने एक नयी उपपत्ति प्रस्तुत की और अत्यन्त आश्वस्त भाव से स्थापित किया कि भूकम्पो की वजह हिंसा, हत्या, क्रूरता, कत्लखाने और युद्ध हैं, यदि इन्हें बद या कम कर दिया जाए तो वे या तो सीमित हो जाएँगे या उनकी तीव्रता मद पड जाएगी।**

उनकी यह उपपत्ति (तर्क) काल्पनिक नही है, बल्कि उन तमाम वैज्ञानिको का समवेत निष्कर्ष है, जो इन तीनो से पहले भूकम्प की प्रक्रिया के प्रति लगातार सजग और चिन्तित रहे है।

महान् वैज्ञानिक अल्बर्ट आइस्टाइन के नाम पर जिन 'पीडा-तरगो' का अभिहित किया गया है, हम किसी भी हालत मे उनकी उपेक्षा नही कर सकते। आइस्टाइनी पीडा ससार की पीडा की **सर्वोच्च तीव्रता है, जो तब अस्तित्व ग्रहण करती है, जब पशु-पक्षियों अथवा किसी भी जीवधारी का बूचड या कसाई खाने मे कत्ल किया जाता है।** इस दृष्टि से इन तीन वैज्ञानिको द्वारा अक्टूबर १९९५ मे लिखी नयी किताब 'ईटिओलॉजी ऑफ अर्थक्वेक्स - ए न्यू अप्रोच' (भूकम्पो का कारण - विज्ञान एक नयी व्याख्या) भूकम्प-विज्ञान के क्षेत्र मे एक नवीन अध्याय उघाडती है। इस बहुमूल्य कृति मे इन वैज्ञानिको ने जो कुछ कहा है यदि उसकी अनदेखी की गयी, या वाणिज्यिक, राजनैतिक अथवा अन्य किन्ही कारणो से उनका विशेषज्ञो द्वारा वस्तुनिष्ठ परीक्षण नहीं कराया गया तो इसके जो भी नतीजे निकलेगे उनके लिए सरकार उत्तरदायी होगी। जब देश के कई हिन्दी-अंग्रेजी समाचार-पत्रों ने, इन निष्कर्षो को रेखांकित किया है, तब एक ऐसी युगान्तरकारी निष्पत्ति के प्रति कोई भी, विशेषत एक नागरिक, उदासीन कैसे रह सकता है?

इस सदर्भ मे 'द सीक्रेट लाइफ ऑफ प्लाट्स (पेंग्विन, १९७३) के पृष्ठ २६ और ८६ को भी देखा जाना चाहिये, जिनमे क्रमश वैज्ञानिक बैक्स्टर तथा डॉ जगदीशचन्द्र बसु ने ब्रह्माण्ड की परस्पर सघन सबद्धता (इटरकनेक्टेडनेस) को उदाहरण दे कर समझाया है। डॉ बसु ने

रॉयल सोसायटी के सर माइकैल फोस्टर से जब यह कहा कि 'क्षमा करे यह धात्विक टिन की प्रतिक्रिया का ग्राफ है' तब वह स्तब्ध रह गया (मई १९०१)। वैज्ञानिक बसु की खोज ने यह सिद्ध किया है कि **धरती के गर्भ मे जो भी है, वह सवेदनशीलता से भरपूर है, इसलिए यह सभव ही नहीं है कि ब्रह्माण्ड (यूनीवर्स) मे कहीं भी कुछ भी घटित हो और उसका एक-दूसरे पर प्रभाव न पडे**, और फिर यह निष्कर्ष भी ठीक नही है कि सिर्फ जड या भौतिक घटनाएँ ही विश्व या ब्रह्माण्ड को प्रभावित करती है, वे समस्त घटनाएँ भी इसे प्रभावित करती है, जो इस पर निवास करने वाले जीवधारियो से सबन्धित है।

ऐसी स्थिति मे यह कैसे सभव है कि विश्व मे करोडो जीवधारियो को उनके प्रकृति-प्रदत्त जीने के अधिकार से अकाल वचित कर दिया जाए, उन्हे बेरहमी से मौत के घाट उतार दिया जाए और कही कोई प्रतिक्रिया न हो? क्या युद्धो, कत्लखानो, हत्याओ, और अन्य घिनौनी हिंसाओ का विश्व या ब्रह्माण्ड की बुनावट पर कोई असर नही पडता है? पडता है, अत्यधिक पडता है– यह बात अलग है कि हम उसका अनुभव नही कर पाते या हमारे पास उस तरह का अनुभव करने का कोई साधन नही है। ब्रह्माण्ड का कण-कण सवेदनशीलता से अनुप्राणित है, अत वे पीडा-तरगो से अप्रभावित रहे, यह असभव है।

एक सर्वेक्षण (सन् १९८९) के अनुसार भारत मे प्रतिवर्ष वैध-अवैध रूप मे लगभग १५ करोड पशुओ को मासाहार के निमित्त मारा जाता है। भारत मे प्रति व्यक्ति मास-खपत का औसत १ २५ किलोग्राम मास है, जिसे बढ़ा कर ३ किग्रा करने की भरपूर कोशिश की जा रही है। १ १५ किग्रा मास-खपत की दृष्टि से ४,१०,९८६ पशुओ की हत्या प्रतिदिन हो रही है और जब यह औसत प्रतिदिन ३ किग्रा हो जाएगा तव लगभग ९,८६,३६६ पशुओ का कत्ल प्रतिदिन होगा। आप क्या सोचते है कि जव इतने पशु मारे जाएँगे तव इस देश या विश्व की धरती अप्रभावित रहेगी? और फिर यह जरूरी नही है कि कत्ल जिस जगह किया जाए या युद्ध जिस जगह जूझा जाए, प्रभाव वही हो, वह अन्यत्र कही भी हो सकता है। जबलपुर का भूकम्प (२२ मई १९९७) ईरान के भूकम्प के कारण हुआ माना गया है। यद्यपि यह अभी अपुष्ट है, किन्तु यदि विश्व के समस्त भूकम्पो की तटस्थ समीक्षा की गयी तो सुनिश्चित है कि उपर्युक्त तथ्य की सपुष्टि सफलता से हो जाएगी।

ध्यान रहे प्रकृति के अपने प्रवन्ध है, जिन्हे ठीक से समझने की आवश्यकता है। स्पष्ट है कि जव भी हम उसके प्रवन्ध या उसकी व्यवस्था का उल्लघन करते है, दुर्घटनाएँ होती है, ववडर आते है, तूफान उठते है और मनुष्य को व्यापक मर्वनाश का सामना करना पडता है। प्रकृति के स्वाभाविक प्रवन्ध मे कत्लखाने और युद्ध मनुष्य की अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण दखलन्दाजी है, जिनकी वजह से वर्तमान पीढ़ी तो अभिशप्त हुई ही है, किन्तु यदि यह सिलसिला जारी रहा तो आनेवाली पीढ़ियो पर इस सवकी काली छाया अवश्य पडेगी।

जिसे 'विसालॉजी' या 'विस थिअरी (सिद्धान्त) कहा गया है, और जिसकी इस पुस्तक मे अन्यत्र चर्चा है, वह एक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है, जिसकी व्याख्या अविलम्व की जानी चाहिये और जिसे स्पष्ट शव्दो और सरल भाषा मे लोगो तक पहुँचाना चाहिये ताकि लोग यह जान सके कि ऐमे कौन से कारण, या कूटनीतिक चाले है जिनकी वजह से उन्हे अहिंसा, करुणा और महअस्तित्व के रास्ते पर चलने से रोका जा रहा है। **'विस सिद्धान्त' कोई नैतिक या सास्कृतिक या वाणिज्यिक अभियान, या आन्दोलन नहीं है वरन् धरती को बचाने और उसे सुखी/समृद्ध वनाने का एक वैज्ञानिक सिद्धान्त है।**

हमारे इस प्रकाशन का उद्देश्य उत्तरकाशी (१९९१), लातूर (१९९३), तथा जवलपुर (१९९७) मे जो भूकम्प आये है उनके कारणो के प्रति लोगो को सतर्क करना है ताकि वे स्वय स्थिति की ममीक्षा करे और एक अहिंसामूलक/मानवीय सवेदनशीलता से फली-फूली समाज-रचना मे भागीदारी कर देश-दुनिया के पर्यावरण की रक्षा करे - उसे स्वच्छ वनायें। आश्चर्य की बात है कि जव ब्रिटेन जैसे विकसित देश ने गत दशक मे अपने २५ प्रतिशत कत्लखानो पर ताले डाल दिये है, तव हम शहरी कत्लखानो (सिटी एवॉटॉयर्स/ सीए) को ग्रामीण कत्लखानो (रूरल एवॉटॉयर्स/आरए) मे रूपान्तरित करने की एक व्यवस्थित योजना वना रहे है ताकि देश की जो प्राकृतिक सरचना है, वह छिन्न-भिन्न हो जाए और वह जल-दुष्काल, भूकम्प वाढ़, अनावृष्टि इत्यादि के सूनी शिकजे मे कम जाए।

भूकम्प और कत्लखाने

हम देख रहे है कि हमारे देश मे कत्लखानो का जमावडा लगातार वढ़ रहा है। अल-कवीर समूह (दुवई) जहाँ-तहाँ कत्लखानो की स्थापना के लिए सैध लगा रहा है, पेशकदमी कर रहा है। आन्ध्रप्रदेश मे उसे जनता के विरोध का सामना करना पडा, किन्तु कुछ दिनो वन्द रह कर अव वह फिर शुरू हो गया है। राजस्थान सरकार ने उसे निराश किया, किन्तु २७ मई '९४ को पश्चिम वगाल की सरकार ने उसकी पीठ थपथपा दी और ७० करोड रुपयो की लागत से एक अत्याधुनिक (अल्ट्रामॉडर्न) कत्लख़ाना खोलने की मजूरी दे दी। देश मे पहले ही लगभग ३६,०३१ छोटे-वडे/वैध-अवैध कत्लख़ाने है, जिनमे हर दिन लाखो-लाख निरीह/वेकसूर पशु सूर्योदय-के-साथ मौत-के-घाट उतार दिये जाते है। खयाल रहे, यह सव उस देश मे हो रहा है, जो अहिंसा और करुणा, ममता और मानवता के लिए विश्व-विख्यात रहा है।

जीने का हक सवको है। सवको अपने प्राण प्यारे है। कोई मरना नही चाहता। प्रकृति के इस अतिसामान्य नियम की जानकारी कुछ को है, कुछ को शायद नही है। जिन्हे नही है, वे स्वय भी मौत के शिकजे से वचना चाहते है। अव यह डंके की चोट सावित हो गया है कि मासाहार स्वाभाविक आहार नहीं है, वह अत्यन्त अप्राकृतिक आहार है, अत इसीलिए पृथ्वी पर असतुलन और तवाही, अशान्ति और ध्वस का कारण वनता है।

जव हम पीटर टॉम्पकिन्स/क्रिस्टफर वर्ड की वहुमूल्य पुस्तक *द सीक्रेट लाइफ ऑफ प्लान्ट्स* पढते है, या डॉ जगदीशचन्द्र वसु के खोज-विवरण देखते-टटोलते है, तव इस तथ्य मे कोई सदेह नही रह जाता कि सपूर्ण व्रह्माण्ड, विशेपत हमारी इस धरती के तमाम अस्तित्व, एक-दूसरे से सवद्ध है, अलग-थलग कही कुछ नही है। इनमे अन्त सवन्धो की परस्पर एक ऐसी सूक्ष्म धारा प्रवाहित है कि यह असभव ही है कि कोई घटना व्रह्माण्ड (यूनिवर्स) या पृथ्वी (ग्लोव) पर घटित हो और उसका असर एक-दूसरे पर न पडे। किसी असर के अ-जाने रह जाने का मतलव उसके न होने का सकेत नही है। यदि हम किसी वस्तु, या घटना, या उसके असर के सवन्ध मे नही जानते है तो इसका अर्थ यह नही है कि उसका अस्तित्व ही नही है।

अज्ञान कई वुराइयो का जन्मदाता है। यह अज्ञान ही है कि हम कत्लखाने खोले हुए है वगैर इस इल्म के कि सपूर्ण जगत् भीतर से मिला हुआ (इटरकनेक्टेड) है या एक अभूतपूर्व सवद्धता (इटरकनेक्टेडनेस) सर्वत्र व्याप्त है। कोई घटना कही घटित हो और उसका प्रभाव सर्वत्र न हो, यह असभव है। प्रभाव के कमोवेश की वात अलग है, किन्तु उसके वजूद मे न होने का तो कोई प्रश्न ही नही है। जव एक पौधे को छूने, उखाडने, या काटने-भर से कोई घटना घटित होती है, तव फिर यह कैसे सभव है कि इतने सारे प्राणियो का कत्ल हो और कही कुछ घटित न हो या इतने सारे युद्धो * मे इतने सारे लोग मारे जाने

---

* गत लगभग ८० वर्षो (१९०४ ई से १९८२ ई) तक अर्थात् रूस-जापान-युद्ध से वर्तानवी-अर्जेण्टाइनी युद्ध तक १२ करोड लोग मारे गये, जो इग्लैंड वेल्स, स्कॉटलैंड, आयर्लैंड, वैल्जियम, नीदरलैंड्स, नॉर्वे, स्वीडन डेन्मार्क फिनलैंड और पूर्व जर्मनी की वर्तमान सयुक्त जनसख्या के वरावर हैं।

हो और उनके मारे जाने का कोई तात्पर्य ही न हो? है, होता है, किन्तु हम न तो उसे जानना चाहते है, और न ही आगे के लिए कोई सबक लेने की इच्छा रखते है।

जून के दूसरे हफ्ते मे दिल्ली विश्वविद्यालय के तीन भौतिकीवेत्ताओ ने सूजडल (रूस) मे जिस **बिस सिद्धान्त** को प्रतिपादित किया, वह इस बात का सुबूत है कि दुनिया मे आज जो भूकम्पी झटके या भूचाल आ रहे है, वे सब इस पर होने वाले रक्तपात/बर्बर ध्वस की परिणतियाँ है। **पूरी दुनिया मे कत्लखानो की सख्या कम नहीं है। युद्ध भी अस्थायी कत्लखाने ही है। जिन्हे हम कत्लखाने कहते हैं, वहाॅ पशुओ का कत्ल होता है और जिन्हें युद्धस्थल कहा जाता है, वहाँ आदमी जगली जानवर की तरह जूझता है – एक-दूसरे के प्राणो पर गिद्धो की तरह झपटता है। ये भी अस्थायी कत्लखाने ही है सिर्फ सतोष के लिए हमने इन्हे 'युद्धस्थल' शीर्षक दे दिया है।**

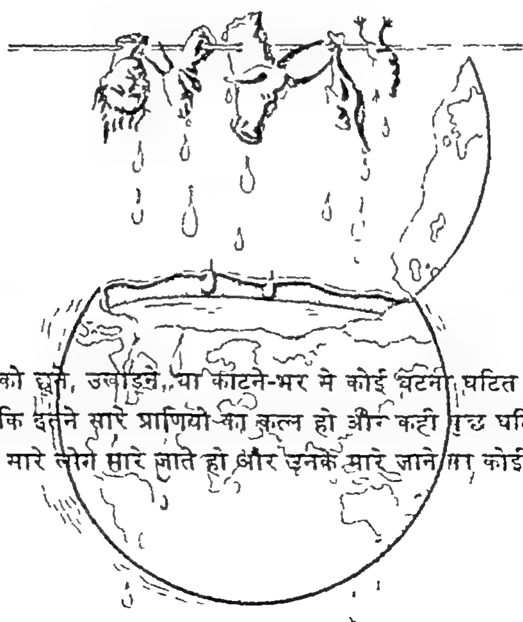
हम नही जानते कि आज तक आदमी ने कितने युद्ध लडे है और कितने मनुष्यो की जाने उसने ली है, किन्तु इतना तय है कि प्राण प्राण है फिर चाहे वे किसी जीवजन्तु के हो, या मनुष्य के। कही भी, कोई प्राणी यदि मारा जाता है अथवा अस्वाभाविक कारणो से उसकी हत्या की जाती है, तो धरती का तन-मन काँप उठता है और उसके भीतर कम्पनो का एक समूह सचित होने लगता है। जो लोग नॉसीसेप्शन वेव्ह्ज (स्नायविक तरगो) के बारे मे जानकारी रखते है, बता सकते है कि किस तरह घाव या व्रण होने पर किसी आहत प्राणी मे-से तरगो का एक समूह अचेतन रूप से प्रवाहित/स्रवित होता है और जगह-जगह सिर धुनता है। दुनिया का ऐसा कोई घाव, जख्म या प्रहार नही है, जिसकी प्रतिक्रिया न होती हो। घाव चाहे फिर वह आदमी के जिस्म पर हो या किसी पशु-पक्षी के शरीर पर उसका प्रभाव दुनिया पर न हो यह असभव है।

यह जगत् बहुविध तरगो का समवाय है। वस्तुत यह तरगो से बुना एक अद्भुत ब्रह्मपट है, जिसके ताने-बाने एक दूसरे से असबद्ध अथवा प्रभाव/प्रतिक्रिया-मुक्त हो, यह सभव ही नही है। कही भी कोई दुर्घटना, या दुर्घटनाओ का कोई समूह घटित होता है, धरती पर हर हालत मे उसका असर पडता है।

आप क्या सोचते है कि जब पशुओ को बर्बरतापूर्वक नोचा, घसीटा या मारा जाता है, तब दुनिया मे कुछ भी घटित नही होता? होता है, किन्तु हम उसकी समीक्षा से घबराते है। वैज्ञानिक आइन्स्टाइन के नाम से अभिहित *पीडा-तरगो की थिअरी* (ईपीडब्ल्यू) के अनुसार डॉ एम एम बजाज और उनके साथियो ने कत्लखानो के जख्मो से उठने वाली जिन तरगो का विश्लेषण किया है और सपूर्ण प्रक्रिया को जिस तर्क-सगत ढग से प्रस्तुत किया है, वह भावनात्मक न हो कर अत्यन्त वैज्ञानिक है। कत्लख़ानो से प्रवाहित क्रूरता-तरगे पूरे विश्व में व्यापती न हो, ऐसा कभी हो ही नही सकता। यह इन्ही तरगो का नतीजा है कि भावनात्मक रूप से आज हमारा समाज बर्बरताओ और क्रूरताओ की भयानक गिरफ्त मे है और दुनिया में जगह-जगह भूकम्प आने लगे है। हमारे देश मे जब-जब हिंसा और क्रूरता का विस्तार हुआ है, धरती काँपी है और उसने हिंसा को पूरी तरह नकारा है। ब्रह्माण्ड अथवा पृथ्वी ने कभी हिंसा/बर्बरता को बर्दाश्त नहीं किया - उसने सदैव इस पर असहमति के हस्ताक्षर ही किये है।

हमारा विनम्र अनुरोध है कि **बिस थिअरी** (वजाज+इब्राहिम+सिंह सिद्धान्त) का गभीर अध्ययन किया जाए और इससे पहले कि रूस या अन्य किसी देश मे इस थिअरी पर गहन विचार-विमर्श हो, हमे अपने ही देश मे इसकी गहरी पडताल करनी चाहिये कि जो कत्लखाने भारत मे है उनका यहाँ के भौगोलिक, खगौलिक, सामाजिक, सास्कृतिक तथा भावनात्मक जीवन पर क्या प्रभाव हुआ है।

हमे मूल्याकन की निर्मम प्रक्रिया से गुजरने मे कतराना नही चाहिये, वल्कि उसे जान-बूझ कर हाथ मे लेना चाहिये ताकि हिंसा के इस खौफनाक दौर को थामा जा सके। **हम किसी जघन्य कृत्य को सिर्फ विदेशी मुद्रा कमाने के लिए अन्धाधुन्ध करते जाएँ, यह किसी भी तरह न्यायोचित नहीं है। क्या हमे देश के मानवीय और भावनात्मक गठन की चिन्ता नहीं करनी चाहिये?** क्या हमे यह नही देखना चाहिये कि जो हिंसा, वर्वरता, क्रूरता आज हमारे देश मे घटित है, उसका कोई वैज्ञानिक, आर्थिक, मानवीय, सास्कृतिक अथवा भावनागत आधार है? क्या वह आकस्मिक है, या किसी घटना-क्रम का दुष्परिणाम है? हमारा निवेदन है कि हमारे वैज्ञानिक इस तथ्य की परीक्षा करे कि भूकम्प-विज्ञान (सीस्मोलॉजी) के सिद्धान्तो के अनुसार कत्लखानो का देश के जैव-मण्डल (वायो-अटमॉस्फिअर) पर क्या असर पडता है? हम वधाई देगे इस वैज्ञानिक-त्रयी को जिसने सकट के इन भयावह क्षणो मे इस सिद्धान्त को प्रवर्तित किया है। □



जव एक पौधे को छूने, उखाड़ने, या काटने-भर मे कोई घटना घटित होती है, तव फिर यह कैसे सभव है कि इतने सारे प्राणियो का कत्ल हो और कहीं युद्ध घटित न हो या इतने सारे युद्धो मे इतने मारे लोग मारे जाते हो और इनके मारे जाने का कोई तात्पर्य ही न हो?

खून में : घुटनों तक

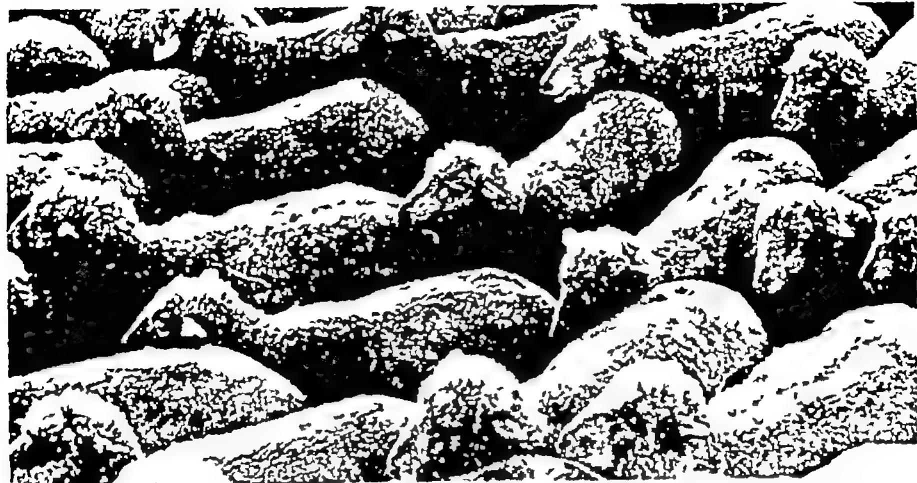
आज विश्व-जीवन पर हिंसा और क्रूरता का दबाव अपनी चरम सीमा पर है। जीवन का अव ऐसा कोई क्षेत्र शेष नही है, जहाँ हिंसा ने अपना डेरा न डाल लिया हो। ऐसे भयावह क्षणो मे यदि हम आतकित या भयभीत हो कर हिंसा का सामना नही करेगे तो यह नागिन समूची मानवता को डस लेगी, अत हिंसा चाहे जिस शक्ल मे, जहाँ भी, जब भी, जैसी भी हो, हमे उसका कडा विरोध करना होगा, उसकी धूर्तताओ को पहचानना होगा, उसके दाव-पेचो की सावधान समीक्षा करनी होगी और उसे जिन्दगी के हर इलाके से बुहार कर फेक देना होगा।

आज कोई धर्मानुयायी ऐसा नही बचा है, जो हिंसा की सीधी अथवा तिर्यक् गिरफ्त मे न हो। आश्चर्य है कि वह व्यक्ति जो कल तक पूरी तरह अहिंसक था, आज हिंसा मे रस लेने लगा है और उसे पुण्य मान कर अपने आध्यात्मिक (रूहानी) विकास के लिए अनिवार्य वता रहा है। भारत मे हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई इत्यादि तमाम लोग किसी-न-किसी शक्ल मे हिंसा मे लिप्त है। अज्ञान और अन्धविश्वास के कारण आज भी देश मे निरीह-मूक पशु-पक्षियो की वलियाँ चढायी जाती है। **जिस शताब्दी को विज्ञान के सर्वोच्च विकास की शताब्दी माना जाता है, उसमे पशु-वलियाँ तो है ही, नर-वलियाँ भी हो रही है।**

हिन्दुओ मे वलिप्रथा आज भी लगभग जहाँ-की-तहाँ है। यहाँ तक कि कई राज्यो मे, परम्परा का निर्वाह करने के लिए सरकार को खुद बलि चढ़ाने की व्यवस्था करनी होती है (देखे - 'हिन्दुस्तान टाइम्स,' दिल्ली, ८ मई '९७)। पुलिस रिकॉर्ड के अनुसार मध्यप्रदेश के वस्तर जिले मे वर्ष १९८०-'९७ की अवधि मे नर-वलियो के १९ मामले सामने आये। वलि के नाम पर 'समूचे गाँव की वलि' के उल्लेख भी वस्तर जिले के इतिहास मे दर्ज मिलते है। यह घटना १०६५ ई की मानी जाती है। वास्तव मे नर-वलि की खवरो से हमे चौकना चाहिये और कमर कसनी चाहिये कि हिंसा जहाँ भी, जिस शक्ल मे होगी, हम हर स्थिति मे उसका जम कर मुकावला करेगे।

मुसलमानो मे कुर्वानी के नाम पर हर साल लाखो-लाख वेकसूर पशुओ का कत्ल होता है। यह अन्धविश्वास है। कुरआन शरीफ मे कही भी हिंसा की स्वीकृति नही है। धर्म-प्रमुख इब्राहिम साहव ने नर-वलि को रोका, किन्तु उनके वाद वदकिस्मती से पशु-वलि की शुरुआत हो गयी। वे दूरदर्शी थे। आगे चल कर वे पशु-वलि पर भी लगाम लाते, किन्तु उन्हे मौका नही मिला। मान ले, कि यदि सयोगत इब्राहिम साहव को अपने पुत्र की ही कुर्वानी करनी पडती तो क्या मुसलमान भाई उस परम्परा को वरकरार रखने के लिए अपने वेटो की कुर्वानी जारी रखते? नही रखते, तव कोई-न-कोई विकल्प वे निकाल लेते। वस्तुत आज वह तर्कसगत क्षण हिन्दू और मुसलमान दोनो के सामने है जवकि पर्यावरण को चोपट करने वाली रूढियो पर वे खुल कर विचार करे और देखे कि परमेश्वर की इस सृष्टि को वे किस तरह खुशहाल, निरापद, और निर्विघ्न रख सकते है।

१९ अप्रैल के फ्रीप्रेस (इन्दौर) मे प्रकाशित खवर 'फोर मिलियन वीस्ट्स स्लॉटर्ड इन हज रिच्युअल गो वेस्ट' अत्यधिक चिन्ता का विषय है। चालीस लाख वेकसूर प्राणियो की



कुर्बानी पूरी इसानियत के माथे पर कलक का एक ऐसा टीका है, जिसे शताब्दियो तक धोया नही जा सकेगा। बीस लाख हज-यात्रियो के लिए चालीस लाख भेडो, बकरे-बकरियों, गायो तथा ऊँटो का रेगिस्तान मे दमकते सूरज की गवाही में मारा जाना और उनके खून के बीच मनुष्य का घुटनो-घुटनों चलना कोई सामान्य घटना नहीं है। पूरा विवरण इस प्रकार है –

Four millions beasts slaughtered in Haj ritual go waste

MECCA (AP) Muslim pilgrims to Mecca conclude annual rituals by sacrificing millions of sheep, camels and goats, but most of the meat from the animals ends up in incinerators and not as food for pilgrims or the poor Id-ul-zuha, the feast of sacrifice, began on Thursday and commemorates the sacrifice by the patriarch Abraham, or Ibrahim, of a ram in place of his son

The feast is celebrated throughout the Muslim world, with animals usually slaughtered for food or given to the poor But at the annual pilgrimage site in Saudi Arabia, the place of sacrifice among the two million or so pilgrims is so boundless that it creates an unmanageable glut The carcasses need to be disposed of, and quickly The pilgrims are expected to slaughter four million animals during the feast Most of the meat ends up in giant furnaces in one of four massive Slaughter Houses built in the tent city of Mina on the plains of Mecca, Islam's holiest city

Many pilgrims slaughter more than one animal either in the name of relatives, as penance of sins, or to make up for missed rituals during the Haj The logistics of killing so many animals in a hygienic and orderly manner has been a nightmare for the Saudis

Until recently, the animal were killed in an open field under the hot desert sun Every hour or so bulldozers would dump the festering carcasses into pits and cover the ground with dirt for the next round of pilgrims *Pilgrims told stories of sinking knee-deep into bloody mud filled with carcasses* These days most pilgrims buy the animals at one of four designated slaughter houses and carry out the sacrifice there

The dead animal is then thrown on a conveyor belt that dumps

thousands of carcasses every few mınutes ınto a giant furnace In a move to bring the unused meat to the poor, the Jeddah-based Islamıc Development Bank launched a programme ın 1983 that allows pılgrıms to buy a coupon for the sacrıfice durıng the Haȷ On the day of the feast, the anımal ıs slaughtered ın Mına ın the name of the pılgrım, and the meat ıs washed, freeze-drıed and packaged for transport to 27 countrıes

This year, a portıon will be flown fresh to Sudan, Pakıstan and Chad An IDB officıal saıd the bank loses up to 16 mıllıon rıyals (four mıllıon dollar) per year as the meat can not be sold and the bank cannot charge for ıts servıces Thıs year the bank says ıt wıll slaughter 5,00,000 sheep and 15,000 cows and camels - only a fractıon of the anımals that wıll be kılled ın Saudı Arabıa durıng the holıday

ससार का ऐसा कोई धर्मग्रन्थ अथवा मजहव नही है, जो हिंसा की ताईद या तरफदारी करता हो, क्रूरता या वेरहमी का पक्षधर हो। हिन्दू, मुसलमान, सिख या ईसाई किसी भी धर्म मे हिंसा को एक क्षुद्र/पापपूर्ण कर्म वताया गया है तथा सर्वत्र उसकी निन्दा की गयी है।

कत्ल, कत्लखाने और मासाहार की वजह से भूकम्पो और आत्महत्याओ के दौर भी वढ़े है। वर्ष १९८४ मे भारत मे ५०,५०१ खुदकुशियाँ हुई, जवकि यह आँकडा वर्ष १९९४ मे ८९,११५ हो गया अर्थात् एक दशक मे ७६ प्रतिशत आत्मघात अधिक हुए। **क्या हम इस निष्कर्ष को अधिमान्य करे कि जहाँ कत्लखाने अधिक है, वहाँ आत्महत्याएँ अधिक हुई हैं?** हाँ। केरल मे ७१५ कत्लखाने है, अत वहाँ आत्महत्याओ की दर प्रति लाख २८ व्यक्ति है, कर्नाटक मे यह १९ व्यक्ति प्रति लाख है, वहाँ कत्लखानो की सख्या ६३३ है। विहार मे यह दर १ ५ व्यक्ति प्रति लाख है, वहाँ कुल ४७ कत्लखाने है। मध्यप्रदेश मे वर्प १९९६ मे ६ हजार ३ सौ ५९ व्यक्तियो ने खुदकुशी की। मध्यप्रदेश मे २६१ कत्लखाने है। पजाव मे डेरावस्सी कत्लखाने (पजाव मीट् लिमिटेड) की स्थापना के वाद से आत्महत्याओ की सख्या वढी है। 'हिन्दुस्तान टाइम्स' (नई दिल्ली, २२ अगस्त '९५, पृ ५) के अनुसार अमृतसर जिले मे वर्प १९९२ मे ४७, १९९२ मे ६९ और १९९४ मे ८५ आत्महत्याएँ हुई। पूरे राज्य का आँकडा उपलब्ध नही है। कहा जाता है कि **खून मे ५ एच टी नामक रसायन आत्महत्या के लिए उत्तरदायी है। क्या यह मासाहार मे होता है?, इस तथ्य को पुष्ट किये जाने की आवश्यकता है।**

वस्तुत मनुष्य की चेतना पर हिंसा का दवाव इतना वढ गया है कि वह अपने सहवर्तियो को भी उवाल कर खाने लगा है। एपी की खवर है कि सेटपीटर्सवर्ग मे २१ मार्च '९७ को इल्शान कुजीकोव्ह (३७) नामक व्यक्ति ने अपने तीन शरावी मित्रो की हत्या की और उनके भीतरी अवयवो को खा गया। जव पुलिस ने उसके अपार्टमेट की तलाशी ली तो उसे ३ छिन्न-भिन्न लाशे मिली, एक जार मिला, जिसमे नर-मास को छोका गया था, तथा एक वाल्टी मिली जिसमे मानवीय अवयवो को उवाला गया था। **क्या यह सव हिंसा का प्रतिफल नहीं है, जो धर्म या मजहव मे-से हो कर हमारी जिन्दगी मे जज्व हुआ है।**

हम जिस दुनिया मे रह रहे है, उसके मिजाज और उसकी तवीयत वहुत अच्छी नही

है। जव अन्तरिक्ष यात्रियो से धरती पर लौटने के वाद पूछा गया कि अन्तरिक्ष से तुम्हे यह धरती कैसी दिखायी दी, तव वे वडे उल्लास और गर्व से कहते हैं – 'एक, विल्कुल अखण्ड', लेकिन जव पृथ्वी पर वे अपनी ही दुनिया का नक्शा देखते हैं तो चकित/अचम्भित रह जाते हैं कि यह तो वुरी तरह खण्डित है। उन्हे तव और अधिक पीडा होती है, जव वे यह जान पाते हैं कि इस दुनिया में रहने वाले लोगों को खण्डित, विभाजित, अलग-अलग, शत्रुओं-की-तरह-वनाये-रखने-के-लिए प्रति मिनिट २० लाख डॉलर अर्थात् ७ करोड ५० लाख रुपये खर्च करने पड रहे हैं। राजनीति और युद्ध, मनुष्य, मनुष्यता और विश्व-मैत्री की सभावनाओ को ध्वस्त/खण्डित करते है। हिंसा की भूमिका इस सदर्भ मे वेहद ख़तरनाक है। वह जोडने वाली वृत्ति नही है, जोडने वाले जीवन-मूल्य है – परस्पर प्रीति, विश्वास, सहानुभूति और सहयोग - दुर्भाग्य से ये तमाम अव लुप्तप्राय है।

मनीपी विचारक ज्योर्जिस गुर्दजिएफ ने खूव सोच-समझ कर हमारे इस ग्रह को 'स्लॉटरहाउस प्लेनेट' की सज्ञा दी है। उसने कहा है कि गत ८० वर्पो मे (वर्ष १९८८ तक) युद्धो मे १२ करोड लोग मौत के घाट उतारे गये। यह सख्या इग्लैड, वेल्स, स्कॉटलैड, वेल्जियम, नीदरलैड्स, नॉर्वे, स्वीडन, डेन्मार्क, फिनलैड, और पूर्वी जर्मनी की आवादियो के कुल योग के वरावर है। क्या यह सव चिन्ता का विपय नहीं है कि एक ओर युद्धों मे हम मनुष्यों को झोंक रहे है तो दूसरी ओर मजहव/खान-पान/शौक-स्वाद के नाम पर निरीह पशु-पक्षियो की जाने ले रहे है?

अननोन मैन (लेखक - यात्री) नामक पुस्तक के पृष्ठ ११३ पर लिखा है कि हम प्रतिदिन खरवो प्राणियो का कत्ल करते है, उन पशुओ का जिनका न तो कोई अपराध ही होता है और न ही जो प्रचुरता मे है। असल मे हमने 'हम क्या खाते है' इसका विवेक ही गँवा दिया है। हम अत्यधिक सवेदनशून्य हो कर प्लास्टिक की खूवसूरत थैलियों में पैक्ड मास खा रहे है, वगैर इस वात का पता लगाये कि कत्लखानो में पशुओं के साथ क्या सलूक होता है?

ऐसी विपम परिस्थिति मे जव कि देश के ३२ करोड लोग गरीवी की रेखा के नीचे जी रहे है, हमे कोई हक नहीं है कि हम कत्लखानो पर वेहिसाव धन और पेयजल खर्च करे, वर्पावनो को नप्ट करे, तथा निरीह पशु-पक्षियो को मौत के घाट उतारे।

आज जो वैज्ञानिक प्रयोग हो रहे है, उन्होने भी मनुष्य को पिशाच वना दिया है। 'अफ्रीकी ट्री फ्रॉग्ज' का एटीवायोटिक्स के लिए वीनम निकालना, वैंगलोर प्राइमेट रिसर्च लेवोरेटरी मे विदेशी मुद्रा अर्जित करने के लिए ४०० वोनेट वन्दरो का उत्पादन, मनुष्य या पशुओ का 'क्लोनिंग' (समरूप) तैयार करना तथा चूजो के मस्तिप्क-परिपथ (मेटल सर्किट) मे वटेर का सर्किट डालना इत्यादि ने प्रकृति का सहज सन्तुलन/ उसके स्वाभाविक ढाँचे को छिन्न-भिन्न और असन्तुलित कर दिया है। कहा गया है कि यह प्रयोग क्लोनिंग की अपेक्षा अधिक खतरनाक है।

क्या ऐसी प्रतिकूल परिस्थिति मे हम हाथ-पर-हाथ रखे वैठे रहेंगे, या हिंसा तथा क्रूरता ने विज्ञान, धर्म, अध्यात्म, सस्कृति, नीति-शास्त्र, मानवता और ललित कलाओ को जो चुनौती दी है, उसका मुकावला करेगे? □□



वर्ष १९९६ मे देश-विदेश मे जो सम्मेलन, सभाएँ, वैठके, सगोष्ठियाँ, विचार-विमर्श इत्यादि हुए उनमे सपूर्ण विश्व मे हुई हिंसा तथा प्राकृतिक विपदाओ के प्रति गहरी चिन्ता तो व्यक्त की गयी, किन्तु उन कारणो की जाँच-पडताल/खोजबीन की कोई कोशिश नही हुई, जिनकी वजह से यह पव हुआ अर्थात् भूकम्प आये, वाढे आयी, अतिवृष्टियाँ हुई, चक्रवाती ववडर आये, और भुखमरी से मौते हुई। क्या हम – हमारे विशेषज्ञ, इतना सव होने के वावजूद उन अन्वेषणो की अनदेखी करेगे, जो देश के उन वैज्ञानिको द्वारा किये गये है, जो घटनाओ को सिर्फ उनकी भौतिक शक्ल मे ही नही देखते वरन् उनके जर्रे-जर्रे मे गहरे उतर कर उन सवेदनशील कारणो का भी पता लगाते है, जिनकी समीक्षा से कोई कारगर परिणाम अथवा समाधान सामने आ सकता है।

यह काम वर्प १९९५ मे दिल्ली विश्वविद्यालय के तीन वैज्ञानिको – डॉ मदन मोहन वजाज, डॉ विजयराज सिह और एम एस एम इब्राहिम, ने किया। उन्होने जून '९५ के द्वितीय सप्ताह मे मूजडल्ल (रूस) मे 'विस सिद्धान्त' प्रतिपादित किया। इस दृष्टि से उनकी कृति 'ईटिओलॉजी ऑफ अर्थक्वैक्स – ए न्यू अप्रोच' (हीरा भैया प्रकाशन, ६५ पत्रकार कालोनी कनाडिया मार्ग, इन्दौर-४५२ ००१, मध्यप्रदेश) उल्लेखनीय है। भौतिकी एव खगोल-भौतिकी के इन विद्वानो ने अल्वर्ट आइन्स्टाइन के सम्मान मे अभिहित पीडा-तरगो (पैन वेव्हज/नोसीसेप्शन वेव्हज) के निष्कर्षो को आगे वढ़ाया – वर्तमान घटनाओ के सन्दर्भ मे उनकी नव्यतम व्याख्या की।

पहले इस सिद्धान्त को, जो भूकम्पो, चक्रवाती ववडरो तथा इन-जैसी घटनाओ की स्पष्ट व्याख्या करता है और गहरे उतर कर यह स्पष्ट करता है कि दुनिया मे आज जो भूकम्प आते है, विकासशील देशो मे जो भुखमरी/दुष्काल है, ववडर/चक्रवात/तूफान है उनके कारण क्या है। 'विस सिद्धान्त' के अनुसार इन सवकी वजह युद्ध, कत्लखाने, हत्याएँ, अपहरण इत्यादि है। जहाँ भी हिंसा है, वहाँ ये दुर्घटनाएँ है। 'विस सिद्धान्त' को उसकी आरम्भिक स्थिति मे लोगो ने ठीक से समझा नही, किन्तु अव दुनिया के विचारको और वैज्ञानिको ने उस पर विचार करना शुरू कर दिया है।

'विस सिद्धान्त' पहले वजाज, इब्राहिम और सिंह के प्रथम रोमन वर्णो से वना एक सक्षिप्त शब्द था, किन्तु अव वह एक नयी विज्ञान-शाखा के रूप मे विकसित हो गया है और जल्दी ही उसे 'विसोलॉजी' की सज्ञा मिल जाएगी।

'विसोलॉजी' का अर्थ वह ज्ञान-शाखा है, जो 'ब्रेकडाउन ऑफ इटीग्रेटेड सिस्टम्स' (समन्वित व्यवस्थाओ के विभग अर्थात् टूटने) के कारणो की खोज करती है। वह ज्ञान, जिसका सवन्ध अत्यन्त सूक्ष्म सकेतो के अनुवन्धन (वाइडिंग ऑफ इन्फिटिज्मल सिग्नल्स) की व्याख्या से है, 'विसोलॉजी' है। वडी प्रसन्नता का विषय है कि भारत के इन वैज्ञानिको ने समस्याओ की वुनियाद मे उतरने की तर्कसगत/जी-तोड कोशिश की है, अत विश्वास किया जाना चाहिये कि यह खोज अहिंसा और सहअस्तित्व, प्रकृति और पर्यावरण, मानवता और करुणा के क्षेत्र मे एक नये अध्याय की शुरुआत सिद्ध होगी।

हमे वहुत गौर से देख लेना होगा, कि देश-विदेश मे जो कुछ हुआ है उसका परिणाम और स्वरूप क्या है और उसकी पृष्ठभूमि पर कौन से कारण वजूद मे है?

भारत को ले। इसमे कत्लखानो की सख्या उत्तरोत्तर वढ रही है। 'इडिया-१९९३' (इअर वुक) मे कत्लखानो तथा मास-ससाधक इकाइयो का आँकडा ३,६५७ था जव कि यह आँकडा 'भारत-१९९५' (वार्षिकी) मे ४,००० है। ये तो लाइसेंस-प्राप्त वूचडखाने है, इन्हे छोड जो अनधिकृत कत्लखाने है उनकी सख्या लाखो मे है। इस सदर्भ मे भले ही यह तथ्य कविता-जैसा लगे, किन्तु तय है कि पृथ्वी काँपती है, उसका हृदय है, वह अहसास करती है, हवा के कान है, वह सुनती है, जल के नथुने हैं, जो साँस भरते है – सूँघते है, आग की सवेदनशील त्वचा है, जो छुहन महसूस करती है, और आकाश की आँखे हैं – जो देखती हैं – इस तरह जो भी घटित है, उसका सपूर्ण लोक (यूनिवर्स) पर, विशेषत धरती पर, जहाँ सहारक घटनाएँ होती हैं, प्रभाव पडता है।

आन्ध्रप्रदेश के चक्रवाती ववडर (६ नवम्बर '९६) तथा तमिलनाडु की अतिवृष्टि के परिणाम सामने है। लातूर मे जो हुआ उसे हम भूले नही है। समुद्रतट के तल से जो गहन मछुहाई हो रही है, वह भी चिन्ता का विषय है। आन्ध्र, तमिलनाडु, केरल और कर्नाटक मे कुल मिला कर १,८७४ लायसेंसशुदा वूचडखाने है, जिनमे लाखो-लाख प्राणियो की हत्या होती है। आन्ध्र मे रुद्रारम कत्लखाना पूरी जवानी पर है। हैदरावाद पोल्ट्रियो का शहर है। तमिलनाडु का नमक्कल शहर 'एगसिटी' के नाम से मशहूर है जो हर दिन ५० से ६० लाख अण्डे उत्पादित करता है। यह सव विश्लेषणीय है। इसकी अनदेखी हम नही कर सकते।

अव तो सर्वोच्च न्यायालय ने भी इस तथ्य को मजूर कर लिया है कि कत्लखानो ने प्रदूषण फैलता है। उसने ३० नवम्बर के अपने ऐतिहासिक फैसले मे जिन १९८ ...

उद्योगो को प्रतिबन्धित किया है, उनमे दिल्ली-स्थित ईदगाह कत्लखाना भी है। यद्यपि इसे युद्धस्तर पर स्थानान्तरित करने के आदेश दे दिये गये है, तथापि ३० जून तक इसे सीमित प्रदूषण फैलाने की अनुमति भी मिली है – आखिर यह विलम्ब क्यो? जब ईदगाह की यह स्थिति है, तब देश के अन्य भागो मे जो कत्लख़ाने सक्रिय है उनकी स्थिति की कल्पना हम सहज ही कर सकते है। क्या न्यायालय उनकी – पूरे देश की – चिन्ता नही करेगा?

यह जानते हुए भी कि मासाहार भुखमरी की सबमे बडी वजह है उस ओर हमारी सरकार का कोई ध्यान नही है, बल्कि 'गुड मॉर्निंग इडिया' (अब यह कार्यक्रम बन्द हो गया है, किन्तु 'युग' के ब्रेक्स मे एनईसीसी ने अण्डो का अन्धाधुन्ध प्रचार शुरू कर दिया है) जैसे कार्यक्रमो द्वारा वह देश की जनता को मासाहार का प्रशिक्षण देने पर आमादा है।

यह एक स्थापित तथ्य है कि गोमास/चिकन के उत्पादन मे अन्न की क्रमश १० और १२ कैलोरियाँ खर्च होती है। यह फिजूलखर्च है। इसे बन्द किया जाना चाहिये। पानी की खपत के जो आँकडे हमारे सामने है, वे भी घबराहट पैदा करते है। मास के उत्पादन मे यानी कत्लख़ानो की साल-सँभाल/रख-रखाव मे बेहिसाब जल खर्च होता है। **आने वाले सालों मे देश मे भुखमरी तो अपने पॉव पसारेगी ही, भयानक जल-सकट भी उपस्थित होगा।**

क्या यह तथ्य समीक्ष्य नही है कि जब देश के प्रधान मन्त्री रोम मे विश्व खाद्य शिखर-सम्मेलन मे अपना भाषण दे रहे थे, तब उडीसा मे भुखमरी से हुई मौतो की घटनाएँ सुर्खियो मे थी?

इतना सब होते हुए भी क्या हम 'बिस सिद्धान्त' की रचनात्मक/ मार्गदर्शक कसौटी का उपयोग नही करेगे? ६ नवम्बर '९६ को आन्ध्र के गोदावरी जिलो मे जो चक्रवाती बवडर आया और जिसने १,००० लोगो के प्राणान्त किये और जिसके जबडो-तले राज्य की ५,००० करोड रुपयो की सम्पदा नष्ट हो गयी – जैसी घटनाओ को क्या हम यूँ ही टाल जाएँगे – उनके कारणो का पता नही लगायेगे? क्या हम इस तथ्य की अनदेखी करेगे कि देश की १६ प्रतिशत ग्रामीण जनता को प्रतिदिन ३ रुपये से कम नसीब होते है, जो एक किलोग्राम आलू की कीमत से भी कम है? क्या हम कत्ल/हिंसा/ बर्बरता/क्रूरता पर पूर्ण या अर्द्ध विराम लगा कर देशवासियो के सुखद भविष्य का निर्माण नही करना चाहेगे?



आन्ध्रप्रदेश के चक्रवाती बवंडरो का कारण समुद्र के जीवो का अन्धाधुन्ध विनाश : समुद्र-तल असतुलित : भविष्य अरक्षित : सावधान रहने की ज़रूरत

पूरी दुनिया, पूरा देश आज कई पर्यावरणिक विपदाओ के त्रासद दौर से गुजर रहा है। अनेक घटनाएँ सामने है, किन्तु हमारे राजनीतिज्ञो/विशेषज्ञो के पास इतना अवकाश नही है कि वे उनके होने की वजह का पता लगाये। हम सतही कोशिशे तो कर रहे है, लेकिन तह मे उतरने/पहुँचने का हमारा कोई स्पष्ट इरादा नही है।

पिछले वर्षो मे देश ने अनेक भूकम्पो, वाढो तथा समुद्री बवडरो का सामना किया है। हम चिन्तित हुए है, किन्तु इतना सब होते हुए भी, हमने कारणो की खोजबीन का कोई ठोस प्रयास नही किया है।

भारत के समुद्र-तट की लम्बाई लगभग ६,३०० किलोमीटर है। लक्षद्वीप के २७ टापू और अडमान-निकोबार-शृखला के ३०० से अधिक टापुओ को इस समुद्र-तट मे जोड लेने पर यह लम्बाई १२०० किलोमीटर और बढ़ जाती है। इस तटीय क्षेत्र मे ११ बडे, २० मझोले, और १०० से अधिक छोटे बन्दरगाह है। नये कानूनो के अनुसार देश को २२ लाख वर्ग किलोमीटर तट-पक्ति 'ईज (एक्सक्लूजिव्ह इकॉनॉमिक जोन/विशिष्ट आर्थिक क्षेत्र) के रूप मे उपलब्ध है, किन्तु हमारी बदकिस्मती यह है कि हमने इस विशिष्ट क्षेत्र को मत्स्य-दोहन के लिए विदेशियो के जिम्मे कर दिया है।

'इडिया इकॉनॉमिक अपडेट' (दलाल स्ट्रीट कम्युनिकेशन्स - '९२-'९३) के अनुसार सकल समुद्री उत्पाद का निर्यात १७,६७,००,००,००० रु (१७ अरब ६७ करोड) तक पहुँच गया है जो जल्दी ही २० अरब की सीमा छू लेगा। समुद्री खाद्य उद्योग को अन्धाधुन्ध बढ़ाया जा रहा है। झीगा (प्रॉन/श्रिम्प) तथा शार्क आदि मछलियो का निर्यात ४० लाख टन प्रतिवर्ष हो गया है। यह तमाम, जापानियो के पेट मे जा रहा है।

उधर दूसरी ओर स्पष्ट चेतावनी दी गयी है, कि यदि हमने इस समुद्र-दोहन को नहीं रोका तो समुद्र-गर्भ मे मरुस्थल बनेंगे और देश बर्बादी की दिशा मे मुड जाएगा।

उडीसा मे झीगा-कृषि पर प्रतिबन्ध प्रस्तावित है ('हिन्दुस्तान टाइम्स,' नई दिल्ली ९ दिस '९६)। विश्व प्रकृति निधि (वर्ल्ड वाइड फड फॉर नेचर) ने शार्क के अतिदोहन से उत्पन्न खतरो के प्रति सावधान किया है (फ्रीप्रेस, इन्दौर, ६ दिस '९६)। कुल मिला कर स्थिति अत्यन्त दयनीय और दुर्भाग्यपूर्ण है।

भारत के सबसे बुजुर्ग अखबार 'मुम्बई समाचार' (गुजराती) ने अपने १८ नवम्बर '९६ के सपादकीय मे आगाह किया है कि यदि हमने हिंसा के बढते कदम नहीं रोके तो देश मे भूकम्पो/चक्रवातो का बदकिस्मत सिलसिला और तेज हो जाएगा। अखबार ने दिल्ली विश्वविद्यालय के भौतिकी/खगोल भौतिकी विभाग के तीन वैज्ञानिको के निष्कर्षों का हवाला देते

हुए कहा है कि 'ईटिओलॉजी ऑफ अर्थक्वैक्स – ए न्यू अप्रोच' मे जो कुछ दिया गया है उस पर ध्यान दिया जाना चाहिये और भूकम्पो/ववडरो की वजह को गभीरता मे खोजना चाहिये।

इन तीन वैज्ञानिको – डॉ एम एम वजाज, एम एस एम इब्राहिम तथा विजयराज सिंह, ने अपने शोध-पत्र 'चक्रवाती ववडरो/तूफानो/प्रभजनो के लिए उत्तरदायी मूलभूत तन्त्र' (वेसिक मीकेनिज्म रेस्पोंसिवल फॉर साइक्लोन्स एड हरीकेन्स) मे कहा है कि दुनिया मे जो भी चक्रवाती ववडर आ रहे है उनके लिए जीवहत्या (कत्लखाने/युद्ध/मासाहार/मत्स्य-सहार इत्यादि) जवावदेह है। वैज्ञानिक न्यूटन के गति-सवन्धी तृतीय नियम के अन्तर्गत उन्होने स्पष्ट किया हैं कि **यदि भारत के समुद्रतट को हिंसा/मत्स्य-अतिदोहन से मुक्त नहीं रखा गया तो देश मे आन्ध्रप्रदेश मे आये तूफानो/ववडरो की तरह अनेक चक्रवाती ववडर आयेगे।** क्या भारत सरकार इन वैज्ञानिको के निष्कर्षो की अनदेखी करेगी और देश के समुद्रतट को भावी तवाही के जवडो मे झोक देगी, या इनका परीक्षण करायेगी, इन्हे कसौटी पर कसेगी और देश को जन-धन-हानि से अभिरक्षित करेगी? काकीनाडा/पूर्व गोदावरी जिलो (आन्ध्र प्रदेश) मे ६ नवम्वर को जो विनाशकारी ताण्डव हुआ था और जिसमे ५,००० करोड रुपयो की सम्पत्ति नष्ट हुई थी तथा सैकडो लोगो की जाने गयी थी और जिसे प्रधान मन्त्री ने राष्ट्रीय सकट निरूपित किया है, उसे क्या हम गभीरता से नही लेगे?



डॉ विजयराज सिंह
(५ १० १९४९)



डॉ मदनमोहन वजाज
(१० ११ १९४२)



एम एस एम इब्राहिम
(२५ ५ १९६७)

दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली के भौतिकी/खगोल भौतिकी विभाग मे कार्यरत वे वैज्ञानिक, जिन्होने **बिसोलॉजी** (नव भूकम्प-विज्ञान) के रूप मे एक ऐसा सिद्धान्त विकसित किया है, जो विज्ञान-सम्मत तो है ही, सपूर्ण विश्व को अहिंसा, करुणा और सहअस्तित्व की एक महत्त्वपूर्ण दिशा-दृष्टि भी प्रदान करता है। उन्होने 'पीडा-तरगो' की जिस अवधारणा को प्रस्तुत किया है, उसे महान् वैज्ञानिक अल्बर्ट आइन्स्टाइन के नाम पर 'आइन्स्टाइनियन पैन वेव्ह्ज' (ईपीडब्ल्यू) अभिहित किया है। अंग्रेजी मे उनकी किताव 'ईटिओलॉजी ऑफ अर्थक्वैक्स – ए न्यू अप्रोच' एक वहुचर्चित और सुस्थापित कृति है। (देखे पृष्ठ - १२)।



मलबे मे दबे लोगो को तलाशते सैनिक – किलारी-भूकम्प।



अहिंसा की इस शस्यश्यामला धरती पर जिन्दगी के साथ बेजान जिन्स की तरह का सुलूक होता है — यहाँ जीवन का अब मूल्य ही क्या रह गया है?

केअर नई दिल्ली के सौजन्य से



सब और बकरे-बकरियो के सरो के 'पहाड' दिखायी दे रहे हैं। पढे, इनकी संतप्त आँखो मे वह महाप्रलय जो जल्दी ही इंसान की इस हिंसक/कत्ताल , तहज़ीब को राख-के-ढेर मे बदल देगा। आज पैसे ने परमेश्वर की जगह ले ली है, किन्तु याद रहे कुदरत इंसान के इस कुकृत्य को कभी माफ नही करेगी।

केअर नई दिल्ली के सौजन्य से

क्रूरताएँ : चरम सीमा

हम सोचते हैं शायद कि हम अधिक सभ्य और सुशिक्षित हुए हैं, किन्तु क्या कभी हमने अपने इस अहकार, या मिथ्या दम्भ को कसौटी पर कसने की कोई ईमानदार कोशिश की है? क्या क्रूर, दुष्ट, हिंसक, ध्वसक होना सभ्य होना है? क्या विज्ञान ने जो सुविधाएँ मनुष्य को प्रदान की हैं, उनका क्रूरता, हत्या, हिंसा, कत्ल, विच्छेदन इत्यादि मे इस्तेमाल किया जाना चाहिये? इस तरह के कई प्रश्न उठते हैं, जिनका कोई स्पष्ट उत्तर हमारे पास नहीं है।

यह जानते हुए भी कि पशु-पक्षियो के हम पर अनन्त उपकार हैं, हम कृतघ्न हुए है और अपनी सब-सारी सवेदनशीलता को गँवा बैठे हैं।

भूकम्प आते हैं और हमारी सघन बस्तियों को धराशायी/ध्वस्त कर जाते है – उन्हे समेट ले जाते है, किन्तु हम सब इस तथ्य पर कोई विचार नहीं करते कि जब शहरीकरण का भूकम्प आता है तब पशु-पक्षियो के आवासो का क्या होता है? पशुओ के आवास (सघन वन) और पक्षियो के अपने घोसले जगलो की कटाई के परिणाम-स्वरूप कहाँ चले जाते हैं? हम अपने मनोरम/गगनचुम्बी आवासो के निर्माण के लिए – शहरो की बसावट के लिए इन निरीह प्राणियो पर जो जुल्म ढाते है और उन्हे बेघर, अनिकेत, अशरण, अनाथ, निराश्रित कर देते है, उसका क्या हो? हम माने, न माने, किन्तु हमने बडी बेरहमी से जगल काटे है और पशु-पक्षियो को बेघर किया है, उन्हे अपना आहार बनाया है। आप क्या सोचते हैं कि इस तरह की घटनाएँ प्रकृति के कार्य-कारण-नियम (लॉ ऑफ कॉजेशन) की परिधि से बाहर चली जाती हैं? नहीं, इनके प्रभाव बनते हैं और मनुष्य को उन्हे भूकम्प, तूफान, बाढ, अनावृष्टि इत्यादि के रूप मे झेलना पडता है।

सवाल उठता है कि जब भूकम्प आने को होता है, तब मनुष्य सोया क्यों पडा रह जाता है और पशु-पक्षियो को १५-२० मिनिट पहले उसके सकेत कैसे मिल जाते हैं और वे क्यो सँभल या सावधान हो जाते हैं?

मवेशी, भेडे, खच्चर, और घोडे अपने बाडो मे दाखिल होने से बचने लगते है, चूहे घर छोड कर भाग निकलते हैं, साँप अपनी बाम्बियाँ छोड कर बाहर आ जाते है, कबूतर आकाश मे विचरण करने लगते है और अपने घोसलो मे तब तक नहीं लौटते जब तक सकट के क्षण गुजर नहीं जाते, मछलियाँ पानी की सतह पर उछलने लगती है, और खरगोशो के कान खडे हो जाते है – वे बेचैन-निरुद्देश्य

कूदने-फाँदने लगते है। ('ब्रेकथ्रूज'; चार्ल्स पनाती; १९८०, पृ. २०७)। अब अमरीकी प्रयोगशालाएँ भूकम्प की पूर्व सूचनाओ के सन्दर्भ मे पशु-पक्षियो की प्रज्ञा के उपयोग के प्रयोग कर रही है और पता लगा रही हैं कि यह प्रज्ञा मनुष्य के पास क्यो नहीं है? जापान पहले ही इस सिलसिले मे एक्स्पेरीमेंट्स कर चुका है।

इस विषय मे एक प्रश्न हमारे सामने और आ खडा होता है; वह यह कि क्या भूकम्प और पशु-पक्षियो के बीच कोई रिश्ता है? है, जब भूकम्प इनकी पीडा-तरंगो (पैन वेव्हज) के परिणाम है, तब ऐसा कैसे होगा कि प्रकृति उन्हे आगाह न करे और गफलत मे आ दबोचे? मनुष्य भले ही कत्लखानो मे प्रतिदिन करोडो निरीह पशु-पक्षियो के प्राण लेता हो, किन्तु प्रकृति उन बेकसूर प्राणियो के प्राण बेवजह नहीं ले सकती, उसके स्पष्ट नियम है और वह उन पर सख्ती से चलती है। शायद यही कारण है कि जलचर, थलचर और नभचर सब प्राणियो को प्राकृतिक सकटो की सूचना समयपूर्व मिल जाती है और वे सावधान हो जाते है, किन्तु आदमी गाफिल पड़ा रहता है और मौत उसे अपने जबड़ो तले चबा जाती है।

क्या हम प्रकृति से, पशु-पक्षियो के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने का कोई सबक नहीं लेगे और अपनी क्रूरताओ को बन्द या मन्द नहीं करेगे? तय है कि यदि हमने क्रूरताओ की रफ्तार कम नहीं की, या उन्हे सदा-सर्वदा के लिए नहीं रोका तो प्रकृति अपनी करुणा का ऑचल हम पर फैलाये, यह आशा हम उससे नहीं कर सकते। यदि हमने प्रकृति की रचनात्मक भाषा को नहीं समझा तो निश्चय ही हम अपनी इस धरती को तहस-नहस कर बैठेगे और अपने ही पॉव पर कुल्हाड़ी मारने की कहावत को चरितार्थ करेगे।

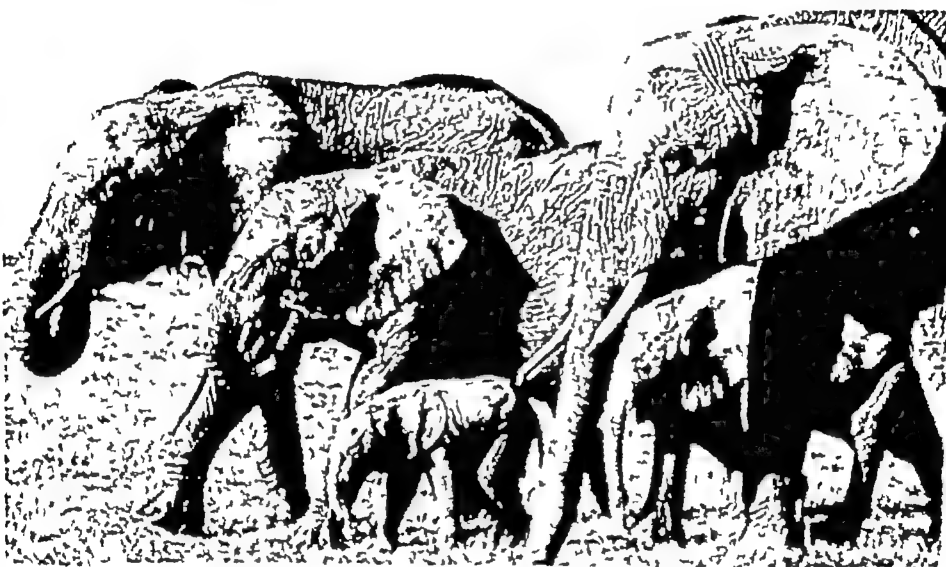
यह कथन कितना तर्कसगत है कि जब 'पीडा-तरगे' भूकम्प, वाढ, तूफान, ववडर इत्यादि की वजह बन सकती है, तब करुणा, दया, हमदर्दी, प्रीत-प्रेम की तरगे इस विश्व को सुख-शान्ति का निरापद आवास क्यो नहीं बना सकतीं? क्या हम प्रकृति के इतने सरल-सहज-वोधगम्य संकेत की अनदेखी करेगे?

अनुसारी पृष्ठो मे हमने मनुष्य की उन क्रूरताओ का व्योरा दिया है, जो आगे चल कर उसके लिए आत्मघाती सिद्ध होगी। इससे अधिक पीडादायी और क्या हो सकता है कि मनुष्य अव अपने ही साथियो को हजारो की सख्या मे मार कर उनकी खाल के कपडे पहिनने लगा है और उसका सिर काट कर उनकी कलेजी का लहू पीने लगा है? →→

सिर काटे; कलेजियाँ खायीं; लहू पिया

वोर्नियो द्वीप के रहने वालो ने ४,००० लोगो के सिर काटे, उनकी कलेजियाँ खायी, और जम कर उनका लहू पिया। उन्होंने बच्चो और औरतो को भी नही बख्शा। यह घटना सदियो पुरानी नही है, बल्कि फरवरी १९९७ की है। एक विदेशी कैथलिक पादरी ने कहा है कि इस द्वीप के २०० दायका तथा ४,००० मदुरी मारे गये। जिन लोगो ने यह कत्लेआम किये वे नर-मुण्डो को ट्रॉफियो (विजय-चिह्न) के रूप मे ले कर जश्न मना रहे थे।

–'हिन्दुस्तान टाइम्स', नई दिल्ली, पृ १, १३ जून '९७



अब हाथी का गोश्त भी खाने लगे है लोग

गुवाहाटी (असम) की खबर है कि लोग अब हाथी को न सिर्फ दाँतो के लिए मारते है बल्कि उसे मांस के लिए भी मारने लगे है। वाइल्ड लाइफ प्रोटेक्शन सोसायटी तथा एशियन एलीफेंट कंजर्वेशन सेंटर ने एक ग्रन्थ प्रकाशित किया है जिसका शीर्षक है – '[illegible]' जिसमें हाथी के लुप्त होने पर गहन चिन्ता व्यक्त की गयी है। [illegible], शिलांग और गुवाहाटी में गज-आमिष (हाथी का मांस) की मंडियाँ खुल गयी है और अब यह खुले आम बेचा जाने लगा है। यद्यपि सरकारी कार्रवाई के कारण व्यापार भूमिगत हो गया है तथापि कारोबार रुका नहीं है। गत मास १० थैले गज-मांस जब्त किया गया।

–'हिन्दुस्तान टाइम्स', नई दिल्ली, पृ [illegible], [illegible] जून [illegible]

मुद्‌गरो से पीट कर बच्चो की हत्या

बुरुडी के केम्प बुगेडना मे लगभग ३२० लोगो की हत्या कर दी गयी, जिनमे अल्पसख्य प्रजाति तुत्सी की औरते तथा बच्चे थे। इतना ही नही, हुतू विद्रोहियो ने मुद्‌गरो से बच्चो को मौत के मुहँ मे धकेलते हुए गीत गाये और नृत्य किये। खयाल रहे इस गृहयुद्ध मे लगभग १,५०,००० बुरुडी मारे गये। (क्या इस तरह के व्यापक/घृणित नर-सहार पर हमारा ध्यान नही जाएगा? घटना २१ जुलाई १९९६ की है)।

—'फ्रीप्रेस', इन्दौर, पृ. १, २२ जुलाई '९६

लखनऊ मे कौओ का गोश्त लोकप्रिय

उत्तरप्रदेश की राजधानी लखनऊ मे अब कौओ के जीवन पर खतरा मँडराने लगा है। नवाबो के इस शहर मे कौओ का मास अब एक जायकेदार डिश बन गया है। जब से कौओ के मास को 'पुसत्व-वर्धक' कहा गया है, पक्षियो की मडी मे कौए के मास की कीमते बढ गयी है। एक कौए का गोश्त ४० से ६० रुपये हो गया है। प्रचारित किया गया है कि कौए का मास एक सामान्य पक्षी के मास की तुलना मे मर्दानगी को अधिक समृद्ध करता है। पुसत्व का स्तर बनाये रखने के लिए कौए का कत्ल जिस क्रूरता और वहशियत से किया जाता है, वह अत्यन्त नृशस और बर्बर है। पहले उसकी गर्दन चाक की जाती है और फिर उसे एक पतली रस्सी से बाँध कर लटका दिया जाता है ताकि लहू न बहे और वह गोश्त तथा मास-पेशियो मे जज्ब हो जाए। यह क्रिया आधा घटे चलती है। खयाल रहे भारत मे कौआ श्राद्ध-पक्षी है, जिसे श्राद्धपक्ष मे पिण्डदान किया जाता है।

—'हिन्दुस्तान टाइम्स', नई दिल्ली, पृ १२, १९ मई '९७

चीनी डॉक्टर भ्रूण खा जाते है

१२ अप्रैल '९५ की खबर है कि चीन के चिकित्सक गर्भपातित भ्रूण खाने लगे है। हागकाग के एक दैनिक ने लिखा है कि भ्रूणो को 'स्वास्थ्य के लिए आहार' के स्लोगन के साथ बेचा जा रहा है। एक चीनी डॉक्टर शेन्झेन का कहना है कि भ्रूण गर्भनाल (प्लेसेटा) की अपेक्षा अधिक पौष्टिक होते है। इन्हे खाने से त्वचा स्निग्ध, देह पुष्ट और गुर्दे मजबूत बनते है। दक्षिण चीन के एक नगर की एक महिला चिकित्सक, जिसने सैकडो गर्भपात कराये है, ने गत छह महीनो मे स्वय १००-भ्रूण खाये हैं। उसका कहना है कि सबसे अच्छा भ्रूण किसी युवती के सर्वप्रथम बालक का होता है। शेन्झेन क्लिनिक अपने परिसर मे नरभ्रूण बेचता है। कुछ लोगो ने इस बर्बर गोश्तखोरी को 'जगलीपन' की सज्ञा दी है।

—'फ्रीप्रेस', इन्दौर, १२ अप्रैल '९५

अपने प्रेमी के शरीर के टुकड़े किये और सूटकेस मे डाले

१४ जुलाई '९६ पुलिस ने एक ऐसी महिला-चिकित्सक को गिरफ्तार किया, जिसने एक आदमी के जिस्म को टुकडे-टुकडे किया और सूटकेसो मे वन्द कर दिया। किस्सा भले ही इश्क का है, किन्तु यह कोडइकनाल के एक रेल्वे रिटायरिंग रूम मे हुआ, जहाँ महिला- चिकित्सक ने अपने प्रेमी को जहर इंजेक्ट किया, उसके शरीर के टुकडे किये, २० पोलीथिन वैग्ज मे डाला और ३ सूटकेसो मे वन्द किया। (क्या यह सब वर्वरता नही है? क्या व्याख्या करेगे ऐसी घटनाओ की?)।

—'फ्रीप्रेस', इन्दौर, पृ १, १५ जुलाई '९६

लाल चींटियो की चटनी

बस्तर (मध्यप्रदेश) के आदिवासी लाल चीटियो की चटनी वना कर खाते है। 'सुरभि' (दूरदर्शन, ८ जून '९७) मे मूजमेटा ग्राम मे जिस तरह आदिवासी घोसले गिरा कर लाल चीटियाँ हासिल करते, चटनी वनाते, और सामूहिक जश्न मना कर उसे खाते है, उसका व्यौरा दिया है। पीडादायी यह तव हुआ जब श्री सिद्धार्थ काक और सुश्री रेणुका शाहणे ने भी इस चटनी को चखा/खाया। (क्या हमे इस तरह के वर्वर शौको को वढ़ावा देना चाहिये या इसके विकल्प ढूँढ़ने चाहिये?)।

मनुष्य की त्वचा से कपड़े वनाये/पहने

कीव की खवर है कि यूक्रेनिया के एक इक्कीस वर्षीय युवक ने एक 'डिस्को' देख कर लौटती महिला को मारा, उसकी खाल उतारी, तथा उसके कपडे वना कर पहने (९ मई '९५)। कोर्ट मे दिये गये अपने वयान मे लेतीचेव्ह कस्बे मे रहने वाले इस युवक ने कहा है कि उसके ऐसा करने से उसकी नसो को वेहद शान्ति मिलती है। पुलिस द्वारा ली गयी तलाशी मे युवक के घर मे कुत्तो की कई खाले, तथा चूहो की खाल से वना एक कम्वल भी वरामद हुआ। पुलिस ने कहा है कि युवक ने खाल उतारने के अलावा महिला का सिर, उसकी आँखे तथा गुप्तांग इस तरह काटे, जैसे वह एक पेशेवर व्यक्ति हो और यह धन्धा एक लम्वे अर्से से कर रहा हो।

—'हिन्दुस्तान टाइम्स', नई दिल्ली, पृ १२, ७ जुलाई '९५

जहाँ हजारो विल्लियो को जिन्दा उवाला जाता है

चीन मे हर हफ्ते हजारो जिन्दा विल्लियाँ उवाली जाती है, ताकि उनका महँगा ...न अमीर शौकीनो को परोसा जा सके। खरीददार को विल्लियो से ठसाठस भरे एक ...जरे के सामने खडा कर दिया जाता है ताकि वह अपनी मनपसन्द विल्ली चुन सके ...र उपयुक्त ऑर्डर दे सके। इसके वाद सवन्धित विल्ली को भयाक्रान्त अवस्था मे ...थौडी के भीषण प्रहार का शिकार होना पडता है। सिर पर किये गये इस दुस्सह प्रहार ... फलस्वरूप विल्ली अचेत हो जाती है और उसे एक खौलते हुए वर्तन मे डाल दिया ...ता है ताकि उसकी खाल सरलता से निकाली जा सके। ध्यान रहे खाल उतार लेने

के बाद भी बिल्लियाँ जीवित रहती है और उनकी देह पीडा मे ऐठती रहती है। क्या इस हृदय-विदारक क्रूरता का प्रकृति के समरस वातावरण पर कोई असर नही पडेगा?।

—'राँची एक्सप्रेस', राँची, ५ जनवरी '९७

सॉप का टनो मास खाया जा रहा है

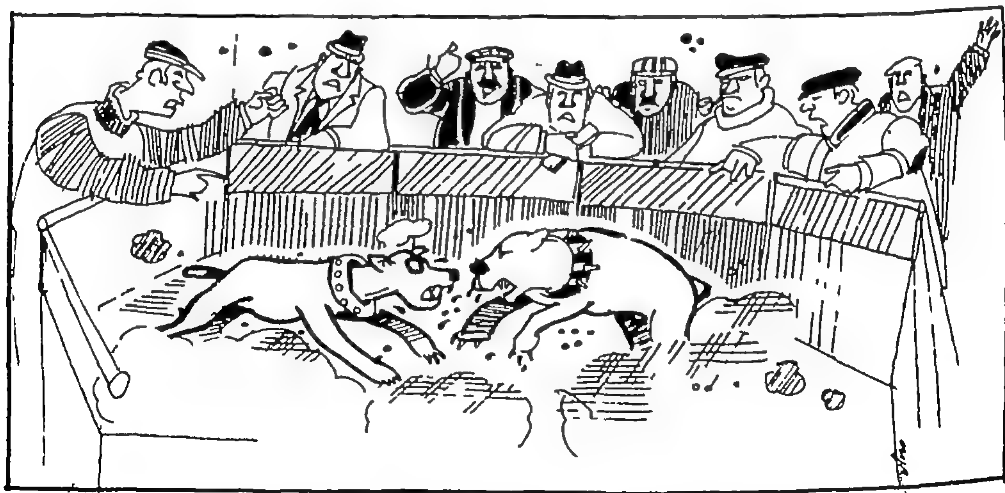
चीन के गुआन्जू नगर के अमीर पेटू चीनी प्रतिदिन १० टन सर्प-आमिष (साँपो का मास) खा जाते है। इस नगर मे एक साँप-मण्डी है, जो दिन-रात खुली रहती है और जहाँ भीड बनी रहती है। 'चाइनीज डेली' का कथन है कि साँप का मास अब होटलो से निकल कर परिवार की भोजन-मेज पर भी आ गया है। चीनी गृहणियाँ अब अपने पतियो और बच्चो की क्षुधा शान्त करने के लिए कृपि-मण्डियो से साँप खरीदने लगी है। साँप का मास १७ से २१ डॉलर प्रति किलोग्राम बिकता है।

—'हिन्दू', मद्रास, २९ मार्च '९३

छिपकलियॉ खाने लगे है लोग

मध्यप्रदेश के छिंदवाडा जिले के जुन्नारदेव-स्थित दताला का एक २३ वर्षीय युवक नसरीन खान गत आठ सालो से छिपकलियाँ खा रहा है। वह छिपकलियाँ इस तरह खा जाता है, जैसे गाजर-मूली खायी जा रही हो। २५ दिसम्बर '८७ को सबसे पहली बार उसने छिपकली खायी। नसरीन का दावा है कि आठ वर्ष मे अब तक वह पाँच सौ छिपकलियाँ खा चुका है।

—'दैनिक भास्कर', इन्दौर, 'रसरग', पृ २, १७ दिसम्बर '९५



कुत्ता-भिड़न्त : पश्चिम का बीभत्स मनोरंजन

विदेशो मे विशेषत पश्चिम के मुल्को मे इन दिनो कुत्ता-भिडन्त बहुत लोकप्रिय खेल है। इसे 'डेडगेम' कहा जाता है अर्थात् दो मे-से एक कुत्ता जब तक मर नही जाता तब तक भिडन्त जारी रहती है। गोरी सभ्यता ने भिडन्तू कुत्तो की कई खूँखार नस्ले तैयार कर ली है। अमेरिका के 'पिट बुल टेरियर्स कुत्ते' सबमे अधिक खूँखार

भिडन्तू श्वान माने जाते है। इग्लैंड मे इनका आयात १९७० मे हो रहा है। ये कुत्ते इतने रक्त-पिपासु होते है कि अपने मालिको को भी नही बख्शते। एक रिपोर्ट के अनुसार कुछ साल पहले अमेरिका मे २८ कुत्ता-मालिको पर टेरियर्स बुरी तरह चढ बैठे थे, जिनमे-से २० को अपने प्राण गँवाने पडे थे।

—दैनिक 'अमृत संदेश', रायपुर, ८ मई '८८



कोरिया डॉग-मीट-वाइन

कोरिया के लोग एक खास किस्म की शराब पीने लगे है, जिसे 'श्वान-आमिष-सुरा' (डॉग-मीट-वाइन) कहा जाता है। इसे तैयार करने की विधि अत्यधिक बर्बर और भयावह है। एक बडे कडाह मे चावल से तैयार किया गया एक विशिष्ट घोल खौलता रहता है, जिसमे जिन्दा कुत्ते झोक दिये जाते है। कोरिया के नीम हकीमो का दावा है कि इस प्रकार जो शराब बनायी जाती है, उसे पीने से मनुष्य की सेहत अच्छी रहती है। उनका मानना है कि कुत्तो को जिन्दा पकाने से शराब मे एक सन्तुलित कसावट आ जाती है।

२५,००० गोमास-भक्षी कुत्ते

कल्याणनेट ब्रूलेटर्स ट्रस्ट (कलकत्ता) की एक विज्ञप्ति मे कहा गया है कि पश्चिम बगाल के एक कुत्ते को प्रतिदिन लगभग एक किलोग्राम गोमास की जरूरत होती है अर्थात् एक कुत्ता साल-भर मे करीब ८०० किलोग्राम गोमास चट कर जाता है। एक मोटे अनुमान के अनुसार पश्चिम बगाल मे गोमास-भक्षी कुत्तो की सख्या २५,००० है, यानी ये मास-खाऊ कुत्ते हर साल १,७७,७२,५०० (एक करोड सतहत्तर लाख बहत्तर हजार पाँच सौ) किलोग्राम गोमास खा जाते है।

प्रोक्टर एड गेम्बल प्रतिवर्ष ५०,००० पशुओ की हत्या

शृगार-प्रसाधनो की प्रमुख उत्पादक कपनी 'प्रोक्टर एड गेम्बल' ने वर्ष १९८०

से १९८७ तक लगभग ३ लाख पशुओ की जाने ली। कपनी के वैज्ञानिको (इन्हे कातिल ही कहे) ने उत्पादो की टॉक्सिसिटी (विपभरता) की जाँच-परख के लिए इन पशुओ को मारा। ध्यान रहे पी एड जी हर वर्प इस तरह के परीक्षणो के लिए ५०,००० जानवरो के प्राण लेता है।

चडीगढ़ का पीजीआई रिसर्च सेटर
हजारो पशुओ को हर वर्ष मार डालता है

चडीगढ-स्थित पीजीआई अनुसन्धान-केन्द्र प्रतिवर्प हजारो मूक/निरीह पशुओ को चिकित्सकीय परीक्षणो के नाम पर मौत के घाट उतारता है, जिनमे मुख्यत होते है २०० बन्दर, १०० कुत्ते, २,००० खरगोश, ५०० गिनीपिग, तथा १०,००० चूहे। इनके अलावा ३० से ८० बकरे, गधे और सूअर मारे जाते है। इन प्राणियो का इन्स्टीट्यूट के माइक्रोवायोलॉजी, वायोफिजिक्स, एक्सपेरीमेटल मेडिसिन, पेरासायटॉलॉजी तथा फार्माकालॉजी विभाग प्रयोगो के दरम्यान वर्वर/क्रूर उपयोग करते है। —'लोकसत्ता-जनसत्ता' दैनिक, वडोदरा, २ अप्रैल '९१

अबोध बच्चो का मास परोसा जाता है कई भारतीय होटलो मे

१० अप्रैल '८८ की एक हृदय-विदारक खबर के अनुसार कानपुर-निवासी युवक कल्लू मवासी ने १४ अबोध वालको का अपहरण किया और उन्हे पाँच सौ रुपये प्रति बालक के हिसाब से घटाघर-स्थित होटल को बेच दिया, जिसने उनका मास ग्राहको को परोसा। कल्लू ने अपने बयान मे पुलिस को बताया कि इन १४ बच्चो मे-से उसने ५ आगरा, २ टूँडला, और शेष ७ वाराणसी/इलाहाबाद से अपहृत किये थे।

—'मिलाप', ११ अप्रैल '८८

बन्दर : 'फिनिट', काजल, क्रीम

सोचने की बात है कि जहाँ 'फिनिट' का छिडकाव हुआ हो वहाँ यदि कोई आदमी खडा रहे, तो उसकी साँसो से जितनी मात्रा मे फिनिट उसके फेफडो मे जाए या सीधे उसे फिनिट का डिब्बा पिला दिया जाए तो उसका क्या असर होगा? सोचिये, फिर उस बन्दर पर क्या गुजरती होगी जिसे फिनिट सीधे पिला दिया जाता है, या जिसके फेफडो मे उसे पूरी तरह प्रवाहित कर दिया जाता है? इसी तरह काजल का आदमी की आँखो पर क्या असर होगा इसके परीक्षण के लिए बन्दर की आँखो मे एक साथ इतना काजल डाल दिया जाता है, जितना एक महिला रोज-ब-रोज लगा कर भी सालोसाल चला सकती है। ऐसी ही स्थिति क्रीम की होती है। चेहरे पर लगायी जाने वाली क्रीम मे डाला जाने वाला रसायन कितनी मात्रा मे प्रयुक्त किया जाए तथा उसका त्वचा पर कितना/कैसा असर होगा, यह जाँचने के लिए बन्दर की बाजू के सारे बाल साफ कर उस पर वारी-वारी से एक-एक रसायन डाल कर देखा जाता है। उसकी त्वचा जल जाती है। वह वेचारा कुछ कह भी तो नही सकता – यह है व्यथा-कथा बन्दरो की,



जो हमारी पौराणिकता में बड़ी महिमा-गरिमा के साथ जुड़े हुए हैं।

—'हिन्दुस्तान', नई दिल्ली, १५ नवम्बर '०२

२०० मुर्दे खाने वाला नर-पिशाच

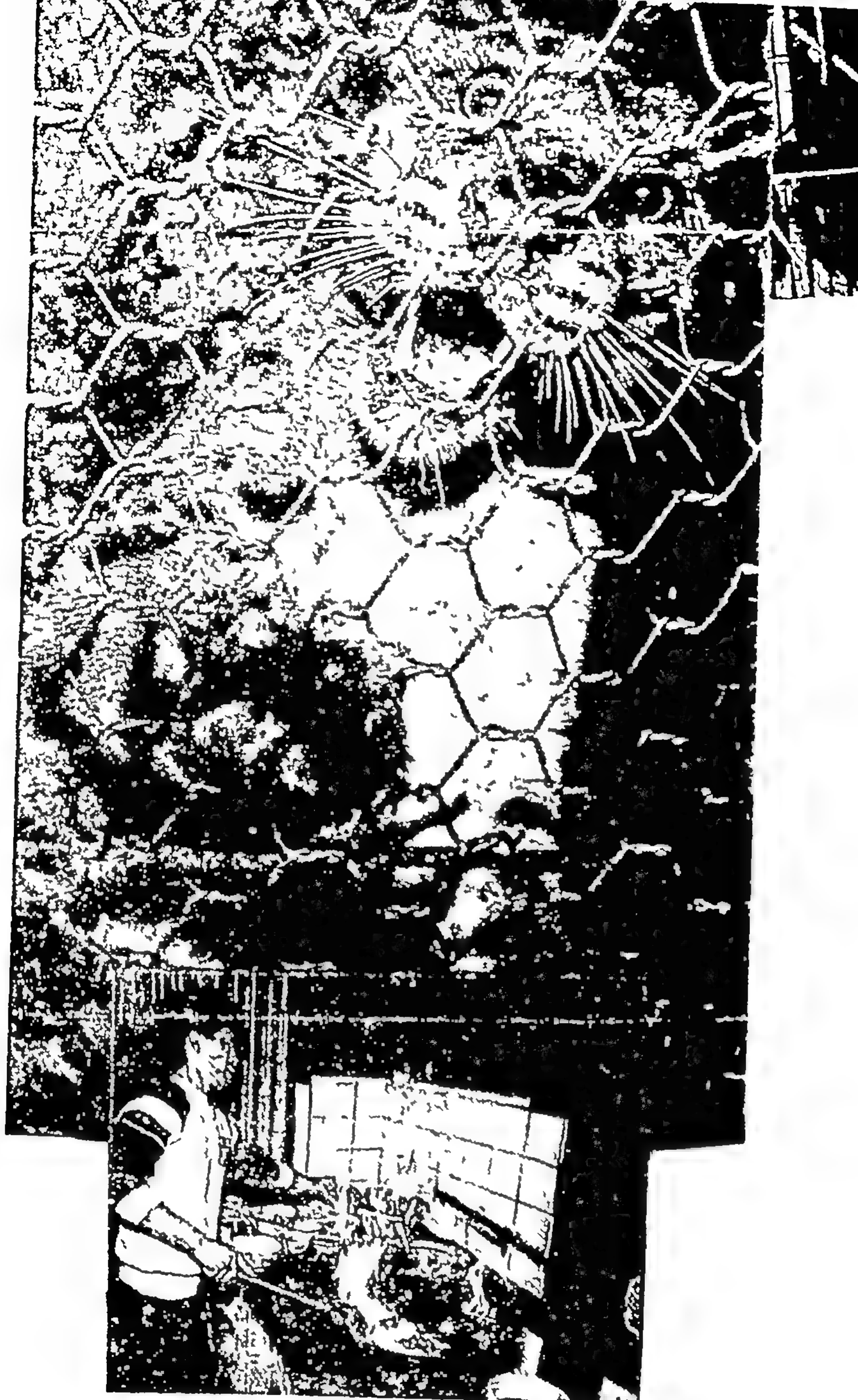
शिवपुरी (मध्यप्रदेश) में दो सौ गड़े मुर्दे उखाड़ कर खाने वाले नर-पिशाच जसवन्त जाटव उर्फ छिद्दू को जब गिरफ्तार किया गया और उससे बातचीत की गयी तो उसने बताया कि उसे मुर्दे का मांस स्वादिष्ट लगता है और उसे खाने में उसे खूब मजा आता है। छिद्दू ने कहा कि उसने अब तक लगभग २०० मुर्दे उखाड़े और खाये हैं। एक मुर्दे का मांस उसके दो दिन की खुराक होता है। जेल में उसे अन्य कैदियों से अलग इसलिए रखा गया, क्योंकि पुलिस को भय था कि कहीं वह रात में सोये हुए कैदियों के हाथ-पैर न चबा डाले।

—'नई दुनिया', इन्दौर, २२ मार्च '८७

केंचुओं का ऑमलेट और तले हुए रेशम-कोये

हांगकांग के एक रेस्तराँ ने अपने ग्राहकों को केंचुओं का ऑमलेट और रेशम कीटों के कोयों को खूब तल कर खिलाने की योजना बनायी है। ये केंचुए तथा कोये यह रेस्तराँ चीन के गुआंगडोंग प्रदेश से नावों द्वारा मँगाता है। रेस्तराँ के संचालकों ने कहा है कि केंचुओं का स्वाद मक्खन और कोयों का पौष्टिक महत्त्व अतुलनीय है।

—[illegible], इन्दौर, १२ [illegible] '८८



चीते का मास : स्वादिष्ट व्यजन

आप शायद नही जानते कि लहू मे लथपथ किसी घायल चीते का छटपटाता शरीर जब हागकाग की किमी होटल मे पहुँचता है तव वहाँ कोई करुणा या प्रीति, दया या रहम की अनुभूति नही फैलती वल्कि वावर्ची उमके अगोपागो को काट कर स्वादिष्ट व्यजन तैयार करता है। इसी तरह ताइवान के कसाईवाडे मे पकड कर लाये गये किसी वाघ का खून जव वोतलो मे भरा जाता है, तव हर वोतल ६५० रुपये मे विकती है। चीतो के लगातार लुप्त होते जाने के पीछे जो रहस्य है, उसे इस ख़बर मे-से भाँपा जा सकता है।

—'चित्रलेखा', २५ जनवरी '८८

क़त्लख़ाने वजह हैं भूकम्पों की : क़त्ल बंद, भूकम्प बंद

—बिस सिद्धान्त

सूजडल में डॉ. सिंह द्वारा तहलका मचाने वाला शोध-लेख प्रस्तुत

कलकत्ते से प्रकाशित २८ मई के अखबारों में एक मांस खबर है : 'अल-कबीर प्लान्स एबेटॉयर इन हल्दूबी' (टेलीग्राफ), 'एक अत्याधुनिक बूचड़खाना स्थापित होगा। प. बंगाल में' (दैनिक विश्वामित्र), 'हावड़ा में अल-कबीर समूह का मांस-प्रसंस्करण संयन्त्र लगेगा' (जनसत्ता)। ७० करोड़ की लागत से बनने वाले इस कत्लखाने पर दो तथ्यों पर नजर रख कर गंभीरतापूर्वक सोचिये – एक, मांस की १ कैलोरी के उत्पादन में अन्न की १२ कैलोरियाँ खर्च होती हैं, अतः मांस-उत्पादन और निर्यात लगातार देश को भुखमरी/बर्बादी की दिशा में धकेल रहे हैं, दो, दिल्ली विश्वविद्यालय में भौतिकी/खगोल-भौतिकी के प्रोफेसर डॉ. मदन मोहन बजाज[1] और उनके साथी डॉ. इब्राहिम एवं डॉ. विजयराज सिंह ने सूजडल (रूस) में प्रस्तुत अपने बहुचर्चित शोध-पत्र में सिद्ध किया है कि दुनिया में जो भूकम्प आ रहे हैं उनकी सबसे बड़ी वजह कत्लखाने हैं, अतः उनका कथन है कि कत्लखानों पर ताला डालिये/युद्ध रोकिये – धरती आपोआप काँपना बन्द कर देगी। सूजडल में प्रेषित इन नौ पत्रों में डॉ. बजाज ने कत्लखाने तथा भूकम्प के अन्तःसम्बन्धों पर प्रस्तुत डॉ. सिंह के रिसर्च पेपर का 'बिस सिद्धान्त' के रूप में जिक्र किया है।

१५ जून १९९५ — सूजडल (रूस)

इस समय जब मैं इन पंक्तियों को लिख रहा हूँ, रात्रि के दस बज रहे हैं – सूरज अभी भी पूरा डूबा नहीं है। आकाश में लालिमा है। सुगन्धित-शीतल पवन है। सामने हरे-भरे वृक्ष हैं। भारत जैसी गर्मी यहाँ नहीं है। आज हमने भूकम्प और कत्लखानों से सम्बद्ध शोध-पत्र प्रस्तुत कर दिया। पोस्टर कल ही लगा दिया था। विजयराज सिंहजी ने पत्र प्रस्तुत करने की इच्छा व्यक्त की। इस शोध-पत्र ने एक नयी विचार-धारा की बुनियाद रख दी है। मेरा कहना यह है कि भारत में आये पिछले तीनों भूकम्पों में आइन्स्टाइन पैन वेव्ज़ (ईपीडब्ल्यू) या नोसीसेप्शन वेव्ज़ का हाथ है। एक रूसी वैज्ञानिक ने कहा 'हिटलर ने इतने अधिक आदमियों को मारा था, तब रूस में भूकम्प क्यों नहीं आया? क्या पशुओं को मारने से ही भूकम्प आता है?' मेरा उत्तर था 'पशु और इन्सान में मैंने कभी अन्तर नहीं माना। नम्बर ऑफ एनीमल्स बुचर्ड इज मच ग्रेटर देन द नम्बर ऑफ ह्यूमन बीइंग्ज किल्ड। एक कत्लखाने से जो 'ई पी डब्ल्यू' निकलती है, उसकी ऊर्जा १०४० मेगावाट से अधिक है।'

१६ जून १९९५

आज १६-६-९५ है। दुपहर का एक बज रहा है। तीन बजे से [illegible] समापन-समारोह है। सूजडल को 'सूज दल' उच्चारित करते हैं। एक अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर कत्लखानों का विरोध करना इतना आसान कार्य नहीं था। [illegible] प्रस्ताव [illegible] आये। प्रस्ताव के रूप में श्रोता [illegible] आरम्भ कर देता है। [illegible] में [illegible] वैज्ञानिक प्रो. [illegible] ने [illegible] अनुभव किया। [illegible]

[1] [illegible] भौतिकी एवं खगोल भौतिकी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली [illegible]

के आधार पर यह कहा कि **यदि आप चाहते है कि भूकम्प न आये तो हमे कत्लखानों का निर्माण करना बन्द कर देना चाहिये और किसी भी निमित्त किसी भी प्राणी का वध नहीं करना चाहिये।** प्रो यामागूची (जापान) हमारे कार्य को देखने विशेष कर मच पर आये। मास्को की भूकम्प वेधशाला ने हमे अपने यहाँ आमन्त्रित किया है। शायद वहाँ भी हमे बोलने का अवसर मिले।

१७ जून १९९५ सूजडल (रूस)

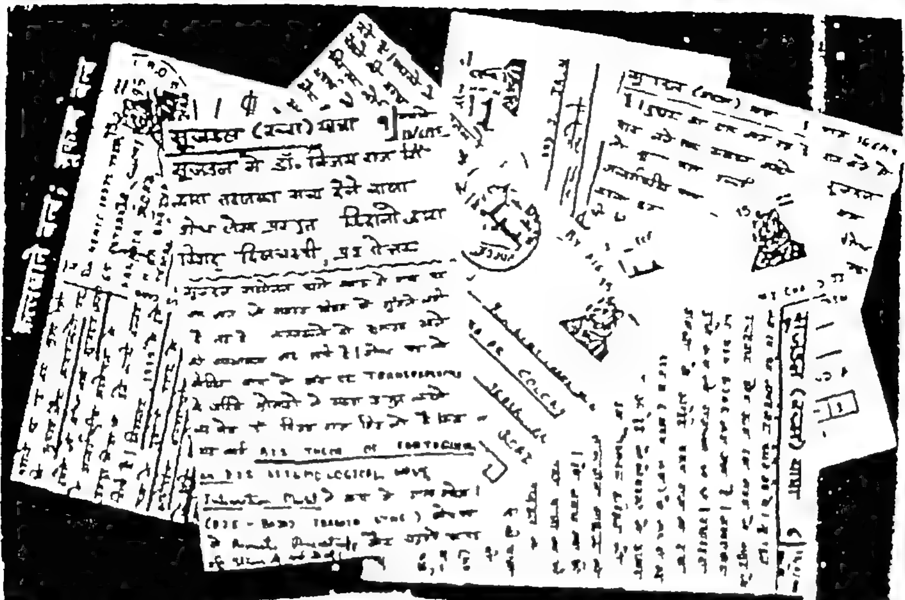
प्रात आठ बज रहे है। बाहर प्यारी धूप आ गयी है। सूजडल रूस के सबसे पुराने नगरो मे-से एक है। इस शहर का जिक्र सबसे पहली बार सन् १०२४ के करीब के दस्तावेजो मे मिलता है। इसकी उम्र के बावजूद यह शहर नौजवान और सुन्दर बना हुआ है। ऐसा लगता है जैसे किसी परीलोक मे विचरण कर रहे हो। बलादीमार के उपजाऊ क्षेत्र पर बसी रूसी लोगो की कई पीढियो ने इस खूबसूरत शहर का निर्माण किया है। कल घूमते-घूमते हम लोगो ने पानी के नल देखे। बिल्कुल शीतल जल नि शुल्क मिल जाता है। पानी साफ और ठडा तो आता ही है, इसे कोई बर्बाद भी नही कर सकता। हैडपम्प-जैसा यन्त्र है, केवल दबाते रहने से पानी निकल आता है। सूजडल कामेन्का नदी के किनारे बसा हुआ शहर है। लगभग तीन-चार सौ वर्ष पूर्व यह नदी आने-जाने के लिए भी प्रयुक्त की जा सकती थी। गोपीनाथजी अग्रवाल (जैन बुक एजेन्सी) की अमर कृति 'वेजीटेरियन ऑर नॉन-वेजीटेरियन चॉइस इज योर्स' की २५० प्रतियाँ ले कर चला था। कई देशो के प्रतिनिधियो के पास यह पुस्तक पहुँचा दी है। कॉन्फ्रेन्स का स्थल पचतारा होटल जैसा है। रिसेप्शन हॉल मे फैली टेबलो पर शाकाहार का सदेश बिखरा पडा है। अपने कमरे मे काफी प्रतियाँ जान-बूझ कर छोड कर जा रहा हूँ।

१७ जून १९९५ सूजडल (रूस)

प्रात आठ बजे है। हेरल्ड फॉन मिल हॉलैण्ड मे पीएच डी के लिए कार्य कर रहे हैं। गजब की अभिव्यक्ति है। ब्रेकफास्ट के वक्त उन्होने मुझे बताया कि मेरी स्पीच 'पैशनेट' (भावनात्मक) थी। उनका कहना था कि मुझे तथ्य-परक (नॉन-पैशनेट) स्पीच देनी चाहिये थी। उन्होने बताया 'मै आपके दर्द को समझता हूँ, लेकिन यूरोप मे इस प्रकार की वार्ता लोग पसन्द नही करते। लोग आर्गुमेंट्स (तर्क) और डाटा (आँकडे/प्रमाण) सुनना पसन्द करते है।' उनके अनुसार हॉलैड मे काफी वेजीटेरियन्स है। वे स्वय मासाहारी है। हमारी पुस्तक प्राप्त होने के बाद कह रहे थे, 'कल का मीट ठीक नही था। पेट मे गडबड-सडबड हो गया।' मैने उनके विचारो को पल्लवित होने का अवसर दिया। कल जापान के प्रो यामागूची से काफी चर्चा हुई थी। वे मेरी किसी भी बात मे सहमत नही थे। विनम्रता तो थी, लेकिन वैचारिक मतभेद बहुत था। वे शिन्तो धर्म मे सबद्ध है। बौद्धधर्म जापान मे अहिंसा नहीं ला पाया। बलादीमीर जा रहे है हम सब। —मदन मोहन बजाज

१८ जून १९९५

आज १८ ०६ है। प्रात के साढे छह बज रहे है। कल रात्रि मे हम लोग मास्को वापिस आ गये है। प्रस्तुत पक्तियाँ रूस की राजधानी मास्को मे लिख रहा हूँ। हम लोग लियोनॉयड याकोवेन्को के घर रुके हुए है। लियोनॉयड याकोवेन्को की धर्मपत्नी पचास वर्षीय है। नाम है लुदमीला याकोवेन्को। सक्षेप मे 'ल्यूदा' कहते है। 'लुदमीला' का अर्थ है वह महिला,



जिसे सब लोग चाहते हैं, जिसे सब लोगों का आदर और स्नेह मिलता है। लुदमीला को हम 'सर्वप्रिया' कह सकते हैं। मेरी एक रूसी अध्यापिका लुदमीला कुस्मानवा थीं। उनकी पुत्री का नाम मार्था है। इस बहन लुदा ने घर पर ही एक केक-जैसी कोई मिठाई बनायी थी। उन्होंने बताया कि इस मिठाई में उन्होंने क्या-क्या डाला है? बिना अण्डे से बनी यह गठरीनुमा मिठाई मैंने बड़े चाव से खायी। [illegible] नाम का यही चीज [illegible] के सम्बे [illegible] में मिलता है। [illegible] ७००० रूबल (लगभग ५० रु.) [illegible]। लुदा की के हाथ में जो भी चीज आती है, उसमें बरकत बहुत पड़ती है। हमने चाय पीने के उनसे गप्पें किये। [illegible] डायनिंग टेबल पर [illegible] सजाये कि चाय पीने भी [illegible] के लिए बहुत ज्यादा प्रतीत हुआ। दिल्ली में तो मैं अकेला ही [illegible] जाता हूँ। [illegible] परिवार के हम लोग बेहद शुक्रगुजार हैं, जो हमें [illegible] में मदद कर रहे हैं। आज दिल्ली से एक जैन साहब मिलने आ रहे हैं। श्री [illegible] से मिलने का भी कार्यक्रम है। [illegible]।

<u>१८ जून १९९५</u> मास्को

आज हम लोग [illegible] देखने गये थे। [illegible] राजधानी भी [illegible]। [illegible]

१९०५	८ ६	१९,०००	जम्मू-कश्मीर, भारत
१९०६	८ ३	७००	सेन फ्रान्सिस्को
१९०६	८ ६	१,५००	वालपरेसो, चिली
१९०८	७ ५	५८,०००	कैलेब्रिया, मेसीना, इटली
१९१५	७ ५	३२,६१०	अब्रुजी, इटली
१९२०	८ ५	२,००,०००	कासू प्रान्त, चीन
१९२३	८ ३	१,४०,०००	टोक्यो, योकोहामा
१९२७	८ ०	४०,०००	नान शान, चीन
१९३२	७ ६	७०,०००	कासू प्रान्त, चीन
१९३५	७ ५	२५,०००	भारत
१९३९	८ ०	३२,०००	एरजिनकान, तुर्की
१९३९	८ ३	२८,०००	चिल्लान, चिली
१९४८	७ ३	१९,८००	अश्खाबाद, सोवियत सघ
१९६०	५ ९	१२,०००	अगादिर, मोर
१९६०	८ ५	२,२३१	वाल्दीविया, चिली
१९६३	६ ०	१,०७०	स्कोपे, युगोस्लाविया
१९६४	८ ३	१३१	प्रिंस विलियम साउड, अलास्का
१९७०	७ ८	६६,७९४	पूर्वी पेरर
१९७२	६ २	५,०००	मानागुआ, निकारागुआ
१९७६	७ ५	२३,०००	ग्वाटेमाला
१९७६	६ ५	९२९	उत्तर-पूर्वी इटली
१९७६	७ ८	२,४०,०००	तगशान, चीन
१९७७	७ २	१,५००	बुकारेस्ट
१९७९	७ ९	६००	कोलम्बिया, इक्वाडोर
१९८०	७ ७	४,०००	अल-अस्नाम, अल्जीरिया
१९८०	७ २	४,८००	दक्षिण इटली
१९८३	७ १	१,४००	पूर्वी तुर्की
१९८५	८ १	२०,०००	मैक्सिको सिटी
१९८६	५ ४	१,०००	सैन साल्वाडोर, अल साल्वाडोर

– *एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका*

(१) २०वी शताब्दी के पूर्व काल मे तीव्रता मापने का कोई यन्त्र या पैमाना नही था, अत इनके स्थान या तो रिक्त है या ऐतिहासिक दस्तावेजो के आधार पर इनकी अनुमानित तीव्रता अकित की गयी है।

(२) इसके पश्चात् १९९१ मे भारत मे उत्तरकाशी, १९९३ मे लातूर, तथा १९९५ मे कोवे (जापान) मे भूकम्प आये, जिनसे भारी जन-हानि हुई थी।



भूकम्प की वजह